नवजागरण के आलोक में शरतचन्द्र एवं प्रेमचन्द के साहित्य का अनुशीलन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी0 फिल्0 उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

निर्देशिका
डॉ० शैल पाण्डेय
, हिन्दी विभाग

प्रस्तुतकर्ता
राम करन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद
1994

प्रस्तावना

यह मानव सृष्टि सृष्टा की अदभुत संरचना है और यह मानव सम्भवत: उस परम सत्ता की सर्वोत्तम कृति भी है । प्रकारान्तर से यह भी कह सकते हैं कि परम सत्ता अपने अधिकांश शुभ गुणों का प्राकट्य मानव के माध्यम से करती है। इस प्रकार सृष्टा का प्रकटीकरण ही यह सम्पूर्ण विश्व जगत है । प्रकृति के इन तमाम प्रकट रूपों में हमें केवल वे ही रूप या विचार अत्यधिक प्रभावित करते हैं जिनका सम्बन्ध हमसे या हमारे "स्व" तत्व से होता है । बतौर उदाहरण हम यह कह सकते हैं कि प्रात: समाचार पत्र पाते ही पाठक उसमें अपने स्व की खोज करने लगते हैं और क्रमश: वरीयता क्रम में उनका अनुशीलन भी करते चलते हैं । जिसकी रुचि खेल जगत में है वह खेल का पृष्ठ पहले उलटने पुलटने लगता है । राजनीति में रुचि लेने वाले अपने ढंग की राजनीति की खबर खोजने लगते हैं तथा अपराधिक मानसिकता के लोग अपराध जगत का पृष्ठ खोलते हैं कहने का अभिप्राय कि, हर व्यक्ति अपनी रुचि, स्थिति और हालातों के विषय में ही ज्यादा कुछ जानने तथा सुनने की इच्छा रखता है । अर्थात व्यक्ति स्व ॥ स्थिति, रुचि, हालात के बारे में रहना ज्यादा पसन्द करता है ।

मेरे विषय चयन में भी कुछ इसी प्रकार के कारक हैं । प्रारम्भिक कथाओं में अध्ययन करते हुए संयोग से एक कहानी पढ़ने का अवसर मिला । जिसके पात्रों के नाम हमारे घर - गाँव जैसे सीधे - सादे तथा जिसकी कथावस्तु गाँव की निम्न-पृष्ठभूमि

की कहानी का नाम था - "मन्त्र" । मंत्र कहानी के भगत तथा बुढ़िया में मुझे अपने गाँव का "स्व" प्रकट होने लगा । उसके वातावरण व चित्रण में घर गाँव जीवन्त हो उठा । उस कहानी को कई बार पढ़ा । यही मन्त्र कहानी हमारे विषय चयन की मूल मन्त्र बनी । और इस कहानी के लेखक प्रेमचन्द की अन्य रचनाओं के प्रति क्रमशः रुचि बढ़ती गयी । अन्तत: मैं उनका उपासक बन गया ।

मानव मन की भी अजीव स्थिति है वह कभी दो भिन्न वस्तुओं की तुलना करने लगता है तो कभी दो भिन्न दिखने वाली वस्तुओं में साम्य खोजने लगता है तथा कभी दो समान वस्तुओं में अन्तर खोजने लगता है । तथा कभी दो समान वस्तुओं में अन्तर खोजने लगता है । मन की इसी पृष्ठभूमि से तुलना मक अध्ययन करने की रुचि पैदा हुई । इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्ययन करते मुझे विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित "आवारा मसीहा " नामक पुस्तक हाथ लग गयी । उसमें जिस चरित्र नायक की जीवनी पढ़ी उसके सम्पूर्ण साहित्य के विषय में जानने की अभिलाषा बलवती हुई । इस प्रकार यह " आवारा" मेरे मनो मस्तिष्क को अपने मौलिक विचारों के द्वारा लुभाने लगा । चूँकि प्रेमचन्द लरिकाई से ही मुझे प्रभावित करते रहे अत: उनके जीवन चरित तथा तत्कालीन साहित्य लेखन की परिस्थितियाँ जानने की रुचि स्वाभाविक ही थी । वयस्क होने पर शरतचन्द्र भी कुछ कम नहीं प्रभावित किये । इन सबका मिला- जुला नतीजा यह हुआ कि

मैंने अपने शोध का विषय इन्हीं दो साहित्य महारथियों को चुना ।

इन रचनाकारों का व्यक्तित्व और जीवन दर्शन भी विषय के प्रति रुचि पैदा करता रहा । यह अदभुत संयोग ही है कि दोनों का जन्म प्रेमचन्द ﴾1880 तथा शरत चन्द्र ﴾1876 ई0 ﴿ में हुआ । दोनों का बाल्यकाल भी लगभग एक सी विपन्नता में व्यतीत हुआ । दोनों में बचपन में एक प्रकार का अल्हड़ पन तथा बेफिक्री मौजूद थी । बावजूद इन सभी बाल सुलभ प्रवृत्तियों के वे युग के प्रति इतने संवेदनशील कैसे हुए । गुल्ली डण्डा का खिलाडी कलम का सिपाही कैसे बना या वे कौन सी परिस्थितियाँ थीं जो इस अलमस्त खिलाड़ी को एक प्रबुद्ध साहित्यकार बनाया । तथा एक आवारा दीन- दुखियों, गरीब व असहायों का मसीहा कैसे बना ? या वह कैसा वातावरण था जिसने बेपरवाह फाकेमस्त भावुक हृदय को लेखनी पकड़ने के लिए प्रेरित किया । इस प्रकार इन रचनाकारों की जीवनियाँ पढ़ने के बाद तत्कालीन वातावरण की जानकारी के प्रति सजगता पैदा हुई । और इन साहित्यकारों के व्यक्तित्व निर्माण करने वाले वातावरण " नवजागरण " को आधार बनाकर इन लेखकों की साहित्यिक सोच की जानकारी का उपक्रम प्रारम्भ किया ।

इस शोध कार्य को पूर्ण करने में जिन मनीषियों ने योगदान दिया उनका स्मरण करना अप्रासंगिक न होगा । सहजता एवं सरलता की प्रतिमूर्ति,

मातृ तुल्य कु0 कल्याणी दास गुप्ता की मैं हार्दिक चरण वन्दना करता हूँ जिन्होंने मुझे पुत्रवत स्नेह प्रदान कर बंग साहित्य का गहरा ज्ञान कराया तथा विषय चयन में भी मदद की ।

निश्चल व्यक्तित्व, मानवतावादी, दया, ममता एवं करुणा की देवी, अध्ययन शीला, विदुषी, निर्देशिका, " डॉ0 शैल कुमारी पाण्डेय के प्रति श्रद्धावनत हूँ जिनके चरणों का संरक्षण प्राप्त कर शोध कार्य पूर्ण हो सका ।

अनुशासनप्रिय, स्पष्टवादी, कर्तव्यनिष्ठ, नारिकेल फलं सम्मित, व्यक्तित्व प्रो0 राजेन्द्र वर्मा, अध्यक्ष हिन्दी विभाग के प्रति हृदय से आभारी हूँ जिनका अनुशासन सदैव कर्तव्य के प्रति प्रेरित करता रहा ।

और अन्त में प्रात: स्मरणीय पूज्य माता-पिता के शुचि, सौम्य कमलवत चरणों का चंचरीक बनना चाहता हूँ जिनके आशीर्वाद से शोध कार्य निर्बाध रूप से सम्पन्न हो सका ।

शोध कार्य को पूर्ण करने में टाइपिंग में दक्ष ,शुभम फोटो कापियर्स , मनमोहन पार्क, कटरा, इलाहाबाद के श्री राकेश कुमार शुक्ल जी ने कडकती धूप में भी बड़ी लगन दिखायी । उनकी यह लगन एवं उत्साह स्मरणीय रहेगा ।

अ - नु - क्र - म - णि - का

xxxxxx

" नवजागरण के आलोक में शरतचन्द्र एवं प्रेमचन्द के साहित्य का अनुशीलन "

पृष्ठभूमि :

प्रथम अध्याय : " भारतीय नवजागरण का स्वरूप "

(क) विभिन्न सुधारवादी संगठन एवं संस्थाएं

(1) ब्रह्म समाज (2) तत्व बोधिनी सभा

(3) प्रार्थना सभा (4) आर्य समाज

(5) रामकृष्ण आन्दोलन (6) थियोसोफिकल सभा

(7) बहावी आन्दोलन (8) अलीगढ़ आन्दोलन

(9) देव बन्द शाखा

(ख) -(1) सामाजिक सुधार (2) राजनैतिक सुधार

(3) साहित्यिक चेतना (4) औद्योगिक विकास

द्वितीय अध्याय : हिन्दी प्रदेश में नवजागरण

तृतीय अध्याय :

" नवजागरण एवं शरतचन्द्र

(क) सामाजिक दृष्टिकोण

(2) राजनैतिक दृष्टिकोण

चतुर्थ अध्याय :

" नवजागरण एवं प्रेमचन्द"

(क) सामाजिक दृष्टिकोण

(ख) राजनैतिक दृष्टिकोण

पंचम अध्याय .

" शरतचन्द्र एवं प्रेमचन्द के उपन्यासों में साम्य एवं दृष्टि भेद ।

अ• साम्य

(क) समाज सुधार परक दृष्टिकोणों में साम्य

(ख) राजनीति परक दृष्टिकोणों में साम्य ।

ब वैषम्य

(क) सामाजिक दृष्टिकोण सम्बन्धी वैषम्य

(ख) साहित्य परक दृष्टिकोण सम्बन्धी वैषम्य

(ग) राजनैतिक दृष्टिकोण सम्बन्धी वैषम्य

उपसंहार :

नवजागरण की पृष्ठभूमि

अंग्रेज भारत में व्यापार के उद्देश्य से आये किन्तु थोड़े ही समय में यहाँ के शासक बन गये। तत्पश्चात् यहाँ के धार्मिक, शैक्षिक, आर्थिक, और सांस्कृतिक व्यवस्था में भी हस्तक्षेप करना प्रारम्भ किये। ईसाई धर्म को सर्वश्रेष्ठ धर्म घोषित किया। तथा हिन्दू और इस्लाम धर्म की खिल्ली उड़ानी शुरू की। शिक्षण संस्थाएं, अस्पताल, जेल तथा ईसाई मिशनरियाँ उनके धर्म प्रसार का साधन बनी। समाचार पत्र, सार्वजनिक सभाओं और इश्तहारों के द्वारा ईसाई धर्म फैलाने का प्रयास किया गया।

अंग्रेजों ने भारत में जो शिक्षा व्यवस्था लागू की उसका उद्देश्य ऐसी मानसिकता पैदा करना था। जो रक्त और रंग से भारतीय हो तथा अपनी प्रवृत्ति, विचार, नैतिक, मापदण्ड और प्रज्ञा से अंग्रेज हो। इसके साथ ही हिन्दू तथा मुसलमान में मतभेद पैदा करने के लिए साम्प्रदायिक शिक्षा प्रारम्भ की। शिक्षा और सांस्कृति के क्षेत्र में अंग्रेज शासकों का प्रयत्न यह था कि यहाँ के विभिन्न धर्मों को मानने वालों के बीच विद्वेष फैलाया जाय और ऐसी संस्कृति का विकास न होने दिया जाय, जिसमें विभिन्न सम्प्रदायों के लोग भागीदार बनें। इस प्रकार अंग्रेजों ने भारत में साम्प्रदायिकता का बीज बोकर अत्याचार करना प्रारम्भ किया।

पश्चिमी संस्कृति ने भारत की सामाजिक परम्पराओं, धर्म, कला, साहित्य, विचारधारा, रहन - सहन, वस्त्र-भोजन आदि सभी को गम्भीर रूप से प्रभावित किया जो भारतीय संस्कृति सदियों से विभिन्न संस्कृतियों को अपने में आत्मसात करती हुई चली आ रही थी वह इस संस्कृति के साथ अपना समन्वय नहीं बना सकी । इसका कारण यह था कि भारतीय संस्कृति आध्यात्मिकवादी थी जबकि अंग्रेजी संस्कृति भौतिकता वादी थी। भारतीय संस्कृति के सम्मुख खड़ी हो गयी ।

आर्थिक क्षेत्र में अंग्रेजों ने भारतीयों का शोषण करना प्रारम्भ किया। सूती वस्त्र उद्योग, रेशमी वस्त्र उद्योग, तथा ऊनी वस्त्र उद्योग भारत के प्राचीन उद्योग थे , अंग्रेजों ने इंग्लैंड की मंडियों में भारतीय वस्त्रों पर ज्यादा कर लगाया तथा बाद में उसे पूर्णरूपेण ठप कर दिया । इसी समय औद्योगिक क्रान्ति शुरू हुई उसके कारण अंग्रेजों ने मशीनों से वस्त्र बनाना प्रारम्भ किया । भारतीय हथ करघा उद्योग विदेशी कम्पनियों के इन कपड़ों का मुकाबला नहीं कर पाये परिणामस्वरूप इनकी माँग कम होती गयी तथा मशीनों द्वारा तैयार कपड़े सस्ते दर पर हर जगह मिलने लगे । भारत से अंग्रेज कच्चा माल अपने देश ले जाते तथा वहाँ से बना हुआ माल भारत भेजना शुरू किये इस प्रकार भारत में पूंजी विदेशों को जाने लगी तथा भारतीय मजदूर एवं कारीगर भारी संख्या में बेरोजगार होने लगे । उनकी हालत दिन- प्रतिदिन गिरती चली गयी ।

किसानों का भी शोषण हुआ । जमीन पर से किसानों का अधिकार समाप्त हो गया, जमीन का मालिक ऊंची बोली लगाने वाला बना । प्रारम्भ में पाँच साल के लिए नीलामी की व्यवस्था की गयी । फिर साल भर के लिए इसके साथ ही मालवाड़ी और रैवतबाड़ी प्रथा भी लागू की गयी ।

इस प्रकार जमीन पर किसानों का अधिकार नहीं रह गया । ठेकेदारों के अधीन काम करते थे । ये ठेकेदार विभिन्न रूपों में उनका शोषण करते थे । लगान न देने पर बेदखल कर देना, कोड़े मारना आम बात थी । जिसके कारण किसानों का आत्मविश्वास नष्ट होता गया ।

इस प्रकार देश में चारों तरफ अभावग्रस्तता का वातावरण बन गया। भारतीय चिन्तकों ने इनका कारण खोजना प्रारम्भ किया । इस प्रकार परस्पर विरोधी भाव समूहों के निरन्तर संघर्ष से एक नये दृष्टिकोण का अभ्युदय हुआ ।

विचारों का यह आन्दोलन नवजागरण के नाम से जाना गया । मध्ययुग में जात- पाँत, छुआछूत, पर्दा प्रथा, बाल वध, बाल विवाह, बहु विवाह विधवाओं के लिए ब्रह्मचर्य, सती प्रथा, नारी शिक्षा का निषेध जैसे रूढ़ विचारों और अन्य विश्वासों में जो भारतीय आत्मा दब गयी थी वह इस नये दृष्टिकोण के कारण उद्‌बुद्ध हो उठी । इसी को भारतीय नवजागरण के नाम से जाना जाता

प्रथम अध्याय

भारतीय नवजागरण का स्वरूप

(क) प्रमुख सुधारवादी संगठन एवं आन्दोलन :

सदियों की राजनैतिक दासता के परिणामस्वरूप भारतीय व्योम का सूर्य धीरे - धीरे शीतल होने लगा । भौतिकतावादी ब्रिटिश संस्कृति की आंधी ने आध्यात्मिकता वादी भारतीय संस्कृति का मार्ग अवरुद्ध कर दिया । ब्रिटिश संस्कृति ने यहाँ की धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक स्थितियों को प्रभावित किया । अपनी संस्कृति के प्रति आस्थावान मनीषियों ने प्रत्येक प्रकार की बेचारगी के शमन हेतु प्रयास किये । भारतीय नवजागरण का उत्स इसी पृष्ठभूमि में फूटता है । इन नवजागरण के संवाहकों ने तत्कालीन समाज में परिव्याप्त विविध प्रकार की विसंगतियों के शमन हेतु नये मानदण्डों के अन्वेषण की चेष्टा की । धार्मिक दिवालियापन, रूढ़ियों में जकड़ा हुआ समाज, मनुष्य की मनुष्य के प्रति विद्वेष भावना, नारी के व्यक्तित्व का हल्कापन उद्वेलित करने वाले ऐसे बिन्दु हैं जिन्होंने तत्कालीन नयी जागृति को एक स्वरूप प्रदान किया । जीवन एवं समाज के प्रति एक नयी सोच पैदा हुई । जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भावुकता के स्थान पर बौद्धिकता का महत्व बढ़ा । सर्वतो रूप से सम्पन्न होने के बावजूद भी देश की दयनीय स्थिति के विषय मे सोचने वा

सिलसिला जारी हुआ । इसके साथ ही उन तमाम कारणों का अन्वेषण किया जाने लगा जिसके परिणाम स्वरूप भारतीय समाज ह्रासोन्मुख हो रहा था । इन पतनशील तत्वों को भारतीय संस्कृति से हटाने तथा अपनी संस्कृति के उन तत्वों का अन्वेषण किया जाने लगा जिसके द्वारा भारतीय समाज व संस्कृति उत्तरोत्तर विकसित हो सके ।

बंगाल में पश्चिम का प्रभाव अधिक था, क्योंकि वहीं के लोग अंग्रेजो के सम्पर्क में अधिक आये थे । इसलिए नवजागरण की प्रथम ज्योति बंगाल में ही प्रज्जवलित हुई । बंगाली नवयुवक पश्चिमी ज्ञान प्राप्त करके भारत का नवनिर्माण करने का प्रयत्न करने लगे । प्रारम्भ में नवजागरण धार्मिक क्षेत्र मे उदय हुआ । उन लोगों का विचार था कि पहले धार्मिक क्रान्ति हो फिर सामाजिक और अन्त में राजनैतिक तथा आर्थिक । सर्वप्रथम वे आत्मा की उन्नति चाहते थे, क्योंकि आत्मिक उन्नति के बिना सामाजिक और राजनैतिक प्रगति सम्भव ही नहीं थी । निम्नलिखित सुधारवादी संगठनों ने नवजागरण की ज्योति जलायी -

(1) ब्रह्म समाज :

राजा राम मोहन राय, ने 20 अगस्त सन् 1828 को कलकत्ता में ब्रह्म समाज की स्थापना की । धार्मिक और सामाजिक दोनों क्षेत्रों में ब्रह्म समाज ने सुधारवादी कार्य किया । हिन्दू समाज की तमाम रूढ़ियों एवं कुप्रथाओं को तोड़ने में सफल हुये । धार्मिक क्षेत्र में उन्होंने पादरी धर्म प्रचारकों

के विरुद्ध हिन्दू धर्म की रक्षा की और दूसरी ओर हिन्दू धर्म में आये झूठ और अंध विश्वासों को दूर करने का भी प्रयत्न किया । मूर्ति पूजा का खण्डन कर एकेश्वरवाद की स्थापना की । मानवतावाद की प्रतिष्ठा के लिए उपनिषदों का गम्भीरता से अध्ययन किया । सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन में उन्होंने भगीरथ प्रयास किये । सती- प्रथा, बहु पत्नी प्रथा, वेश्यागमन तथा जातिवाद का उन्होंने विरोध किया एवं विधवा पुनर्विवाह का समर्थन किया । देश में आधुनिक प्रवृत्तियों के प्रचार - प्रसार हेतु उन्होंने अंग्रेजी शिक्षा का समर्थन किया।

§2§ तत्व बोधिनी सभा :

महर्षि देवेन्द्र नाथ टैगोर ने 1899 में " तत्वबोधिनी सभा" की स्थापना की । अपने सिद्धान्त के प्रचार हेतु इन्होंने "तत्वबोधिनी पत्रिका " आरम्भ की । धार्मिक शिक्षा के लिए एक स्कूल खोला । उन्होंने समाज सुधार पर विशेष ध्यान दिया । बहु विवाह, बाल विवाह, जाति प्रथा आदि का विशेष विरोध किया । कालांतर में जब ब्रह्म समाज का विभाजन हुआ तो इन्होंने आदि ब्रह्म समाज का नेतृत्व किया ।

§3§ प्रार्थना सभा :

बंगाल के सुधारवादी आन्दोलन का प्रभाव देश के अनेक भागों में भी पड़ने लगा । चूँकि महाराष्ट्र भी पश्चिमी संस्कृति से ज्यादा प्रभावित था अत: वहाँ भी नई चेतना एवं नये दृष्टिकोण का विकास स्वाभाविक ही था।

बंगाल के बाद महाराष्ट्र में सुधारवादी आन्दोलन तेज हुआ । " महाराष्ट्र में सुधार आन्दोलन सन् 1940 के आस - पास आरम्भ हुआ ।"[1] 1832 में वहाँ दर्पण (साप्ताहिक) एवं दिग्दर्शन (मासिक) पत्र में विधवा विवाह, दलितोद्धार इत्यादि का प्रचार किया गया । किन्तु महाराष्ट्र में व्यापक रूप से सुधारवादी आन्दोलन का प्रचार तब हुआ जब केशवचन्द्र सेन 1864 में बम्बई गये, उनकी प्रेरणा से 1867 में बम्बई में प्रार्थना समाज की स्थापना हुई । इसके प्रमुख नेता थे - न्यायमूर्ति महादेव, गोविन्द रानाडे और एन0जी0चन्द्रावरकर । समाज सुधार के क्षेत्र में प्रार्थना सभा ने चार प्रमुख कार्य किये - ।

1. जाति-पाँति का विरोध किया ।
2. पुरूषों तथा स्त्रियों को विवाह की आयु को बढ़ाने पर बल दिया ।
3. विधवा - पुर्नविवाह को बल दिया ।
4. स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन दिया ।

इसके साथ ही इस सभा ने दलित जाति- मण्डल, समाज सेवा संघ एवं दक्कन शिक्षा समिति की स्थापना की । ब्रह्म "समाज के विचारों" के प्रचार के लिए मद्रास में भी कई केन्द्र खोले गये । पंजाब में इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए

---

1. भारतीय नवजागरण का इतिहास, बाबूराव जोशी, पृष्ठ - 20

दयाल सिंह प्रन्यास के तत्वाधान में दयाल सिंह कालेज खोला गया ।

(4) आर्य समाज :

ब्रह्म समाज एवं प्रार्थना समाज ने जो सुधारवादी आन्दोलन चलाये उस पर पश्चिम का प्रभाव था । उन्हें सरकारी संरक्षण भी प्राप्त था । उसने ईसाई धर्म और संस्कृति से प्रभावित होकर हिन्दू, धर्म और समाज की कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया था ।

यद्यपि कि उन्होंने वेद तथा उपनिषदों से प्रेरणा प्राप्त की थी परन्तु उसने उनकी श्रेष्ठता को स्थापित करने का साहस नहीं किया । उन्होंने ईसाई और इस्लाम धर्म को भी समान पद प्रदान किया था । हिन्दू धर्म और उसकी आत्मा उनसे सन्तुष्ट न हो सकी । पूर्णरूप से भारतीय सुधार आन्दोलन का प्रवर्तन आर्य समाज द्वारा हुआ । आर्य समाज आन्दोलन का जन्म पाश्चात्य प्रभावों की प्रतिक्रिया स्वरूप हुआ । इसकी स्थापना स्वामी दयानन्द ने 1875 ई0 में बम्बई में की । स्वामी जी ने भारतीय जनता की खोई हुई आत्मा का संधान किया और राष्ट्रीय जीवन में शक्ति का संचार किया । वे वैदिक धर्म में ही पूर्ण सत्य को मानते थे । हिन्दू, धर्म को वे विश्व - धर्म मानते थे । हिन्दू धर्म के दरवाजे समूची मानव - जाति के लिए खुले थे । धार्मिक सुधार आन्दोलन के रूप में

उन्होंने मूर्ति पूजा, बहुदेववाद, अवतारवाद, पशु बलि, श्राद्ध, जंत्र, मंत्र तथा तंत्र एवं कर्मकाण्ड की कटु आलोचना की थी । हिन्दू समाज सुधार के क्षेत्र में भी उन्होंने अप्रतिम योगदान दिया , वे जाति प्रथा के विरुद्ध थे । वेदों के आधार पर जाति प्रथा की आलोचना की । अछूत व्यवस्था का विरोध किया । वेदों के अध्ययन का मार्ग सबके लिए खोल दिया । स्त्री शिक्षा का समर्थन किया । बहु - विवाह तथा बाल विवाह का विरोध किया । अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन किया ।

सामाजिक क्षेत्र में उनका सबसे प्रमुख कार्य शुद्धि प्रथा थी । इस प्रथा के अनुसार जो व्यक्ति इस्लाम या ईसाई धर्म अपना चुका था । वह हिन्दू धर्म में सम्मिलित कर लिया जाता था । यह निश्चित रूप से एक उदार कार्य था । उन्होंने पुनः "वेदों की ओर चलो " का नारा दिया । स्वामी दयानन्द ने फ्रांस की क्रान्ति से उत्पन्न स्वतन्त्रता, समानता और विश्व बन्धुत्व के विचारों का आधार वेदों को ही बताया । आर्य समाज ने सर्वाधिक प्रभावी कार्य शिक्षा तथा सामाजिक सुधार के रूप में किया । राजनीति के क्षेत्र में भी उनका दृष्टिकोण स्पष्ट था । वे कहते थे - बुरे से बुरे देशी राज्य, अच्छे से अच्छे विदेशी राज्य से अच्छे हैं । इस प्रकार स्वराज्य के प्रति उनकी गहरी आस्था थी । आर्य समाज

ने धर्म तथा समाज सुधार के साथ ही राजनीति क्षेत्र में भी अपना प्रभाव स्थापित किया ।

5. राम कृष्ण आन्दोलन :

नवजागरण के प्रचार - प्रसार में राम कृष्ण मिशन का योगदान अत्यधिक है । हिन्दू धर्म को एक नवीन सामाजिक उद्देश्य प्रदान करने का श्रेय "राम कृष्ण मिशन" को ही है । विभिन्न धर्मों में सामन्जस्य स्थापित करने का कार्य भी इसी मिशन ने सम्पादित किया । चूँकि स्वामी रामकृष्ण परम हंस स्वयं अपने जीवन में वैष्णव, शाक्त, इस्लाम एवं ईसाई धर्मों का प्रयोग कर चुके थे । तथा सबमें एक सत्य का अनुभव कर चुके थे, इसीलिए रामकृष्ण मिशन के संस्थापक स्वामी विवेकानन्द ने भी सभी धर्मों को बराबर सम्मान दिया । उन्होंने मानव सेवा को ही ईश्वर की सच्ची सेवा माना । मानव सेवा को ही उन्होंने सच्चा सेवा माना । मानव सेवा को ही उन्होंने सच्चाधर्म माना । उनके अनुसार भूखे व्यक्ति को धर्म की बात कहना ईश्वर तथा मानवता का अपमान है ।"[1]

उन्होंने अपने मत का प्रचार न केवल भारत अपितु विदेशों में भी किया । राम कृष्ण मिशन ने -----

---

1. आधुनिक भारतीय इतिहास, एक नवीन मूल्यांकन, बी०एल०ग्रोवर, पृ०- 377

एकेश्वरवाद, मूर्तिपूजा में विश्वास सर्वधर्म समभाव पर बल दिया । मानव सेवा को ही ईश्वर की उपासना का मुख्य साधन माना है । इस प्रकार यह मिशन लोक सेवा तथा समाज सुधार का एक केन्द्र बन गया ।

§6§ थिओसोफिकल सभा :

प्राचीन भारतीय गौरव के प्रति न केवल भारतीय नागरिक व समाज सुधारक आस्थावान थे अपितु विदेशी नागरिक भी, प्राचीन भारतीय संस्कृति से प्रभावित हुए । जिसके परिणाम स्वरूप थिओसोफिकल सभा की स्थापना हुई । थिओसोफिकल सभा की स्थापना सन् 1882 में अड्यार मद्रास में हुई । जब श्रीमती बेसेंट इसकी अध्यक्षा बनीं तो इसकी क्रियाशीलता में दुगुना विकास हुआ । इसने समाज में मातृ भावना का प्रचार प्राचीन धर्म, दर्शन और विज्ञान के अध्ययन में सहयोग, सभी धर्मों के महत्व को स्वीकार करना तथा स्त्री- पुरुष की समानता पर बल दिया । इस प्रकार प्राचीन भारतीय गौरव के प्रति आदर तथा विश्व - बन्धुत्व की भावना से भारतीय नवजागरण को अत्यधिक बल मिला ।

§7§ बहावी आन्दोलन : § 1860 मुस्लिम सुधार आन्दोलन §

जिस प्रकार पाश्चात्य प्रभावों के परिणाम स्वरूप हिन्दू धर्म एवं समाज में नई चेतना का विकास हुआ, एक नये प्रकार की सोच पैदा हुई उसी प्रकार मुस्लिम समाज भी उससे प्रभावित हुआ । भारतीय मुसलमानों के रीति - रिवाज

तथा मान्यताओं में आयी तमाम कुरीतियों की ओर ध्यान दिया गया । मुस्लिम एकीकरण का यह प्रथम प्रयास था । यह बहावी आन्दोलन अथवा वली उल्लास आन्दोलन के नाम से जाना जाता है । इस आन्दोलन के नेता शाह वली उल्लास थे । उन्होंने इस बात पर बल दिया कि इस्लाम धर्म के चार प्रमुख न्याय शास्त्रों में सामंजस्य स्थापित होना चाहिए जिसके कारण भारतीय मुसलमान आपस में बँटे हुए हैं उन्होंने वैयक्तिक अन्तं चेतना पर भी बल दिया ।

उन्होंने कहा कि जहाँ कुरान और हदीस के शब्दों की कभी - कभी विरोधात्मक व्याख्या हो सकती है तो व्यक्ति को अपनी अन्तंचेतना के अनुसार निर्णय लेना चाहिए । इस प्रकार एक संगठित समाज की स्थापना का संकल्प लेकर इस आन्दोलन ने नवजागरण को गति प्रदान की ।

(4) <u>अलीगढ़ आन्दोलन :</u>

बहावी आन्दोलन का कार्य क्षेत्र केवल धार्मिक रहा । राज - नीतिक क्षेत्र में परिवर्तन का कार्य अलीगढ़ आन्दोलन से प्रारम्भ होता है । परंपरागत मुस्लिम केवल कुरान के अध्ययन को ही सब कुछ मान बैठे थे । परम्परागत ढंग से मुस्लिम शिक्षा प्राप्त करते थे । अलीगढ़ आन्दोलन के द्वारा मुसलमानों को आधुनिक बनाने का प्रयास किया गया ।

मुसलमान समाज में फैली हुई कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया गया । इस आन्दोलन के प्रणेता थे - सर सैय्यद अहमद खाँ । उन्होंने मुस्लिम समाज को नई शिक्षा देने के लिए एंग्लो ओरियन्टल स्कूल की स्थापना की । कुरान पर टीका लिखी । उन्होंने अपने जीवन के दो मुख्य लक्ष्य बनाये -

(1) अंग्रेज सरकार और मुसलमानों के सम्बन्धों को ठीक करना ।

(2) मुसलमानों में आधुनिक शिक्षा का प्रचार करना ।

इस प्रकार हिन्दू समाज के लिए जो कार्य ब्रह्म समाज के द्वारा राजा राम मोहन राय कर रहे थे । वही प्रयास मुस्लिम समाज के लिए सर सैय्यद अहमद खाँ कर रहे थे ।

(१) देव वन्द शाखा :

आधुनिक विचारों द्वारा सरकार के साथ सामंजस्य बैठाने वाले अलीगढ़ आन्दोलन का मुस्लिम समाज में विरोध होने लगा । जिसके परिणामस्वरूप देव वन्द शाखा का जन्म हुआ । इसका उद्देश्य परम्परागत मुस्लिम समाज को और अधिक दृढ़ बनाना था । तथा मुस्लिम सम्प्रदाय के लिए धार्मिक नेता तैयार करना था । जहाँ पर अलीगढ़ आन्दोलन नई शिक्षा प्रदान कर छात्रों को सरकारी नियुक्ति की तरफ प्रेरित करता था वहीं देव बन्द शाखा आन्दोलन इस्लाम धर्म के फैलाने में बल देता था ।

1• सामाजिक सुधार :

परिवर्तन के प्रति आग्रही भारतीय मनीषा के अन्तस में दो बातें समाहित थीं - समाज सुधार एवं भारतीय स्वाधीनता । सती प्रथा बाल विवाह, विधवा विवाह निषेध, पर्दा प्रथा, नशा चोरी, खान-पान, सम्बन्धी प्रतिबन्ध इत्यादि सामाजिक कुप्रथाओं की शिकार भारतीय जनता मुक्ति के लिए कराह रही थी । इस सुधारवादी संगठनों ने डूबते हुए समाज को उबारा । उस समय जो तत्व देश और समाज की प्रगति में बाधा डाल रहे थे । इन सुधारों ने उन सबका प्रभाव कम किया और देश को प्रगति की ओर अग्रसर किया । भारतीय आत्मा को जाग्रत करने का प्रयत्न किया । सामाजिक बुराइयों का परिष्कार धार्मिक आचार- विचारों के मूल स्वरूप का सन्धान और व्यवहारिक जीवन में सहानुभूति, सहिष्णुता दया, करुणा जैसे मानवीय गुणों का विकास हुआ ।

अंग्रेजी शासन के साथ - साथ भारत में ईसाई धर्म - प्रचारकों का भी प्रवेश हुआ । ईसाई मिशनरियाँ भी भारत में आयीं । इन मिशनरियों ने अनेक प्रकार की लालच तथा सुविधाओं का प्रलोभन दिखाकर बहुत सारे भारतीयो को ईसाई धर्म स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया । पर

प्रेरणा से जो हिन्दू धर्मावलम्बी ईसाई या मुसलमान हो गये थे, पुन: हिन्दू धर्म की ओर उन्मुख हुए । इन दोनों सुधारवादी संगठनों ने ईसाई तथा मुस्लिम स्रोतों को कमतर किया । इसके बाद ईसाई धर्म समाज के केवल कुछ ही लोगों तक सीमित रह गया । इस प्रकार नवजागरण आन्दोलन ने एक तरफ हिन्दू समाज को अन्य धर्म ग्रहण करने से मना किया तथा दूसरी तरफ अपनी संस्कृति और धर्म के प्रति आस्था पैदा की ।

"राजनैतिक जागरण"

भारतीय जनमानस में राष्ट्रवाद की भावना पैदा होते ही राजनैतिक जागरण प्रारम्भ होता है । भारतीय राष्ट्रवाद फ्रांसीसी क्रान्ति से विशेष रूप से प्रभावित था । ब्रिटिश शासकों ने भारत में अपनी नींव और गहरी जमाने के लिए राजनीतिक, सैनिक, आर्थिक तथा बौद्धिक सभी क्षेत्रों में आधुनिक पद्धतियों का प्रयोग किया । । इस आधुनिकीकरण के परिणामस्वरूप भारत में राष्ट्रवाद का जन्म हुआ 2

अंग्रेजों का शासन सम्पूर्ण भारत पर था । इसलिए सम्पूर्ण भारत में एक सी समस्याएं पैदा हुईं । इन समस्याओं के निदान हेतु एक से कानून बनाये गये

इस प्रकार अखिल भारतीय भावना पनपने लगी ।

सम्पूर्ण देश को एकता के सूत्र में पिरोने का कार्य रेलवे तथा डाक तार व्यवस्था के प्रारम्भ हो जाने के परिणामस्वरूप हुआ । रेलवे लाइन बिछ जाने से देश के सामाजिक, शैक्षणिक तथा राजनीतिक जीवन में आमूल चूक परिवर्तन हुआ । देश के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुंचना, ज्यादा सुविधाजनक तथा कम समय लगता था इस कारण लोगों के जीवन में गतिशीलता आयी तथा सम्पूर्ण देश में एक सी संस्कृति का प्रचार - प्रसार होने लगा । डाकखानों के प्रचार से राष्ट्रीय साहित्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर शीघ्रातिशीघ्र भेजे जाने लगे ।

1835 में अंग्रेजों ने अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा का प्रसार करने का निर्णय लिया । अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त नवयुवकों के लिए पाश्चात्य उदारवादी विचार धारा के द्वार खुल गये । मिल्टन, शैली, बन्थम, मिल, स्पेन्सर, रूसो तथा वाल्टेयर के विचारों ने भारतीय बुद्धिजीवियों में स्वतन्त्रता, स्वशासन तथा राष्ट्रीयता की भावनाएं जगा दी । ऊंची शिक्षा प्राप्त करने के लिए कुछ नवोदित बुद्धिजीवी इंगलैण्ड भी गये थे । विलायत शिक्षा प्राप्त नवयुवक वहां के नागरिकों के अधिकारों को नजदीक से देख चुके थे तथा अपने देश की अधिकार शून्यता को भी देखे परिणामस्वरूप इनमें राष्ट्रीयता की भावना बलवती हुई । अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार प्रसार के कारण यह एक सम्पर्क भाषा का काम करने लगी । इस प्रकार आपस में विचार - विमर्श करने में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा की ।

देश में एकता स्थापित करने में समाचार पत्रों का अभूतपूर्व योगदान रहा। मुद्रणालय की स्थापना हो जाने से समाचार पत्र तथा सस्ता साहित्य प्रकाशित होने लगा। ये समाचार पत्र पाश्चात्य तरीके पर विकसित हुए थे। इन समाचार पत्रों के माध्यम से राष्ट्रीयता की भावना मुख्य रूप से बलवती हुई। दी इण्डियन मिरर, दिबंगाली, दि अमृत बाजार पत्रिका, दी बाम्बे क्रानिकल, दि हिन्दू पेट्रियट, दि भट्टरदठा, दि केसरी, दि आन्ध्र प्रकाशिका, दि हिन्दू, दि इन्दू प्रकाश, दि कोहिनूर इत्यादि समाचार पत्र स्वतन्त्रता तथा प्रजातंत्रीय भावना को विशेष रूप से प्रसारित किये।

इसी समय भारतीय इतिहास पर सर विलियम जोन्स, मोनियर विलियम्स, मैक्समूलर इत्यादि विदेशी विद्वानों ने शोध परक विचार प्रतिपादित किये जिसके परिणामस्वरूप भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा का ज्ञान हुआ। यूरोपीय राष्ट्रवादी आन्दोलन ने भी देश के प्रति गौरव की भावना पैदा की।

" भारत में राजनीतिक आन्दोलन के प्रवर्तक राजा राम मोहन राय थे।[1] प्रथम राजनैतिक संगठन " बंग भाषा प्रकाशक सभा " 1836 ई0 में राम मोहन राय के साथियों ने स्थापित की। भूमि पतियों के हितों के लिए 1836 ई0 जमींदारी एसोसियेशन की स्थापना हुई। वास्तव में इसे ही पहली संगठित

1· बी0एल0ग्रोवर: आधुनिक भारतीय इतिहास: एक नवीन मूल्यांकन पृ0-397

राजनीतिक चेष्टा माना जा सकता है । जिसने अपनी शिकायतों के निवारण के लिए संवैधानिक उपचारों का प्रयोग किया । 1875 में शिशिर कुमार घोष ने इण्डियन लीग की स्थापना की । इस लीग का मुख्य उद्देश्य लोगों में राष्ट्रवाद की भावना जगाना था । आनन्द मोहन बोस और सुरेन्द्र नाथ बनर्जी के सहयोग से इण्डियन एसोसियेशन की स्थापना हुई । इस संस्था ने न केवल मध्य वर्ग को ही सदस्य बनाया बल्कि सर्वसाधारण को भी इसमें सम्मिलित किया गया ।

कलकत्ता की इण्डियन एसोसियेशन के आधार पर बम्बई प्रेसीडेन्सी में भी " बम्बई एसोसियेशन"की स्थापना हुई (1852) ब्रिटिश सरकार तथा जनता के बीच में सेतु का काम करने वाली 1867में पूना में "पूना सार्वजनिक सभा की स्थापना हुई ।

मद्रास प्रेसीडेन्सी में मद्रास नेटिव एसोसियेशन की स्थापना हुई । इस प्रकार कलकत्ता, बम्बई तथा मद्रास तीनों प्रेसीडेन्सीयों में संगठनात्मक राजनीतिक आन्दोलन तेज हुए । यद्यपि की प्रान्तीय स्तर पर संगठनात्मक भावना पनप रही थी फिर भी अखिल भारतीय स्तर पर इस प्रकार की कोई संस्था नहीं स्थापित हो गयी थी । जिसके माध्यम से सम्पूर्ण देश के बुद्धिजीवियों से विचार-विमर्श हो सके । 1877 में पूना सार्वजनिक सभा ने बम्बई तथा कलकत्ता के प्रतिनिधियों में मिल-जुलकर काम करने की भावना पैदा की । इसी प्रकार के

प्रयास कलकत्ता की इण्डियन एसोसियेशन का चल रहा था । यह संस्था राष्ट्रीय सम्मेलन की बात सोच रही थी । अखिल भारतीय स्तर पर राजनीतिक संगठन का सपना " भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना (1855) के साथ ही सम्पन्न हो गया । इस संस्था के जन्म के साथ ही राजनीतिक जागरण अधिक तेज हुए । इस संस्था के तीन प्रमुख सोपान हैं । 1885- 1905 को प्रथम चरण माना जाता है । इस चरण में यह आन्दोलन केवल थोड़े से बुद्धिजीवियों तथा शिक्षित वर्गों में ही लोकप्रिय था, जो पाश्चात्य उदारवादी तथा अतिवादी विचारधारा से प्रेरणा ग्रहण करता था ।

दूसरा चरण 1905- 1919 तक माना जाता है । इस समय कांग्रेस एक प्रौढ़ संस्था बन गयी थी । इसके उद्देश्य तथा सीमाएं बढ़ गयी । जनता के सर्वतोन्मुखी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विकास पर भी बल देने लगी । तथा पूर्ण स्वराज्य पर बल देने लगी । इसी समय क्रान्तिकारी विचारधाराएं भी कांग्रेस में पनपने लगीं थी । तथा वे ब्रिटिश साम्राज्य को समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील थे । 1919-1947 तक कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य की माँग की जिसके नेता बने - महात्मा गांधी । इन्होंने अहिंसात्मक आन्दोलन पर बल देकर सम्पूर्ण जनता को इस आन्दोलन से जोड़ दिये ।

इस प्रकार राजनीतिक आन्दोलन का पूर्ण विकास कांग्रेस की स्थापना के साथ ही होता है।

(3) साहित्यिक चेतना :

पश्चिमी सभ्यता के सम्पर्क में आने के कारण देश के वातावरण में काफी परिवर्तन आ गया था। ज्ञान - विज्ञान की दिनोंदिन वृद्धि हो रही थी। ऐसे वातावरण में परम्परागत धार्मिक शिक्षा समाज में अपनी पैठ नहीं बना पा रही थी। इसलिए वर्तमान साहित्य विषय और शैली दोनों क्षेत्रों में परम्परागत साहित्य से भिन्न बना। और इस विभिन्नता के लिए तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक सुधारवादी भावनाएं मुख्य प्रेरक बनी। अंग्रेजों ने अध्ययन का माध्यम अंग्रेजी बनाया। भारत में इस प्रकार की भाषा का ज्ञान हो जाने के परिणामस्वरूप अंग्रेजी साहित्य से भी परिचय हुआ। जिसका नतीजा यह हुआ कि रीतिकालीन - श्रृंगारिकता, रीति निरूपण, अलंकार प्रवृत्ति के प्रति अनावश्यक मोह इत्यादि प्रवृत्तियां के प्रति साहित्यकारों का मोह भंग हुआ। क्योंकि ये गतिशील वर्तमान युग मे प्रासंगिक नहीं लग रही थी।

बंग साहित्य ने सर्वप्रथम अपने युग की संवेदनाओं को अपने में समेटा अतः नवजागरण कालीन बोध सर्वप्रथम बंगला साहित्य में ही देखने को मिलता है।

नूत्य वंग साहित्य में मुख्य विशिष्टताएं उभरकर सामने आयीं -

§1§ मानव तथा मानव शक्ति पर अविचलित विश्वास ।

§2§ अपनी अर्न्तनिहित मानव शक्ति के प्रति प्रबल श्रद्धा -सचेतन आत्म मर्यादा बोध ।

§3§ सब तरह के संस्कारों से जड़ित मध्य युगीन दृष्टिकोण के प्रति अविश्वास ।

§4§ आत्म चेतना, आत्म विश्वास तथा आत्म प्रतिष्ठा की स्वस्थ तथा वलिष्ठ अभिव्यक्ति ।

इस प्रकार सर्व भारतीय ऐक्य से देश प्रेम की भावना के नये युग को अलंकृत किया । जातीय अभ्युदयान की विशाल चेतना से शिक्षितों के हृदय आलोकित हुए । सीधे अंग्रेजों से यह भावात्मक परिवर्तन सम्भव नहीं हुआ । अंग्रेजी भाषा के माध्यम से यूरोपीय प्रभाव से समस्त सामाजिक तथा साहित्यिक प्रक्रिया में परिवर्तन आ गया ।

बंग साहित्य में सर्वप्रथम रंग लाल वन्धोपाध्याय ने भारतीय जीवन को नवीन सम्भावनाओं को रेखांकित किया । वैसे बंगला साहित्य में स्वदेश प्रीतिमूलक कविता सर्वप्रथम ईश्वर चन्द्र गुप्त ने किया किन्तु यहां पर नवजागरण अस्पष्टरूप में था उसका स्पष्ट रूप से प्रस्फुटन रंग लाल पन्धोपाध्याय के साहित्य

में मिलता है । रंग लाल बन्धोपाध्याय ने राजस्थान के इतिहास से विषय ग्रहण किये । उन्नीसवीं शताब्दी के जातीयता बोध की प्रेरणा को व्यक्त करने के लिए उन्होंने इन कहानियों का आश्रय लिया - पद्मिनी उपाख्यान, सुर -सुन्दरी कर्म देवी तथा कान्चिकावेरी उनके प्रमुख काव्य हैं । रंग लाल के काव्य का मुख्य स्वर देश प्रेम और स्वाधीनता प्रियता है यद्यपि कि ईश्वर चन्द्र गुप्त के काव्य में देश प्रेम था किन्तु यह देश प्रेम स्वाधीनता प्रीति तक नहीं पहुँच सका । उनकी दृष्टि में भारतीय समाज की रीति - नीति श्रेष्ठ थी । पाश्चात्य प्रभाव से उन्होंने विकार और पतन देखा था किन्तु रंग लाल का दृष्टिकोण अधिक व्यापक था ।

बंगाल का नवजागरण माइकेल मधुसूदन दत्त के काव्य में पूर्णता प्राप्त करता है । उन्होंने अपने साहित्य में निम्न मान्यताएं स्थापित की ।

(1) मातृभाषा तथा भारतीय पुराण में विश्वास ।

(2) मानवता की शक्ति पर अटल विश्वास ।

(3) यूरोपीय साहित्य तथा भारतीय साहित्य का ज्ञान तथा पाश्चात्य विशिष्टता के ग्रहण किया ।

बंगला साहित्य के क्षेत्र में उनका पदार्पण एक नाटक कार के रूप में होता है। उनका प्रथम नाटक शर्मिष्ठा (1859) में " एकेइ कि बले सभ्यता" 1860 तथा पद्मावती नाटक 1860 में प्रकाशित हुआ। 1861 में उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना " मेघनाद वध " काव्य प्रकाशित हुआ। जिसमें समाज संस्कार अभिमुखी प्रयासों में नारी व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा, चिर अवहेलित नारी का स्वाधीन स्वतन्त्र विकास और नारी व्यक्तित्व के प्रति श्रद्धा तथा उसके प्रति मानवता बोध जैसे जीवन के शुभ प्रश्न उद्घाटित किये गये हैं।

इसके बाद परवर्ती कवियों में हेम चन्द्र वन्धोपाध्याय शिवनाथ शास्त्री नवीन चन्द्र सेन, ईशान चन्द्र वन्धोपाध्याय इत्यादि कवियों ने नवजागरण का सन्देश अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रेषित किये। कालान्तर में रवीन्द्र नाथ टैगोर ने इस प्रवृत्ति का पूर्ण निर्वाह किया।

राजाराम मोहन राय ने भारतीय धर्म का असारता को दूर करने का प्रयास किया। ईश्वर चन्द्र विद्या सागर ने भी शिक्षा और समाज संस्कार में प्रवृत्त हुए थे। महर्षि देवेन्द्र नाथ टैगोर भी इसी समय सामाजिक तथा धार्मिक विचारों का परिष्कार कर रहे थे इन सब सार्थक -प्रयासों के परिणामस्वरूप बांग्ला नाट्य क्षेत्र में भी परिवर्तन आया। इस समय दो प्रकार के नाटक लिखे गये। पौराणिक तथा लौकिक आख्यान पर आधारित। (2) विधवा विवाह, बहु विवाह, बाल-विवाह, दहेज, अशिक्षा, धार्मिक आडम्बर इत्यादि सामाजिक दोषों पर आधारित

नील दर्पण में सर्वप्रथम राष्ट्रीय भावना दिखलायी पड़ती है ।

माइकेल मधुसूदन दत्त, बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, रवीन्द्र नाथ टैगोर इत्यादि प्रतिभाशाली साहित्यकारों के स्पर्श से नवजागरण सम्पूर्ण भारत में ग्राह्य होता जा रहा था । शरतचन्द्र के जन्म के समय §1876 ई0-1938 § तक नवजागरण समग्र रूप से पूरे देश में फैल गया ।

बंग साहित्य जब अपने रूप विधान में नवजागरण को पूरी तरह से समेट लिया तो उस प्रवृत्ति से हिन्दी साहित्य भी वंचित नहीं रह सका । हिन्दी में नवजागरण का प्रवेश द्वार बना भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का साहित्य । इसके दो कारण हैं - प्रथम तो यह कि ईश्वर चन्द्र विद्यासागर जब भी बनारस आते भारतेन्दु से मुलाकात बराबर होती रहती । दूसरा कारण यह कि इनके पूर्वज सेठ अमीचन्द बंगाल के थे इसलिए बंग भूमि का संस्कार इनके रक्त में समाहित था । जब सम्पूर्ण देश बंग प्रान्त के नेतृत्व में करवटें बदलने लगा तो हिन्दी प्रदेश भी अपने को इससे नहीं बचा सका । इसका परिणाम यह हुआ कि श्रृंगारिकता, रीतिबद्धता , तथा दरबारी-पन में कमी आ गयी तथा राष्ट्रप्रेम, भाषा प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं के प्रति प्रेम इन साहित्यकारों के मन में पैदा हुआ । इन्होंने रचनाओं के माध्यम से सामाजिक समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत किया । कुरीतियों पर करारा प्रहार किया । इस समय राष्ट्रीयता, सामाजिक चेतना, हास्य- व्यंग्य, भक्ति परक, समस्यापूर्ति

इत्यादि विषयों से सम्बन्धित साहित्य सृष्टि हुई इसके साथ ही अंग साहित्य के अनुवाद भी हुए ।

जिस नवजागरण की नींव भारतेन्दु युग में पड़ी थी उस पर भव्य महल बनाने का कार्य द्वितीय युग में प्रारम्भ हुआ । राष्ट्रीयता का वास्तविक ओज द्विवेदी युगीन कविता में ही देखने को मिला है । जहाँ भारतेन्दु युग में राष्ट्र प्रेम हल्का सा धुँधला लग रहा था । राज भक्ति की भावना लोगों के अन्तस में थी । अंग्रेज राज सुख साज कहते थे किन्तु चिन्ता भी भारतीय आर्थिक व्यवस्था के पंगु होने के कारण " पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी " वहाँ युग में पराधीनता

औद्योगिक - विकास

अंग्रेजों के पूर्व भी भारतवर्ष पर कई विदेशी शासक शासन किये किन्तु इन विजेताओं ने केवल भारतीय राजनीतिक शक्तियों को ही क्षति पहुँचायी । देश के आर्थिक ढाँचे में कोई बुनियादी परिवर्तन नही हुआ । उनका राजनीतिक तथा आर्थिक दृष्टिकोण भारतीय हो गया । किसान, दस्तकार और व्यापारी अपने जीवन को पहले जैसा ही व्यतीत करते रहे । ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भी कोई बुनियादी परिवर्तन नहीं हुआ ।

अँग्रेजों ने न केवल भारतीय राजनीतिक व्यवस्था पर आक्रमण किया बल्कि यहाँ की अर्थव्यवस्था को भी नष्ट किया । पहला आक्रमण यहाँ के हस्तशिल्पों पर हुआ । 1813 के बाद अँग्रेजों ने भारत पर एकतरफा मुक्त व्यापार की घोषणा कर दी । जिसके परिणाम स्वरूप ब्रिटिश विनिर्मित वस्तुएं विशेष कर सूती वस्त्रों की भारत में भरमार हो गयी । ये वस्त्र शक्तिशाली मशीनों द्वारा बनाये गये थे इनकी प्रतिद्वन्द्विता में भारतीय हस्तकरघा से बने हुए वस्त्र पीछे हो गये ।

भारतीय रेल विभाग के स्थापित हो जाने के कारण अँग्रेजों के ये वस्त्र सम्पूर्ण भारत में तेजी से फैलने लगे । इनका प्रभाव गाँवों में भी पड़ने लगा । सूत कातने तथा सूत बुनने का उद्योग सबसे ज्यादा क्षतिग्रस्त हुआ । लोहा, मिट्टी के बर्तन, शीशा, कागज, धातु, जहाजरानी, चमड़ा शोधक तथा रंगाई का कार्य भी नष्ट होने लगा । ईस्ट इण्डिया कम्पनी और उसके कर्मचारियों ने बंगाल के दस्तकारों को बाजार से सस्ते दर पर वस्तु बेचने के लिए बाध्य किये जिसके परिणाम स्वरूप दस्तकार अपना पुश्तैनी पेशा छोड़ने को बाध्य हुए ।

इसके साथ ही भारतीय वस्तुओं पर ब्रिटेन तथा यूरोप में उच्च आयात शुल्क लगा दिये गये जिसके परिणाम स्वरूप 1820 के बाद यूरोपीय बाजार भारतीय वस्तुओं के लिए लगभग बन्द से हो गये । वे भारत से मात्र कपास और चमड़े जैसे कच्चे मालों का आयात करने लगे जिसके कारण इनकी कीमतें भी बढ़ने लगी । इसका

परिणाम यह हुआ कि यह कच्चा माल भी महँगा होता गया तथा भारतीय व्यापारी या हस्तशिल्पी इनको खरीदने मे असमर्थ हो गये। इस प्रकार भारतीय उद्योग धन्धों का दिन - प्रतिदिन ह्रास होने लगा। ये हस्तशिल्पी तथा दस्तकार वैकल्पिक रोजगार के रूप में कृषि को अपनाये। इस प्रकार कृषि पर लोगों की निर्भरता ज्यादा बढ़ गयी।

ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत किसान धीरे - धीरे दरिद्र होते गये। रैयत-वारी और महालवारी क्षेत्रों में भूराजस्व का एक तिहाई से लेकर आधा तक होता था। भूराजस्व को रकम वर्ष प्रतिवर्ष बढ़ती गयी। भूराजस्व की रकम वसूलने के तरीके ने इसको और भी भयंकर बना दिया। राजस्व की बकाया रकम वसूल करने के लिए उसकी जमीन की निलामी करनी शुरू करी दी। किसान इस राजस्व को जमा करने के लिए महाजन से ब्याज पर कुछ धन ले लेते थे। अथवा अपनी कुछ जमीन इनके पास गिरवी रख देते थे। धीरे - धीरे महाजन इस जमीन का मालिक बन जाता था। अंग्रेजों के नियम भी इन्हीं महाजनों, सेठों की सुरक्षा के लिए बनते थे। बाद तथा अकाल के समय भी इनको राजस्व भरना पड़ता था।

उन्नीसवीं सदी में महाजन ग्रामीण क्षेत्र का अभिशाप बन गया। किसानों ने यही समझा कि ये महाजन अंग्रेजों के शोषण तन्त्र के महत्वपूर्ण अस्त्र हैं। इसलिए 1857 में जहाँ भी किसानों ने विद्रोह किया उसका पहला निशाना था महाजन।

1793 में स्थायी बन्दोबस्त के कारण ऊँची बोली लगाने वालों को राजस्व वसूली का अधिकार मिलने लगा । इस राजस्व का 10/11 भाग सरकार ले लेती थी । इससे बंगाल के आधे जमींदारों की भू सम्पत्ति सौदागरों तथा धनी वर्गों के हाथ में चली गयी । उत्तर मद्रास तथा शेष मद्रास में स्थायी बन्दोबस्त तथा रैयतवारी बन्दोबस्त के कारण जमींदारों के उपर तबाही बरपने लगी । सरकार कृषि में सुधार करने का कोई प्रयास नहीं किया । पुराने ढंग से ही खेती होती रही । जबकि कृषि पर निर्भरता बढ़ती गयी जिसके परिणामस्वरूप कृषकों की हालत खराब होती गयी ।

हस्तशिल्प की तबाही के परिणामस्वरूप कृषि पर दबाव बढ़ा तथा कृषकों की तबाही के परिणामस्वरूप श्रमिकों की संख्या बढ़ती गयी । कृषक मजदूर बनते चले गये । इस आर्थिक विपन्नता को दूर करने का एक ही रास्ता था - भारत में मशीन युग का प्रारम्भ करना । औद्योगिक विकास के लिए पूँजी की आवश्यकता पड़ी इस समस्या का निराकरण अंग्रेजों की सहायता के बिना असम्भव था । अत: उनसे पूँजी लेकर भारत में मशीनी उद्योगों का प्रचलन हुआ । पहली कपड़ा मिल कावसजी नाना भाई ने 1853 में बम्बई में प्रारम्भ की । तथा जूट मिल 1855 में रिशरा (बंगाल) में ।

इसके पश्चात उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध तथा बीसवीं शदी के प्रारम्भ में कपास की ओटाई तथा चावल, आटे, इमारती लकड़ी की मिलें, चर्म शोधनालय, उनी कपड़े के कारखाने, कागज और चीनी की मिलें, लोहा और इस्पात के कारखाने तथा नमक, सीमेण्ट, कागज, दियासलाई, चीनी और शीशा उद्योग विकसित हुए ।

किन्तु इन उद्योग धन्धों पर ब्रिटिश पूंजी का ही स्वामित्व था । विदेशी पूंजीपतियों को भारतीय उद्योग में पूंजी लगाना अच्छी सम्भावना पैदा कर रहा था । इसलिए विदेशी पूंजीपति यहां पूंजी लगाने में सहर्ष तैयार हो जाते थे । अधिकतर बैंको पर ब्रिटिश अर्थपतियों का ही प्रभाव था इसलिए उन्हें कर्ज लेने में काफी कठिनाई होती थी उंचा ब्याज देना पड़ता था । यह ब्याज विदेशियों को काफी आसान किस्तों पर मिल जाते थे । भारत के पास न ही अपनी कोई टेक्नालाजी थी और न ही बाहर से मशीन ही मंगा सकते थे । इसलिए विदेशी ही भारत में उद्योग धन्धों की स्थापना कर सके ।

भारत में औद्योगिक विकास के परिणाम स्वरूप औद्योगिक पूंजीपति तथा आधुनिक मजदूर वर्गों का जन्म हुआ । ये नयी टेक्नोलाजी, आर्थिक संगठन की नयी प्रणाली, नये सामाजिक विचार, नयी परम्पराओं, रीति-रिवाजों, जीवन के नये तौर - तरीकों से परिचित हुए ।

इसके पश्चात सरकार ने इनको संरक्षण देना शुरू किया । मजदूरों का शोषण होने लगा । काम ज्यादा लिया जाने लगा । इसका विरोध मिल मजदूरों ने यूनियन बनाकर मिलों में आगजनी तथा तोड़-फोड़ करना प्रारम्भ किया । किन्तु इसका यह परिणाम हुआ कि भारत में आधुनिक टेक्नोलोजी, चिकित्सा-विज्ञान इत्यादि आधुनिकतम विचार- धाराओं का प्रारम्भ हुआ ।

xx
xxxx
xxxxxx
xxxxxxxx
xxxxxx
xxxx
xx

द्वितीय अध्याय

हिन्दी प्रदेश में नवजागरण

नवजागरण की उद्दाम तरंगों में सम्पूर्ण देश प्रवाहित हुआ । बंग प्रान्त से प्रारम्भ होकर महाराष्ट्र तथा गुजरात से होता हुआ उत्तर भारत में भी कालान्तर में इसके चिन्ह स्पष्ट होने लगे । उत्तर भारत में नवजागरण की प्रारम्भिक सीमा 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन से मानी जा सकती है ।[1]

" हिन्दी प्रदेश में नवजागरण 1857 के स्वाधीनता संग्राम से शुरू होता है। इस स्वाधीनता संग्राम में सामन्तों ने आन्दोलन का नेतृत्व नहीं किया अपितु भारतीय सेना के नेताओं ने बागडोर सम्हाली । राज्य सत्ता की समस्या को सामन्तों के हित में नहीं, जनता के हित में हल करने का प्रयास किया गया था । बहादुर शाह जफर को सारे देश का बादशाह घोषित किया गया था । किन्तु वास्तविक सत्ता बादशाह या उसके अनुयायियों के हाथ में नहीं थी, वह सैनिकों के हाथ में थी । कहीं - कहीं अंग्रेजों ने जमींदारों और साहूकारों को नये अधिकार दिये थे अंग्रेजों का शासन खत्म होते ही इनकी व्यवस्था भी उलट दी गयी । जो किसान फौज में भरती हो गये थे तथा सेना के सिपाही तथा सूबेदार के रूप में काम कर रहे थे । उन्हीं लोगों ने इस आन्दोलन का नेतृत्व किया । सामन्त देशी शक्तियों के दबाव में आकर अंग्रेजों से युद्ध किया ।"[2] इसका नेतृत्व अकिसानों ने किया जो फौज

1• डा० रामविलास शर्मा - आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, और हिन्दी नवजागरण भूमिका पृ०- 9

2• वही - 9

में सिपाहियों और सूबेदारों के रूप में काम कर रहे थे । अनेक छोटे - बड़े किसानों सामन्त इनके सहायक थे, संग्राम के नेता नहीं । अक्सर वे देशी सेना के दबाव में आकर अंग्रेजों से लड़े । फौज के भीतर वाले किसानों के साथ गाँवों के गैर-फौजी किसान थे, और इन दोनों ने मिलकर जो हथियारबन्द लड़ाई चलायी वैसी लड़ाई न तो सन् 1857 से पहले कभी चलायी गयी थी, और न उसके बाद कभी चलायी गयी । लड़ने वाले किसानों में केवल उच्च वर्ग के हिन्दू नहीं थे । उनके साथ निम्न वर्ग के सैकड़ों आदमी थे । हिन्दुओं के साथ सैकड़ों मुसलमान थे । धर्म और वर्ग की सीमाएं तोड़कर ये जो लाखों किसान एक ही लड़ाई में शामिल हुए, उसका बड़ा गहरा असर उनकी संस्कृति पर पड़ा और यह असर उनके लोक गीतों पर दिखायी देता है ।"

इस आन्दोलन में हिन्दू और मुसलमान दोनों शामिल थे । इस प्रकार यह एक असम्प्रदायिक राष्ट्रीय रूप था । [1] सन् 1857 का स्वाधीनता संग्राम अंग्रेजों द्वारा प्रेरित सम्प्रदाय बाद की सबसे बड़ी पराजय थी ।" यह आन्दोलन हिन्दी भाषी क्षेत्रों में हुआ । इसका दमन करने के लिए अंग्रेजों ने अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के सैनिकों का प्रयोग किया । ईस्ट इण्डिया कम्पनी इजारेदार व्यापारियों की कम्पनी थी । ये स्वच्छन्द प्रतियोगिता के विरोधी थे । भारत में अंग्रेजों के

- -

1. हिन्दी नवजागरण और आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी - भूमिका - 10

मुख्य सहायक यहाँ के सामन्त थे।"[1] सन् 1857 -58 में कश्मीर से लेकर हैदराबाद तक और महाराष्ट्र - राजस्थान से लेकर बंगाल तक के जमींदारों और राजाओं नवाबों ने अंग्रेजों की मदद की। रूस, फ्रांस तथा ब्रिटेन सर्वत्र पत्तियों ने सामन्तों से समझौता कर लिया था। इसका प्रभाव भारत पर भी पड़ा था। हिन्दुस्तान में अंग्रेजी राज सबसे बड़े जमींदार की भूमिका निर्वाह रहा था। यह नया जमींदार पुराने जमींदारों से कहीं अधिक क्रूर और शोषक था। अंग्रेजों की आमदनी का मुख्य स्रोत थी। जमीन पर किसान की मेहनत। सन् 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम इतिहास का विस्तृत विवरण ( ) (गदर के कागजात) में सुरक्षित है।

हिन्दी प्रदेश में नवजागरण का द्वितीय सोपान - भारतेन्दु युग माना जा सकता है। 1868 में " कवि-वचन- सुधा " नामक पत्रिका निकाली। इस पत्रिका में " लेवी प्राण लेवी " नामक ब्रिटिश विरोधी लेख छपा था। भारतेन्दु का साहित्य स्वतन्त्रता संग्राम से बहुत प्रभावित है। इनके साहित्य में किसानों को लक्ष्य करके इनको संगठित और आन्दोलित करने का सबसे अधिक प्रयास किया गया है जो गदर के इश्तहार बहादुरशाह जफर के नाम जारी किये गये थे उसमें, व्यापारियों और सरकारी नौकरों कारीगरों की स्थिति का विश्लेषण किया गया है। हरिश्चन्द्र अपने साहित्य में इन सब बातों को दुहराते हैं। 26 फरवरी 1874 की कवि-वचन-

---

1• हिन्दी नवजागरण और आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, भूमिका-10

सुधा ; में लिखा " क्या यह अनीति नहीं है कि अनुमान दो सौ वर्ष हुए इसका अधिकार इस देश में है । इन्होंने हमारे धनधान्य की वृद्धि में कोई उपाय नहीं किया और केवल अपनी भाषा सिखाया और सब व्यापार और धन सब अपने हस्तगत किया क्या यह खेद की बात नहीं है कि हमको कला - कौशल्य से विमुख रखा और आप स्वत: व्यापारी बनकर सब देश भर का धन और धान्य अपने देश में ले गये ।"

हिन्दुस्तान में अंग्रेजी माल के आने से यहाँ के कारीगर, जुलाहे, बढ़ई, लुहार, चमार सब बेकार हो गये । इस प्रकार यहाँ का कारीगर भिखारी बन गया। 9 मार्च 1874 की कवि वचन सुधा में हरिश्चन्द्र कहते हैं " कपड़ा बनाने वाले, मूर्त निकालने वाले, खेती करने वाले आदि सब भीख माँगते हैं - खेती करने वालों की यह दशा है कि लँगोटी लगाकर हाथ में तुम्बा ले भीख मांगते हैं, और जो निरुद्यम हैं उनको तो अन्न की भ्रान्ति है ।"

भारतीय स्वाधीनता - आन्दोलन में स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार और विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार की भूमिका महत्वपूर्ण रही है जो गदर के इश्तहार बाँटे गये थे दिल्ली के उसी इश्तहार में कहा गया है कि बादशाही हुकूमत कायम होने पर अंग्रेजों का जालफरेब खत्म कर दिया जायेगा और हर चीज का व्यापार करने का अधिकार इस देश के सौदागरों को होगा । अपना माल ले जाने के लिए भापसे चलने वाले जहाज और भाप से चलने वाली गाड़ियाँ सरकार उन्हें सुलभ करेगी । जिन

सौदागरों के पास अपनी पूंजी न होगी, उन्हें सरकारी खजाने सेसहायता दी जायेगी । राजाओं औररईसों का सारा काम देशी कारीगरों को दिया जायेगा। गदर में इस बात पर बार - बार जोर दिया गया है कि वे अंग्रेजों की बातों पर भरोसा न करें " परन्तु अब अंग्रेजी माया छल और घात दृष्टि में आने लगा क्योंकि हम लोगों को केवल अंग्रेजी भाषा प्राप्त हुई परन्तु कला कौशल के क्षेत्र में हम लोग भलीभांति अज्ञान सागर में निमग्न हुए हैं इसमें सन्देह नहीं । (कवि- वचन - सुधा)

गदर का उद्देश्य सारे देश के लिए स्वतन्त्रता प्रदान करना था । भारतेन्दु ने 6 जुलाई 1874 की कवि - वचन - सुधा में लिखा " जिस प्रकार अमेरिका उप निवेशित होकर स्वाधीन हुआ वैसे ही भारत वर्ष भी स्वाधीनता लाभ कर सकता है ।"

1857 के राष्ट्रीय संग्राम का प्रभाव न्यूनाधिक देश के प्रत्येक भाग पर पड़ा था । कतिपय विद्वानों का मत है कि देश का नवजागरण अंग्रेजी राज के न्यामतों का नतीजा था, और गदर में सिपाही और सामन्त अपने स्वार्थों के लिए लड़े । कुछ मार्क्सवादी विचारकों का कहना है कि अंग्रेज पुरानी पद्धति का नाश कर रहे थे और नयी पद्धति को जन्म दे रहे थे । पुरानी पद्धति के नाश से अनेकों कारीगर बेकार हो गये और उसी पुरातनवादी अर्थव्यवस्था के

लिए संघर्ष किया किन्तु ये किसान यह भूल जाते हैं कि यदि संग्राम का यही कारण होता है तो महाराष्ट्र, तमिलनाडु और बंगाल में क्यों संग्राम नहीं हुआ क्योंकि इन प्रदेशों में अंग्रेजों का शासन पहले ही हो गया था । हिन्दी प्रदेश तो बहुत बाद में उनके साम्राज्य में मिलाया गया ।

अंग्रेजों ने पुरानी सामन्तवादी व्यवस्था नष्ट करके नयी सामन्ती व्यवस्था कायम की । पुरानी बड़ी - बड़ी रियासतों के राजाओं और नवाबों को उन्होंने अपनी कठपुतलियाँ बनाकर रखा और नयी जमींदारियाँ कायम कीं, जहाँ वे जमींदार को बेदखल कर सकते थे । माल गुजारी बहुत बढ़ा दी और किसान बुरी तरह कर्ज के बोझ से दब गये । भारत की सबसे बड़े जमींदार बन गये । अंग्रेजों ने साहूकारों और जमींदारों के तथा अपने हितों की रक्षा के लिए उन्होंने कचहरी अदालत से लेकर पुलिस और फौज तक सारे साधनों का पूरा उपयोग किया । इस प्रकार पुराने सामन्तवाद में किसान गरीब रहकर भी जिन्दा बने रहते थे । अंग्रेजी राज्य कायम होने पर ये किसान लाखों की संख्या में भूखों मरें ।

हिन्दी नवजागरण का तीसरा चरण महावीर प्रसाद द्विवेदी के युग से प्रारम्भ होता है । जिसका निदर्शन "सरस्वती पत्रिका" के प्रकाशन से होता है । आचार्य द्विवेदी ने इस पत्रिका के माध्यम से पहला महत्वपूर्ण कार्य किया । कि भाषा परिष्कृत हो, किन्तु इसके साथ ही इस पत्रिका सामाजिक योगदान को भी भुलाया

नहीं जा सकता । यथा योरप के कुछ मदान्ध मनुष्य समझते हैं कि परमेश्वर ने एशिया के निवासियों पर आधिपत्य करने को लिए ही उनकी सृष्टि की है। जिस एशिया ने बुद्ध, राम, कृष्ण, ईसा और कन्फ्यूसियस, रवीन्द्रनाथ और जगदीश चन्द्र वसु को उत्पन्न किया है, उसने दूसरों की गुलामी के ठेका नहीं ले रखा" ।

छुआछूत नवजागरण का दूसरा अंग था । आचार्य द्विवेदी ने इस पर अपनी जोरदार टिप्पणी प्रस्तुत की" इस दुनिया की सृष्टि एक ऐसे ईश्वर ने की है। जिसकी कोई जाति नही, जो ऊँच-नीच का कायल नहो, जो ब्राह्मण अब्राह्मण, चाण्डालों और कीड़े-मकोड़ों तक में अपनी सत्ता प्रकट करता है। छुआछूत माने वालो को ऐसे भ्रष्ट ईश्वर का संसार छोड़ देना चाहिए।

नवजागरण के प्रथम विन्दु के रूप में भारत की निर्धनता के कारणों पर विचार किया गया । इस समय लिखे गये शास्त्रों का मुख्य उद्देश्य है देश-दशा के प्रति शिक्षित जनों को सजग करना । "हिन्दुस्तान सम्पत्ति हीन देश है। यहाँ सम्पत्ति की बहुत कमी है। जिधर आप देखेंगे उधर ही आँख को दरिद्र-देवता का अभिनय किसी न किसी रूप में अवश्य ही देख पड़ेगा । परन्तु इस दुर्दमनीय दारिद्र को देखकर भी कितने आदमी ऐसे हैं जिनको उसका कारण जानने की उत्कण्ठा होती है। यथेष्ट भोजन-वस्तु न मिलने से करोड़ो आदमी जो अनेक प्रकार के कष्ट पा रहे हैं

- -

जून 1924 - सरस्वती

अगस्त 1924 सरस्वती

गली-कूचों में, सब कहीं, धनाभाव के कारण जो कारुणिक क्रन्दन सुनायी पड़ता है। उसके बन्द करने का क्या कोई इलाज नहीं? हर गाँव और हर शहर में जो अस्थि चर्मविशिष्ट मनुष्यों के समूह आते-जाते देख पड़ते हैं उनकी अवस्था उन्नत करने का क्या कोई साधन नहीं? बताइये तो सही, कितने आदमी ऐसे हैं। जिनके मन में इस तरह के प्रश्न उत्पन्न होते हैं।?[1]

इस प्रकार नवजागरण का प्रथम रूप भारतीय निर्धनता का कारण खोजा गया। इस निर्धनता का कारण अँग्रेजी राज माना गया। " इस देश में अँग्रेजों के पधारते ही- उनकी सत्ता का सूत्रपात होते ही- यहाँ की स्थिति में फेरफार शुरू हो गया। यहाँ की सम्पत्ति इंग्लैण्ड गमन करने लगी : हुकूमत के बल पर इस देश के व्यापार की जड़ में कुठाराघात होने लगा।[2]

अँग्रेजों को आने भारत की सम्पूर्ण जमीन पर अँग्रेजी सरकारका कब्जा हो गया। पहले जमीन को जोतने वालों को बहुत से अधिकार प्राप्त थे किन्तु ब्रिटिश सरकार में उनसे ये अधिकार छिन गये।" पुराने जमाने में, हिन्दुस्तान में, जमीन पर राजा का स्वामित्व न था। हर आदमी अपनी जमीन का मालिक था। राजा सिर्फ उसकी जमीन की पैदावार का छठा हिस्सा ले लिया करता था। इस राजा का सिर्फ इतना ही हक था वह एक प्रकार का कर था, जमीन का लगान नहीं।" ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापारियों ने जैसे व्यापार में अपना इजारा कायम किया था, वैसे ही उन्होंने जमीन पर इजारा कायम किया। दोनों तरह के इजारे से पूँजीवादी

1- "सम्पत्ति शास्त्र-महावीर प्रसाद द्विवेदी, भूमिका।
2. सम्पत्ति शास्त्र,- महावीर प्रसाद द्विवेदी।

विकास में बाधा पड़ती थी । अंग्रेज यहाँ की जमीन को अपनी जमीन समझने लगे ।"[1] यहाँ की गवर्नमेण्ट ने जमीन पर अपना दखलकर लिया है । वह कहती है यहाँ की जमीन उसी की है - वही उसकी मालिक है ।" लगान न देने पर किसानों को बेदखल किया जाने लगा।"[2] इस परिवर्तन द्वारा ब्रिटिश विजेताओं की राज्य सत्ता, व्यवहार में, जमीन को आखिरी मालिक बन बैठी और किसान आसामियों के बराबर कर दिये गये, जिन्हें लगान न अदा करने पर बेदखल किया जा सकता था, अथवा उसकी जमीन उनसे छीनकर सरकार के नामजद जमींदारों को दी जा सकती थी, और इन जमींदारों को भी अपना हक राज्य से मिला था, और मालगुजारी न देने पर इन्हें भी वैसे ही बेदखल किया जा सकता था ।" भूमि व्यवस्था के प्रति एक किसान को प्रतिक्रिया एक अंग्रेज से इस प्रकार की ।"[3] साहब, जंगल पेड़, पौधे, नदियाँ, कुएं, सारे गाँव, सभी तीर्थस्थान सरकार के हो गये हैं । उसने सब कुछ ले लिया है, हर चीज ले ली है ।" जमीन पर अंग्रेजों को कर लेना चाहिए किन्तु लगान नहीं इस बात का विरोध तत्कालीन विद्वानों ने किया । किसान को ही जमीन का सच्चा मालिक मानने के पक्ष में थे ।

1• सम्पत्ति शास्त्री , पृ० - 109

2• इण्डिया टुडे, 1947, पृ० - 187

3• लो०सेण्ट्रल इण्डिया ड्यूरिंग द रिबेलियन आफ 1857, एण्ड 1858

जमीन पर अँग्रेजों के इजारे का एक परिणाम हुआ कि ब्रिटिश सरकार ने किसानों से मनमाना लगान वसूल किया। जिसके परिणामस्वरूप धनी किसान भी खाने भर के लिए भी अन्न नहीं बचा पाते थे।[1] आप देहात में जाकर देखिये। 100-50 किसानों में कहीं एकाध आपको ऐसा मिलेगा जिसे रोटी, कपड़े को तकलीफ न हो।"[2] मालावार जिले में तो मालगुजारी 84,85 और 105 फीसदी तक वसूल की जाती थी। किसानों का ही शोषण सबसे ज्यादा होता था। अँग्रेजों की मुख्य आमदनी यहाँ अपना माल बेचकर न होती थी, मुख्य आमदनी होती थी किसानों की मेहनत का फल छीनकर उसका उतना अंश भी उनके लिए न छोड़कर जिससे वे जिन्दा रहते।[3] शायद इसी से 1891 और 1901 के बीच मध्य प्रदेश में कोई दस लाख से भी अधिक आदमी भूखों मर गये।" ब्रिटिश सरकार एक तरफ लगान बढ़ाती थी दूसरी तरफ उसे वसूलने में सख्ती भी करती थी।[4] भारतीय किसानों को लगान बढ़ने के कारण ही कष्ट नहीं। बड़ी कड़ाई से लगान बढ़ाने और वसूल किये जाने से भी उन्हें बहुत कष्ट मिल रहा है।"

1• सम्पत्ति शास्त्र पृ० - 136, महावीर प्रसाद द्विवेदी।
2• वही पृ० - 132
3• वही पृ० - 134
4• ईश्वरदास - अगस्त 1915, सरस्वती।

लगान अदा करने के लिए किसान महाजन से कर्ज लेता है । ये महाजन मनमाना ढंग से ब्याज तय करते थे तथा कड़ाई से वसूल करते थे । इस उगाही में सरकार महाजनों का साथ देती थी । इस प्रकार सूदखोर महाजन वर्ग का जन्म हुआ । लगान बढ़ाने तथा उसे कड़ाई से वसूल करने एवं ऊँचेदर पर कर्ज देने का परिणाम होता था - भुखमरी" ।[1] 1800 से 1825 तक सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत में दस लाख भारत-वासी भूखों मरे ।"

जमीन पर इजारा अंग्रेजों का था । इस इजारे से जो लूट का पैसा मिलता उसमें से थोड़ा सा हिस्सा देकर अपनी मदद के लिए जमींदारों का एक ताबेदार वर्ग तैयार कर लिया था । इस वर्ग के कारण किसानों का उत्पीड़न और भी बढ़ गया । अंग्रेज जो कानून बनाते थे उसमें जमींदार सर्वशक्तिमान होता था । किसान पूरी तरह जमींदार का दास बनकर रहता था । वरना उसका जीना दूभर हो जाता था ।[2] किसानों का सबसे बड़ा मन्त्र अपने जमींदार को प्रसन्न रखना है ।" .... जमींदार को सहानुभूति से किसान पर हर तरह की रियायतें हो सकती हैं, पर थोड़ी सी अकड़ के कारण जमींदार के इशारे से,

---

1• ईश्वर दास, अगस्त 1915 , की सरस्वती पत्रिका में ।

2• गंगाधर पन्त, जून - जुलाई 1918, सरस्वती पत्रिका में ।

किसान की जड़ खोदकर फेंकी जा सकती है ।"

सरकार जमींदार, साहूकार - ये सभी किसान की फसल में हिस्सा बँटाते थे । जो लोग किसानों के व्यवसाय से परिचित हैं उन्हें इस बात को बताने की आवश्यकता नहीं कि किस प्रकार एक ही बार 10 रुपया लेकर बेचारा किसान पुश्त दर पुश्त के लिए साहूकार का गुलाम बन जाता है और ऐसी यंत्रणाएं झेलता है कि मृत्यु की यन्त्रणाएं भी उनके सामने तुच्छ हैं ।" किसानों के सामने समस्या थी यदि अच्छी खेती करते तो लगान बढ़ा दिया जाता यदि अच्छी खेती न हो पाती तो लगान बेबाक हो पाना मुश्किल हो जाता था । कर्ज लेना पड़ता । जिसे अदा करने में किसान के बैल-बछिया खेत सब बिक जाते थे । लोगों को भीख माँगने की नौबत आ जाती थी ।

शाही खर्च, सरकारी अफसरों की तनख्वाह, फौज तथा रेल बनाने इत्यादि का पूरा खर्च किसानों से ही वसूल किया जाता था । इस वसूली का नाम था -होम चार्जेज । जो अधिकारी इंगलैण्ड चले गये थे उनकी भी पेंशन भारत से जाती थी । अँग्रेजों ने सिन्धिया से 1/2 करोड़ तथा होल्कर से 1 करोड़ रुपये का कार्य लिया था तथा जब तक भारत में ब्रिटिश राज्य रहेगा तब तक इनको ब्याज मिलता रहेगा । यह धन किसानों से ही वसूल किया जाता था । नवजागरण का प्रमुख स्वर था - जमीन पर किसान का अधिकार हो ।

अंग्रेजों के आने से पहले भारत प्रमुख निर्यातक देश था । अंग्रेजों का अमेरिका उपनिवेश बन जाने के कारण व्यापार प्रसार में सहायता मिली । ब्रिटेन और यूरोप के व्यापारियों ने पहले विश्व बाजार कायम किया, उसके बाद कारखाने में मशीने चलायी । बाजार न होगा तो मशीनों से उत्पादन किसके लिए होगा । अंग्रेज पहले यहाँ का माल खरीद कर अपने यहाँ बेचते थे किन्तु बाद में मशीनों के प्रयोग से सस्ता माल तैयार करके भारत में बेंचने लगे । भारतीय बाजार को क्षति की । अंग्रेजों ने हिन्दुस्तानी माल पर कड़ा से कड़ा कर लगाकर विलायत में उसकी आमदनी रोकी १ और विलायती माल बिना कर, या बहुत थोड़ा कर लगाकर, हिन्दुस्तान में भर दिया । इसके परिणामस्वरूप भारत का व्यापार मारा गया । अंग्रेजों ने भारत का शोषण दो प्रकार से किया पहला - जमींदारी प्रथा के द्वारा तथा दूसरा पूँजीवादी प्रथा की द्वारा । जिसके अन्तर्गत विलायती माल भारत में बेचते थे । इसीलिए नवजागरण में दो प्रकार के निर्णय सामने आये लगानबन्दी और स्वदेशी आन्दोलन । एक तरफ किसान जमीन के लिए लड़े तथा दूसरी तरफ सारी भारतीय जनता विदेशी माल का बहिष्कार करे ।

अंग्रेजों के व्यापार में कुछ भारतीय भी हिस्सा बँटाते थे। देश में विदेशी

1• सम्पत्ति शास्त्र, - 281,-82, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ।

माल की खपत प्रतिदिन बढ़ती जाती है । उसके बदले हिन्दुस्तान सिर्फ कृषि प्रसूत अनाज देता है । इस अनाज की यहाँ भी बड़ी जरूरत है क्योंकि भारत में बार - बार दुर्भिक्षा पड़ता है । दुर्भिक्षा के समय देश में आवाज अधिक हो तो जरूर ही सस्ते भाव बिके पर वह सात समुन्दर पार इगलैण्ड भेज दिया जाता है और उसे पैदा करने वाले यहाँ भूखों मरते है । और भेजा न जाय तो हो क्या ? इंगलैण्ड की चीजों का खप जो बढ़ रहा है, उसका बदला चुकाया किस तरह जाय।"

इस प्रकार पराधीन भारत में देश की औद्योगिक उन्नति असम्भव सी लगने लगी । इंगलैण्ड की बनी हुई चीजों का भारत में बहुत खपत थी । इंगलैण्ड में बनी हुई चीजों का यहाँ बेहद खप है । हिन्दुस्तान का अधिकांश व्यापार इगलैण्ड की मुट्ठी में है ।•••• सूती ही नहीं ऊँनी भी कपडे, लोहे लकडी और चमडे की चीजे, कागज, स्याही, काँच का सामान, लिखने का सामान, किताबें आदि सैकड़ों चीजों की खप हिन्दुस्तान में है । इनका खप अधिक होने से इंगलैण्ड का व्यापार दिनों दिन उन्नत होता जाता है और मुनाफे का अधिक अंश विदेशी व्यापारियों को ही मिलता है ।[1]"

सन् 1920 के असहयोग आन्दोलन में भारतीय उद्योग धन्धों को विकसित होने का अवसर मिला । भारत के आधुनिक मजदूर वर्ग का जन्म भारतीय संघर्ष के

- -

1• सम्पत्ति शास्त्र, 281, महावीर प्रसाद द्विवेदी ।

कारण हुआ , अपना कच्चा माल ढोने तथा फौजों को ले आने तथा ले जाने के लिए रेलवे विभाग की स्थापना की । यदि भारतीय पूँजीवाद का विकास होता तो भारत को लाभ हो सकता था । मजदूर वर्ग के विकास में भी अंग्रेज राज एक बड़ी बाधा थी । इसलिए मजदूरों का पहला कर्तव्य था - भारत से अंग्रेजी राज का खात्मा ।

17वीं और 18वीं सदी में अंग्रेज व्यापारियों ने विश्व के कई देशों में व्यापार की परम्परा शुरू की । उत्पादन बढ़ाने में आदमियों की आवश्यकता थी । इसलिए अंग्रेजों ने यूनानी और रोमन सौदागरों का अनुसरण किया जो कि गुलामों का व्यापार करते थे । पुर्तगाली इस धन्धे में सबसे आगे थे । गोरों की नस्ल श्रेष्ठ है, इस सिद्धान्त के साथ उसने वह धर्मान्धता जोड़ दी कि ईसाई धर्म सब धर्मों से श्रेष्ठ है । और चूँकि गुलामों के गोरे व्यापारी ईसाई हैं, इसलिए ईसाई धर्म के अनुसार गुलामों का व्यापार करना वैध है । इस नस्लवाद के शिकार अफ्रीकी हब्शी ही नहीं, भारत के आर्य और द्रविड़ भी थे । यही लोग कुली बनाकर दक्षिण अफ्रीका और अन्य देशों में दासों की तरह भेजे गये थे ।[1] गोरे और

- -

1· दिसम्बर 1913, सरस्वती , आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

काले के भेद ने वहाँ जो काण्ड मचा रखा था उसे देखकर गाँधी को बड़ा दुख हुआ । उन्होंने देखा कि उनके देशवासी गोरों की बस्ती में नहीं रहने पाते, उनके पास बाजारों में दुकाने नहीं खोलने पाते, होटलों और रेलों में उनके साथ नहीं बैठने पाते । पशुवत् समझे जाकर उन पर नाना प्रकार के अत्याचार होते हैं । कैदियों के समान उन्हें अंगूठे का चिन्ह लगाना पड़ता है, गले में नम्बर लटकाना पड़ता है, 45 रूपये साल, नटाल प्रान्त में रहने के लिए टैक्स देना पड़ता है । जो लोग ठेके पर कुली बनकर वहाँ जाते हैं और खेतों और खानों में काम करते हैं उनकी दुर्गति का तो पारावार नहीं ।"

इस रंग भेद नीति के खिलाफ गाँधी जी ने आन्दोलन चलाया । वहाँ की तथा विलायत की अँग्रेजी गवर्नमेण्ट से सब कुछ कहा गया, पर कुछ फल न हुआ । तब लाचार होकर गाँधी और उनके साथियों तथा हजारों अनुयायियों को फिर निष्क्रिय प्रतिरोध करना पड़ा । इस समय गाँधी, उनकी स्त्री, उनकी लड़की , उनका लड़का- सारा कुटुम्ब ही जेल में है । हजारों हिन्दुस्तानियों से जेल भर गये हैं । खानों के अहाते जेलों में परिवर्तित कर दिये गये हैं । वहाँ कैदियों को पेट भर खाने को नहीं मिलता । सुनते हैं, उन पर हन्टरों की मार पड़ती है, इस मार से एक आध आदमी मर भी गया है । तिस पर भी वे लोग वीरता से अनुचित कानून का प्रतिरोध करते ही चले आ रहे हैं । हड़तालें हो रही हैं, भारतीय मजदूर काम छोड़ रहे हैं । सारी यातनाएं सहने को वे

को वे तैयार हैं । पर आत्म गौरव को वे नहीं छोड़ना चाहते । अन्यायपूर्ण कानून गोरे- काले का कृत्रिम भेद - मानना उन्हें स्वीकार नहीं । बूढ़े और जवान स्त्रियाँ और बच्चे तक उनका साथ दे रहे हैं । वे भी जेल में है । धन्य गाँधी , धन्य तुम्हारे साथी, धन्य तुम्हारे अनुयायी, धन्य तुम्हारा स्वाभिमान, भारत में इस समय दक्षिणी अफ्रीका के इस अन्याय की बड़े जोर शोर से चर्चा हो रही है । वहाँ के पीड़ित देश - भाइयों के लिए चन्दे हो रहे हैं । उनकी मदद करना हमारा कर्तव्य है । नस्लवाद का विरोध नवजागरण का प्रमुख अंग रहा । इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारत की स्वतन्त्रता की लड़ाई अफ्रीका से ही शुरू हुई इसी समय 1913 में रवीन्द्रनाथ ठाकुर को साहित्य के क्षेत्र में नोबुल पुरस्कार मिला इससे भारतीय जनता में आत्म सम्मान की भावना तेज हुई । जो कुली दक्षिणी अफ्रीका में जाकर बस गये थे उन्होंने ही वहाँ पर हिन्दी भाषा का प्रचार किया। 1915 में दक्षिण अफ्रीका के बर्नमाइड नगर में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का वार्षिक अधिवेशन हुआ । इसके अतिरिक्त ब्रिटिश के गायना प्रान्त में भी हिन्दी का प्रचार हुआ । दक्षिणी अफ्रीका और गायना के मजदूरों ने हिन्दी को आत्म गौरव का प्रतीक माना ।

1• सरस्वती , 1913

इस प्रकार हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय प्रसार हिन्दी प्रदेश के मजदूरों ने किया। मारीशस भी भारत के दास भेजे जाते थे। हिन्दुस्तानी दलाल गरीब अबलाओं को कलकत्ते फुसलाकर ले जाते थे। फिर वहाँ से लोभ देकर मारीशस भेज दिये जाते थे।[1] जिस अपमान के साथ हिन्दुस्तानी पुरुष और स्त्रियाँ 1834 से मारीशस में लायी जाती है, ,उसका पूरी तरह से वर्णन करना मेरे लिए असम्भव है।" इस समय मारीशस में फ्रान्सीसियों का शासन था। अमेरिका में भी भारत-वासियों के साथ सौतेला व्यवहार हो रहा था। गोरे साम्राज्यवादी एशिया वासियों को निम्न पूंजी के मनुष्य कहकर उनसे घृणा करते थे। व कहते थे, जहाँ हमारा राज्य नहीं, वहाँ आधुनिक सभ्यता का विकास नहीं हुआ।

जापान और भारत का बहुत पुराना सम्बन्ध हैं। जापान अंग्रेजों की सहायता के बिना भी विकास कर रहा था, शिल्प, वाणिज्य, विज्ञान और युद्ध कला में जापान की बराबरी एशिया खण्ड में कोई भी देश नहीं कर सकता था। विदेशियों के प्रभुत्व से बचने के लिए जापान ने तय किया कि जिन बातों से ये विदेशी उससे बढ़े हुए हैं, उन्हें सीखना चाहिए।[2] यह निश्चय करके जापान ने जाति- भेद को उठा दिया। सामाजिक दृष्टि से किसान और प्रधानमंत्री एक

- -

1• जनवरी 1911, "मर्यादा" हिन्दुस्तानी स्त्रियों की मारीशस में सोचनीय दशा

2• डॉ0 राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण, पृ0-48

हो गये । सब जापानी एक सूत्र में बंध गये । परस्पर शादी विवाह होने लगे।" इससे भारतीयों ने महसूस किया कि इसी परम्परा के अनुसरण के द्वारा ही यूरोपीय का मुकाबला किया जा सकता है । मुट्ठी भर योरोपीय व्यापारी बड़े-बड़े महाद्वीपों पर अपनी वैज्ञानिक श्रेष्ठता के कारण अधिकार स्थापित किये थे अत: विज्ञान की राष्ट्रीय शिक्षा भी नवजागरण की विशिष्टता बनी । भारतवासी यूरोप की ओर हमेशा नजर डाले रहते थे । कि कौन देश यूरोप से हार रहा है। और कौन जीत रहा है इस हार और जीत के क्या कारण हैं । जापान देश ने अपने विकास का मार्ग स्वयं खोजा । इसी का अनुसरण भारतवासियों ने भी शुरू किया । देश भक्ति, विज्ञान और स्वाधीनता की शिक्षा भारत ने जापानियों से ग्रहण की । जापानियों और भारतीयों का सम्बन्ध बौद्ध धर्म के प्रचार - प्रसार के कारण था । जापानीयों तथा हिन्दुस्तानियों की समानता तथा असमानता का पता आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के एक निबन्ध से लगता है " जापानियों के बराबर देश भक्त और कोई पृथ्वी की पीठ पर नहीं है ।

देश भक्ति से प्रेरित होकर विद्या और विज्ञान के बल पर वे असम्भव को सम्भव कर दिखाते हैं । जापान भी एशिया में है । हिन्दुस्तान भी एशिया में है । अधिकांश जापानी बौद्ध हैं और बौद्ध मत के प्रवर्तक की जमीन हिन्दुस्तान ही है । प्राय: हिन्दुस्तानियों की तरह जापानी भी ठिगने होते हैं । जापानियों और हिन्दुस्तानियों के रूप में, रंग में भी कुछ साम्य है । हिन्दुस्तानियों के

समान जापानी भी निरूपद्रवी, सहनशील , परोपकारी, दयालु, माता-पिता के भक्त और सरल स्वभाव के हैं । परन्तु दोनों में असमानता भी है । जापानी स्वाधीन हैं, हिन्दुस्तानी पराधीन । जापानी देश भक्त हैं, हिन्दुस्तानी देश भक्त नहीं । जापान में एकता है, हिन्दुस्तानियों में एकता का अभाव है । वैज्ञानिक शिक्षा के लिए सात समुद्र पार जाना जापानी लोग अपने और अपने देश के लिए गौरव समझते हैं, पर समुद्र पार जाना हिन्दुस्तानियों के लिए पाप है, क्योंकि उनका धर्म जाता रहता है । जापान में जाति-भेद का बहुत ही कम विचार है हिन्दुस्तान में जाति-भेद का सबसे अधिक विचार है। जापान में सब लोग परस्पर शादी विवाह करते है, हिन्दुस्तान में अपने वर्ग में भी शादी करने में अनेक झंझट पैदा होते है। जापान में छुआछूत नहीं, हिन्दुस्तान में इसकी पराकाष्ठा है। ये बाते विचार करने लायक हैं पर विचार करने वालों ही को यहां कमी है। विचार करे कौन? "

इस प्रकार भारतीय नवजागरण पर जापान का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा । जापानियों की प्रेरणा से वैज्ञानिक शिक्षा के प्रति सजगता बढ़ी । किन्तु इस वैज्ञानिक शिक्षा से भारत तभी लाभ ले सकता है जब वह अपनी पुरानी समाज व्यवस्था बदले, अपने अन्ध विश्वासों और रूढ़ियों से स्वयं को मुक्त करे। जब तक भारतीय समाज में पुरानी वर्ण-व्यवस्था, जाति-बिरादरी का भेद-भाव छुआछूत आदि कुरीतियां बनी हुई है, तब तक भारत प्रगतिशील आधुनिक राष्ट्र नहीं बन सकता । चीन समाचार

पत्रों का जनक है । ये किन गजट "दुनिया के सब पत्रों में पुराना है ।" भारत में अब्सर विद्रोह के बाद से चीनी पत्रकारिता का प्रभाव भारत पर पड़ा ।

भारत से जो लोग विदेश जाते थे वे अधिकतर बैरिस्टरी सीखने जाते थे यानी अंग्रेजों की न्याय-व्यवस्था का अंग बनकर मुकदमें बाजी में बुद्धि का चमत्कार दिखाकर पैसा कमाना उनका लक्ष्य था । ऐसे व्यवसाय, जिनसे देश का भला हो, सीखने की ओर उनका ध्यान नहीं था । देश की भलाई के लिए विदेश गमन जापान और चीन के छात्र करते थे ।

चीन में स्त्रियाँ पराधीन थीं । विवाह कन्या की इच्छानुसार नहीं होता था । बहु - विवाह की राक्षसी प्रथा वहाँ भी प्रचलित थी । पति के मरने पर स्त्रियाँ सती हो जाती थीं । सुन्दरता बढ़ाने के लिए लड़कियों के पैर छोटे किये जाते थे । किन्तु नये प्रगतिशील विचारों के कारण परिस्थितियाँ बदल गयीं । चीन में भी वर्ण व्यवस्था और जाति प्रथा थी । चीन के सामाजिक आन्दोलनों और शिक्षा का माध्यम चीनी था ।

रूसी क्रान्ति स्वाधीनता आन्दोलनों की अगली कड़ी थी ।[1] संसार के इतिहास में इतने बड़े परिवर्तन के समान आज पर्यन्त कोई परिवर्तन नहीं हुआ ।

1• अप्रैल 1917, मर्यादा ।

प्रजाशक्ति की महिमा इसी से प्रकट होती है कि खून- खराबा भी नाम मात्र को हुआ और परिवर्तन कुछ घण्टों में ही हो गया । हम संसार को और विशेष कर रूस जाति को इस परिवर्तन का फल चखेगी ही किन्तु उसके साथ ही संसार के इतिहास और उसमें बसने वाली जातियों पर भी इसका प्रभाव पड़ेगा ।"

रूस की आर्थिक स्थिति का सभी भारतवासियों ने खूब स्वागत किया।" अब एक सभ्यता का सूर्य सुदूर पश्चिम से उदय हो रहा है । जिसने इस नारकीय महाजनवाद या पूँजीवाद को जड़ खोदकर फेंक दी है।"[1]

रूस में समाजवादी क्रान्ति हो गयी । पिछड़ा हुआ रूस विश्व की एक प्रमुख शक्ति बन गया । क्या भारत में भी किसानों और मजदूरों के संगठन से कुछ किया जा सकता है ? "[2] उधर रूस को देखिये । वह बहुत बड़ा देश है । कई वर्ष पूर्व वहाँ के जार नामधारी राजेश्वर का आतंक वहीं नहीं, भूमण्डल के अन्यान्य देशों में भी छाया हुआ था । उन्हीं सर्वशक्तिमान सत्ताधीश की सत्ता ही का नहीं, उनके वंश तक का नामोनिशान मिटाकर, रूस के किसान और सैनिक अब स्वयं ही वहाँ का शासन कर रहे हैं । यह सारी करामात संगठन की है । वहाँ के किसान और सैनिक आपस में गठ गये । उन्होंने कहा, जो जुल्म हम पर हो रहे हैं उनका एक मात्र कारण वहाँ की बिगड़ी हुई शासन व्यवस्था

1• सितम्बर 1936• हंस, " महाजनी सभ्यता " प्रेमचन्द ।

2• 1924, लेखाञ्जलि - 168-169- महावीर प्रसाद द्विवेदी।

है । उसे तोड़ देना चाहिए । यह निश्चय करके उन्होंने अपना ऐसा संगठन किया। जिसकी बदौलत उनका साध्य सिद्ध हो गया ।"

विदेश में मजदूरों के संगठन की क्या हालत है, अपनी माँगों को लेकर मजदूर कैसे संघर्ष कर रहे हैं, पूँजी और श्रम के द्वन्द को हल करने के लिए किस तरह के प्रयास किये गये हैं, इन बातों की ओर भारतीय साहित्यकारों का ध्यान शुरू से ही था । भारत में मजदूर वर्ग आकार में अभी बहुत छोटा था । अधिकतर वह सरकारी प्रतिष्ठानों में काम करता था ऐसे कारखानों में काम करता था जिसमें अधिकतर विदेशी पूँजी लगी हुई थी । आकार में छोटा होने पर भी, असंगठित रहने पर और किसी क्रान्तिकारी पार्टी के अभाव में भी उसने तब भी अपने जुझारूपन का परिचय दे दिया था । 20वीं शदी के आरम्भ में वह अनेक हड़तालें कर चुका था । ये हड़तालें सीधे अंग्रेजी राज के विरूद्ध मजदूरों का संघर्ष थीं । " जी0आई0पी0 रेलवे और सरकारी तारघरों के तार - वालों का हड़ताल, बम्बई के चिट्ठीरसों का हड़ताल, जमालपुर के रेलवे कारखानों के कारीगरों का हड़ताल ई0आई0 रेलवे के ड्राइवरों और गार्डों का हड़ताल और कलकत्ते के मेहतरों का हड़ताल अभी बहुत दिन की बात नहीं है ।"

व्यवसाय करने वाले व्यवसायी Trades Unions के माध्यम से संगठित हो रहे थे पर मजदूरों के संगठन नहीं थे । फ्रान्स, जर्मनी, इंगलैण्ड और

- -

1• सम्पत्ति शास्त्र-202, महावीर प्रसाद द्विवेदी ।

अमरीका का हवाला देते हुए महावीर प्रसाद द्विवेदी ने बताया कि भारत में भी व्यापार समितियों का होना आवश्यक है। वहाँ लोहे, लकड़ी, चमड़े, कोयले, कपड़े आदि के व्यवसायों में लगे हुए श्रम जीवियों ने अपनी - अपनी समितियाँ बना रखी हैं।"

जब मजदूरों को दिन भर श्रम करने के बाद भी पेट भर भोजन नहीं मिलता तो ये हड़तालें करते हैं। कुछ- कुछ हड़तालों की निन्दा करते हैं और मजदूरों पर दोष लगाते है। हड़तालों से कारखानों वालों और मजदूरों, दोनों को नुकसान होता है। यूनियन (समाज) की स्थापना से मजदूरों को दो लाभ होते हैं। पहिला यह कि आपत्ति काल में समाज द्वारा उन लोगों की सहायता की जाती है, जिनको कारखानों के मालिक काम पर से अलग कर देते हैं। दूसरा यह कि जिस कारखाने में वे काम करते हैं वहाँ उनको अधिक तनख्वाह दिलाने या काम के घण्टे घटाने का उद्योग किया जाता है। और जब - जब मौका आता है तब - तब मण्डली अर्थात् समाज के प्रबन्ध कर्ता अपने सभासदों की ओर से कारखाने वालों के साथ पत्र व्यवहार आदि करके झगड़ों का तसफिया कर लेते हैं। मण्डली के नियमानुसार प्रत्येक मजदूर को जो सभासद होता है, हर महीने कुछ चन्दा देना पड़ता है।

1· उप० - 21

भारत में सभी कारखाने सरकार की मदद से बनाये जाते हैं इसलिए कारखानों के प्रति विद्रोह का अर्थ है । सरकार से सीधे संघर्ष । सारे मजदूर इसी मालिक की देख रेख में काम करते हैं । ये मजदूर पेट भर भोजन के लिए दावा करते हैं पर राज्य सत्ता उनका दावा मंजूर नहीं करती । तब इसके बाद एक ही बात हो सकती है कि जनता के अन्य वर्गों के साथ मिलकर मजदूर भी स्वाधीनता के लिए संघर्ष करे । जैसे जमीन के लिए किसान की लडाई आजादी की लडाई की अंग बन जाती है । वैसे ही रोजी - रोटी के लिए मजदूरों का संघर्ष स्वाधीनता संग्राम का अंग बन जाता है । स्वदेशी आन्दोलन पूरी ताकत से चले इनके लिए जरूरी था कि मजदूर वर्ग अंग्रेजों के विरुद्ध, हडतालों के माध्यम से, संघर्ष करें । हिन्दी लेखक स्वाधीनता आन्दोलन की सफलता के लिए समझने लगे कि किसानों और मजदूरों का संगठन और उनका संघर्ष आवश्यक है । "[1]

भारतीय किसानों की वास्तविक स्थिति इस प्रकार थी। एक तरफ झोपडे में रहने वाला एक किसान मैं अपने बाल - बच्चों के, दो रोज से फाके कर रहा है और दूसरी ओर एक अमीर ऐय्याश अपने महलों में शराब के प्याले उडा रहा है । एक मनुष्य माघ- पूस के जाडों में ठिठरा हुआ राम - राम करके रात काट देता है, और दूसरी मखमली गद्दे पर सोया हुआ स्वर्ग का सुख भोग रहा है।

---

1. डॉ॰ राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण पृ० - 8।

हिन्दी में श्रमिक जनता की वर्ग चेतना के अभ्युदय का यह प्राथमिक रूप था । 1936 के बाद के प्रगतिशील साहित्य में यह बातें विशेष रूप से कही गयी ।

यूरूप और अमरीका के मजदूर संगठित हो रहे हैं, वे अपनी दशा के लिए पूर्व जन्म या ईश्वर को जिम्मेदार नहीं मानते, वे इस दशा का कारण पूँजीवाद को मानते हैं , भारतीय लेखक यह सब देख रहे थे । हिन्दुस्तान के किसान और मजदूर जब तक पूर्व कर्म और भाग्य के भरोसे बैठे रहेंगे , तब तक उनकी गरीबी दूर न होगी । पुरानी व्यवस्था में जो जितना ही काम चोर था, उतना ही इज्जत वाला समझा जाता था । अब नयी सामाजिक चेतना के प्रसार के साथ साथ सामाजिक मूल्य बदल रहे हैं, इज्जत -आबरू के पैमाने बदल रहे है ।

अमीर लोग गरीबों का दुख भला क्यों समझेंगे ? उन्हें कभी पेट की आग नहीसताती । पर मध्य वर्ग के लोग जानते हैं कि गरीबी क्या होती है । इसलिए उन्हें किसानों और मजदूरों से सहानुभूति होती है और वे देश की उन्नति और समाज को सुधारने के कार्यों में अगुवाई करते है ।"

देश की उन्नति किसके लिए, समाज सुधार किसके लिए, शिक्षा किसके

- -

1· जून, 1914 - सरस्वती, हमारे गरीब किसान और मजदूर , जनार्दन भट्ट ।

लिए इन तथ्यों पर विशेष रूप से बल दिया गया । अंग्रेजी राज में कुछ कौंसिलें बनायी गयी थीं । जिनमें किसानों के प्रतिनिधि बनकर ऐसे लोग जाते थे जिनका किसानों से कुछ भी सम्बन्ध न था । साहित्यकारों को इन कौंसिलों और इनमें जाने वाले सदस्यों से काफी असन्तोष था । किसान संगठन की रूपरेखा"[1] संगठन का प्रधान दफ्तर इलाहाबाद में रहे । उसके अधीन हर जिले के सदर मुकाम में ही एक एक दफ्तर रहे । इसके सिवा हर जिले की हर तहसील में एक एक छोटा दफ्तर खोला जाय । फिर हर तहसील में एक - एक छोटा दफ्तर खोला जाय । फिर हर तहसील के समुचित विभाग करके प्रत्येक विभाग का एक एक उपदेशक या एजेण्ट को बाँट दिया जाय । वह देहात में बराबर दौरा करता रहे । बाजारों, मेलों, और बडे - बडे गाँवों में वह व्याख्यान देकर संगठन के लाभ बतावें और किसानों को क्या करना चाहिए इस बात की सलाह दे जब वह देखे कि किसान संगठन का लाभ समझ गये हैं तब छोटे - छोटे कई गाँवों को मिलाकर किसी खास गाँव में, जहाँ कुछ पढ़े - लिखे और समझदार किसान रहते हों एक एक किसान सभा खोल दे और सभा को उसके कर्तव्य बतला दे । ये देहाती सभाएं तहसील की सभा से सम्बद्ध रहे और तहसील की सभाएं जिले की सभा से जिलों की सभाएं इलाहाबाद की प्रधान सभा से सम्मिलित रहेगा हो ।"

- -

1• लेखाञ्जलि - पृ0 - 179-80, महावीर प्रसाद द्विवेदी ।

किसान और मजदूर दो ऐसी शक्तियाँ हैं जो अंग्रेजों के खिलाफ सशक्त रूप से लड़ सकती हैं। किसान लगानबन्दी के द्वारा मजदूर हड़ताल के द्वारा। जमीन का असली मालिक किसान था लेकिन अंग्रेजों ने जो श्रृंखला तैयार की थी उसमें उसे कोई अधिकार नहीं दिया गया था। अधिकांश देश में जमीन के ठेकेदार राजे, महाराजे, तअल्लुकेदार और जमींदार है। गवर्नमेण्ट ने जमीन उन्हीं को दे रखी है। बदले में वह उनसे माल गुजारी लेती है। ये ठेकेदार मनमाने लगान पर जमीन को दूसरों को बोने - जोतने के लिए देते हैं। लगान बन्दी और हड़तालों को स्वाधीनता आन्दोलन से जोड़ा गया।[1]

श्रम जीवी तथा कृषकों का संगठन करके उनको जमींदारों तथा रईसों के अत्याचारों से बचाये।" प्रताप" सम्पादक गणेश शंकर विद्यार्थी ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम के समाजवादी विचारों को छापता था।[2]

भारत के नवजागरण में फ्रान्स तथा रूस की राज्य क्रान्तियों का प्रभाव पड़ा। इस समय लिखे गये लेखों में कहा गया - अन्य देशों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं, प्राचीन संस्कृति पर गर्व करने वाले भारत में भी यह सब हो सकता है।

- -

1· जुलाई 1915, सरस्वती, महावीर प्रसाद द्विवेदी।

2· उप0 पृ0- 923, बिस्मिल।

अंग्रेजी राज में नवीन नवजागरण के लिए लेखन की स्वतन्त्रता सर्वप्रमुख है। अंग्रेज राज का दमनकारी रूप लेखन की स्वतन्त्रता के कारण प्रकाशित किया गया। इसके लिए जहाँ - जहाँ अंग्रेजों की प्रशंसा भी की गयी। हाथ में वफादारी का झण्डा उठाये बिना अंग्रेजी राज की असलियत बयान करना सम्भव नहीं था, लेखन की स्वाधीनता साम्राज्य विरोधी चेतना के प्रसार के लिए ही आवश्यक नहीं था।

रूढ़ियों और अंध- विश्वासों से मुक्ति पाने और वैज्ञानिक चिन्तन के प्रसार के लिए भी यह आवश्यक थी। सरकारी प्रेस की स्वाधीनता पर जो पाबन्दियां लगाती हो, वह इसलिए कि विरोधी लोग उसकी व्यर्थ निन्दा करते हैं इस तरह स्वाधीनता का दुरूपयोग करते हैं, भारतीय लेखक ब्रिटिश साम्राज्यवाद के ही विरोधी नहीं थे अपितु पूँजीवादी व्यवस्था के भी विरोधी थे। इसीलिए उन्होंने अंग्रेजों की आर्थिक नीतियों का भी विरोध किया --------------। उनका साम्राज्य विरोधिनी चेतना उन्हें मजदूरों और किसानों के संगठन के बारे में सोचने की प्रेरणा देती है। वह केवल अपने देश की स्वाधीनता के बारे में नहीं सोचते विश्व साम्राज्यवादी व्यवस्था के बारे में सोचते हैं। जहाँ - जहाँ नवजागरण के चिन्ह दिखायी देते हैं, उनका स्वागत करते हैं। इस प्रकार वह जनता और

अन्तर्राष्ट्रीय चेतना का प्रसार करते हैं।

नवजागरण पर वेदान्त दर्शन का भी अत्यधिक प्रभाव पड़ा। यह दर्शन ब्रह्म को सर्वव्यापी बताकर सामाजिक विषमताओं को असत्य और भ्रम सिद्ध करता है। किन्तु इसके साथ ही एक अन्य विचारधारा भी समाज में व्याप्त थी जो संसार को मिथ्या या सार नहीं मानती थी। वर्णव्यवस्था तथा पुरोहित वर्ग की तीखी आलोचना करती थी। भारत में जितने समाज सुधारक हुए, जितने सन्त और भक्त महाकवि हुए, उनकी मानवतावादी वाणी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में, वैदिक कर्मकाण्ड की आलोचना को दोहराती है।

जिस देश में सामन्ती अवशेष बहुत दृढ़ हो, जहाँ वर्ण- व्यवस्था संसार में सबसे पुरानी हो और कट्टर रूप में हो, वहाँ वैज्ञानिक चिन्तन का प्रसार बहुत कम पढ़े - लिखे लोगों में थी तो अन्ध विश्वास ज्यादा था। जैसे - जैसे ये जन - साधारण संगठित होकर समाज व्यवस्था का निर्माण करते हैं, वैसे - वैसे परोक्ष शक्ति पर उनका विश्वास मिटता जाता है। वे अपने अनुभव से अन्ध विश्वास मिटाते चलते हैं।

" भारतीय विवेक परम्परा और आधुनिक विज्ञान " अंग्रेजों ने भारतीय रीति - नीति की अधिक जानकारी के लिए संस्कृत का अध्ययन प्रारम्भ किया। अनेक जज भी संस्कृत भाषा का ज्ञान प्राप्त किये। विलियम जोन्स जो कि जज थे

उन्होंने मनुस्मृति का अनुवाद भी किया " भारतवासियों को अपने धर्मशास्त्र के अनुसार न्याय कराने में तब से बहुत सुभीता हो गया ।" शकुन्तला नाटक का भी अनुवाद किया गया । इस नाटक के अनुवाद से भारतीय जनता की स्थिति अंग्रेजों की नजर में बहुत अच्छी साबित हुई ।" शकुन्तला वह चीज है जिसकी कृपा से भारतवासी हैवान से इन्सान समझे जाने लगे, पशु से मनुष्य माने जाने लगे ।[1]

इसके बाद पराधीन भारत से सैकड़ों ग्रन्थ यूरोप वाले यहाँ से अपने यहाँ से अपने यहाँ को ले गये । डार्विन की विचारधारा ने ही सारी दुनिया में धार्मिक अन्धविश्वासों की जड़े हिला दी थीं । श्याम जी कृष्ण वर्मा भारत के प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से एम०ए० की पदवी पाई थी ।

19वीं शताब्दी के अन्त में हिन्दी प्रदेश में जो नवजागरण आरम्भ हुआ, वह अन्य प्रदेशों के नवजागरण से कई बातों में भिन्न है । वह रहस्यवाद और तर्क-विरोधी पुनरुत्थानवाद का समर्थक नहीं है । वह प्राचीन संस्कृति पर गर्व करना सिखाता है । किन्तु उसके विवेकपूर्ण पुनर्मूल्यांकन पर जोर देता है ।[2]

1• सरस्वती - 1909

2• डा० राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण 143 ।

रूढ़ियाँ अध्यात्मवादियों में ही नहीं, भौतिकवादियों में भी होती हैं। जैसे पहले लोग वेद और धर्मशास्त्र की दुहाई देते थे, वैसे ही भारत के अनेक भौतिकवादी नेता मार्क्स और लेनिन के वाक्यों को पूजा करते हैं। इनमें भी मार्क्स से भले ही गल्ती हो जाय, लेनिन सभी प्रकार की गलतियों से परे माने गये हैं। जो लोग स्तालिन की व्यक्ति पूजा की सबसे अधिक निन्दा करते हैं, वे मार्क्स और लेनिन की व्यक्ति पूजा ही नहीं करते, उनके शब्दों को प्रमाण मानकर मूल पूजा भी करते हैं। "

" समय का प्रवाह अनिवार्य है किन्तु रूढ़ियाँ अपने आप नष्ट नहीं हो जातीं। आधुनिक विज्ञान की प्रगति अंग्रेजी राज के अन्तर्गत हो रही थी। यह यह राज निरन्तर प्रयत्न करता था कि भारतीय जनता अपनी यथार्थ स्थिति को न पहचानने अपनी "अध्यात्मवादी" संस्कृति पर गर्व करती रहे और अंग्रेजों को अपना शोषण करने देती रहे। इस स्थिति में सामान्य शिक्षित जनों के बीच वैज्ञानिक दृष्टि का प्रसार अत्यन्त कठिन कार्य था। जैसे - जैसे पूंजीवादी व्यवस्था अधिकाधिक संकट ग्रस्त होने लगी, वैसे वैसे कौशल में उन्नति करने पर भी ज्ञान का विकास प्रायः अवरूद्ध हो गया। इसलिए हिन्दी प्रदेश की नवजागरण प्रक्रिया अधूरी

1· डॉ० राम विलास शर्मा, - महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण पृ० - 149

उसे पूरा करना बाकी है। " मनुष्य के लिए स्वाधीन चिन्तन और स्वाधीन भाषण का अभाव सबसे बड़ी विपत्ति है। [1] यदि कोई सच्चा पुरुष अपने चारों ओर मनुष्यों को झूठे विश्वासों और आचरणों में फँसा हुआ देखता है, तो वह उन्हें इस अन्धकार से निकालने का प्रयत्न अवश्य करेगा। निर्भय विचार - प्रकाशन के लिए सुकरात और ईसा शहीद हो गये थे। विचार - स्वाधीनता के लिए भाषण - स्वाधीनतादरकार होती है। मन में बहुत कुछ सोचकर चुप रह जाने से कोई लाभ नहीं।"

आलस्य, भय, अन्धविश्वास और स्वार्थ मनुष्य के स्वतन्त्र चिन्तन में, नये विचारों को ग्रहण करने में, बाधक होते हैं। रूढ़िवादी समाजों में " नये विचार खतरनाक समझे जाते हैं और वह मनुष्य बड़ा भयानक समझा जाता है जो पुराने और बहुमूल्य विचारों और सिद्धान्तों पर सन्देह करता है और उनके खिलाफ अपनी आवरण उठाता है।" घटना एक तरह की रूढ़िवादी धारणाथी कि प्राचीन भारत केवल अध्यात्मवादी था। जहाँ भौतिक संसार और विज्ञान की बात आयी कि रूढ़िवादियों ने पाश्चात्य संस्कृति को कोसना शुरू किया। [1]

सच पूछो तो हिन्दुस्तान की अधोगति का एक हेतु हमारा धर्म या मजहब भी हो रहा है, जिससे हम ऐसे जकड़ लिये गये हैं कि आगे को पैर फैला ही नहीं सकते। हमारे पण्डित लोग जो निरे भोंदू दास बने रहते हैं देश काल को कुछ नहीं

1· डा० राम विलासशर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी, और हिन्दी नवजागरण पृ0-150
2· वही

समझते । उसका कारण भी यही है कि जन्म भर संस्कृत के और कुछ उन्होंने पढ़ा ही नहीं, अटल विश्वास जमा है कि जो कुछ है सो सब हमारे वेद और संस्कृत हैं इसलिए हम सर्वज्ञ हैं । आधुनिक सभ्यता की बातें सुन कोवाते हैं कि यह तो हमारी पोथियों में हुई नहीं, यह सब मिथ्या है ।"

हिन्दी साहित्य की मुख्य धारा यथार्थ जगत की ओर उन्मुख है, वह धार्मिक अन्ध विश्वासों का खण्ड करने वाली है, कहीं उग्र स्वर में, कहीं नर्म स्वर में, कहीं सुसंगत रूप से, कहीं अन्तर्विरोधों के साथ पर जिसे आज धर्म निरपेक्षता कहा जाता है, उससे यह विचारधारा बहुत अधिक प्रगतिशील है वह धार्मिक रूढ़ियों और अन्ध विश्वासों से तटस्थ नहीं रहती , छिपकर उनका राजनीतिक उपयोग नहीं करती, वरन् सक्रिय रूप से उनका खण्डन करती है ।"

सतयुग सम्बन्धी धारणाएं विभिन्न रूपों में अनेक देशों में प्रचलित रही है। इसका एक सामाजिक कारण है । गण समाज वर्ग हीन होता है, वहाँ व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं, राज्य सत्ता द्वारा एक वर्ग का दूसरे वर्ग पर शासन नहीं सब भाग मिलकर श्रम करते हैं और अपना अपना भाग पाते हैं । सामन्ती व्यवस्था में व्यक्ति-गत सम्पत्ति है । श्रम विभाजन है, धनी और दरिद्र का भेद है, वर्ण व्यवस्था है, दण्ड विधान है, स्वर्ग और नरक है । इस व्यवस्था को देखकर जनसमुदाय पुराने

---

1. महावीर प्रसाद द्विवेदी, सरस्वती ।

गण - समाज के दिनों को याद करता है । वे दिन सचमुच उसे आदर्श सुख और मनुष्य की पवित्रता के दिन जान पड़ते हैं । व्यवस्था के खिलाफ उसने चीं-चपड़ की तो इस जन्म में ही नहीं, अगले जन्म में भी उसे पूर्व कर्मों का फल मिलेगा ।

सही प्रश्न प्रस्तुत करना स्वयं में एक उपलब्धि है । ऐसे प्रश्न प्रस्तुत करने का अर्थ है पुराने इतिहास लेखन की आलोचना करना । इस आलोचना का अर्थ है नये इतिहास लेखन की जमीन तैयार करना । जैसे - जैसे इस देश में गांधी वाद का प्रभाव बढ़ा, वैसे - वैसे बुद्धिवाद, स्वतन्त्र और निर्भीक चिन्तन, धार्मिक और सामाजिक रूढ़ियों की आलोचना मन्द पड़ती गयी । अंग्रेज कहते थे, हिन्दुस्तान के लोग आपस में एका कर लें, हम उन्हें सारे अधिकार देकर वापस चले जायेंगे । इसलिए भारत के नेताओं ने कहा, सभी धर्म अच्छे हैं, अछूतो द्धार तो होना चाहिए लेकिन मन्दिर भी रहेंगे, पुजारी भी रहेंगे , वर्ग हीन समाज अच्छा है, उसमें पूंजी-पति भी रहेंगे , भूस्वामी भी रहेंगे केवल वे अब जनता के ट्रस्टी बन जायेंगे । देश में ऐसे नेताओं और धर्माचार्यों की कमी नहीं जो इन व्याधियों को व्यक्तिगत प्रयत्न से दूर करने पर जोर देते हैं ।

भारतीय समाज के आधुनिक समाज बनने में यहाँ सबसे बड़ी बाधा जाति-प्रथा रही है । सैकड़ों जातियां, उपजातियों, ने अपने संघ बनाये हैं और इनके

1· डा0 राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण-159
2· वही 1, 160

चौधरी जनतन्त्र के मुख्य आधार बन जाते हैं। पढ़े - लिखे लोगों में अपढ़ जनता से कुछ अधिक ही जाति विरादरी वाली संकीर्णता मौजूद है।

इस देश में सामन्ती अवशेष इतने सुदृढ़ हैं, सामाजिक आधार के नष्ट हो जाने पर भी उनके संस्कार लोकमानस में ऐसे गहरे जमे हुए हैं कि पढ़े - लिखे लोग बड़ी उदारपंथी बातें करते के बावजूद उनसे उबर नहीं पाते। बडे - बड़े शिक्षा केन्द्र जाति - बिरादरी के आधार पर निहायत गंदी और संकीर्ण गुटबन्दियों के केन्द्र बन गये हैं। साठ साल पहले यह कहने का साहस बहुत कम लोगोंमें था कि हमारी सारी सामाजिक कुरीतियों की जड़ वर्ण - व्यवस्था है।

चाहे समाज शास्त्र हो, चाहे साहित्य और भाषा विज्ञान, इस देश के विश्वविद्यालय नयी विचारधारा के, नये सामाजिक सांस्कृतिक आन्दोलनों के केन्द्र नहीं बने। इसका मुख्य कारण यह है कि शास्त्र से जनता के व्यवहार को नहीं जोडा गया। यह शास्त्र पहले ब्रिटेन में बनता था, अब अमेरिका में उसका सबसे बड़ा कारखाना है और शिक्षा - संस्थानों के ग्रन्थागार इन शास्त्रों से जु पटे पड़े हैं। इनका अध्ययन अध्यापन करते हुए औसत बुद्धिजीवियों की जो खेप निकल रही है, वह इस देश के जीवन को बदलने या प्रभावित करने में असमर्थ है।

1• डा० राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण, 164
2• वही, 165

सत्य शोधक प्रतापी शासकों के जीवन क्रम मे ध्यान हटाकर उसे सामाजिक परिस्थितियों पर केन्द्रित करने को कहते हैं। इतिहास के प्रति यह एक नया और वैज्ञानिक दृष्टिकोण है।

इतिहास समझने के लिए समाज की सभी परिस्थितियों को जानना जरूरी है। इसके आगे प्रश्न यह होता है कि इन परिस्थितियों में मुख्य भूमिका किनकी है। मार्क्सवादी ने इस प्रश्न का उत्तरदिया था; मुख्य भूमिका आर्थिक परिस्थितियों की है। उसने यह भी बताया था कि इन परिस्थितियों का विश्लेषण कैसे करना चाहिए। किसी भी समाज व्यवस्था में उत्पादन और वितरण की पद्धति किस प्रकार की है, इस पर उसका आर्थिक ढाँचा निर्भर होता है। इस पद्धति की छान-बीन करके हम आर्थिक परिस्थितियों को पहचानते हैं। सत्य शोधक राजनीति प्रगति, व्यापार और उद्योग - धन्धों की उन्नति तथा अवनति के नियमों का पता लगाने को तो कहते हैं, वे इनके साथ धर्म को भी शामिल करते हैं। यानी धर्म की उन्नति और अवनति वैसे ही एक सामाजिक प्रक्रिया है जैसे उद्योग-धन्धों की उन्नति और अवनति। किस ऐतिहासिक क्रम में धर्म का अभ्युदय होता है, कब उसका ह्रास होता है, विज्ञान और धर्म का क्या सम्बन्ध है ? इन सब बातों का विश्लेषण वह करते तो बहुत रोचक होता।

डा० राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी, और नवजागरण पृ०- 166

व्यापक सामाजिक परिवर्तन के लिए शिक्षा प्रसार अत्यन्त आवश्यक था । गाँवों में मदरसे बहुत कम हैं, जितने हैं, उनमें बहुत कम लड़के जाते है । सरकार हर आदमी के पीछे, जनसंख्या को देखते आठ आने भी नहीं खर्च करती ।[1] " यह स्थिति बहुत ही शोक- जनक है । चाहिए था कि प्रारम्भिक शिक्षा मुफ्त और अनिवार्य कर दी जाती । पर वह तो दूर रहा फीस लेकर भी और अपने बच्चों को शिक्षा देना या न देना माता- पिता की इच्छा पर छोड़कर भी, शिक्षा प्राप्ति का यहाँ यथेष्ट सुभीता नहीं । "

शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में अंग्रेज शासकों का प्रयत्न यह था कि यहाँ के विभिन्न धर्मों को मानने वालों के बीच खूब विद्वेष फैलाया जाय और ऐसी संस्कृति का विकास न होने दिया जाय जिसमें विभिन्न सम्प्रदायों के लोग भागी- दार हों । यहाँ दो सबसे बड़े सम्प्रदाय हिन्दुओं और मुसलमानों के थे । उन्होंने मुसलमानों को अलग संस्कृति, अलग भाषा में दीक्षित करने का पूरा प्रयत्न किया

उन्होंने नियम बनाया कि जहाँ भी 20 मुसलमान लड़के पढ़ना चाहेंगे " वहाँ एक इस्लामिया स्कूल खोल दिया जायेगा ऐसे स्कूलों में अध्यापक भी मुसलमान ही होंगे .... संयुक्त प्रान्त भर के लिए एक सुनिश्चित मुसलमान इन्सपेक्टर रक्खा

डा0 राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण पृ0-168

सरस्वती ,मई 1915, महावीर प्रसाद द्विवेदी ।

जायेगा । प्रत्येक म कमिश्नरी में एक मुसलमान डेप्यूटी इन्सपेक्टर इस निमित्त रखा जायेगा कि वह कमिश्नरी भर के इसलामिया स्कूलों की मक्तब करेंगी डाइरेक्टर साहब बनावेंगी ।

उनके अपने देश में एक ही ईसाई धर्म वाले प्रोटेस्टेन्टों ने रोमन कैथलिकों पर जो अत्याचार किये थे, उन्हीं के अनुरूप वे भारत में दो सम्प्रदायों के लोगों को भिड़ाने की नीति पर चल रहे थे ।"

वेद पढ़ने का अधिकार मुसलमानों को न था । हिन्दुओं में अछूतों और सभी वर्णों की स्त्रियों को वेद पढ़ने की मनाही थी । द्विवेदी जी मुसलमानों, अछूतो स्त्रियों सभी में शिक्षा प्रसार के समर्थक थे । भारत के नवनिर्माण का अर्थ है सामन्ती व्यवस्था के अवशेषों को समाप्त करके स्त्रियों, अछूतों, मुसलमानों अन्य मतावलम्बियों को मिलाकर वैज्ञानिक दृष्टि वाले नये समाज का निर्माण और इस नवीन भारत में उन कबीलों का भी महत्वपूर्ण स्थान होगा जो सामन्ती व्यवस्था में पूरी तरह कभी शामिल नहीं हुए । यह तभी सम्भव होगा जब शिक्षा प्रसार का कार्य उच्च और मध्य वर्ग के थोड़े से लोगों तक सीमित न रहेगा इसलिए सबसे पहले आवश्यक था कि

- -

सरस्वती - 1913

डा॰ राम विलास शर्मा, -महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण, पृ० - 166

जनसाधारण की निरक्षरता को दूर किया जाय । " पक्की शिक्षा दीजिए, पर साथ ही निरक्षरता कम करने के साधनों को भी बढ़ाते जाइए । जिस गाँव में 100 आदमी रहते हैं उसमें पक्की शिक्षा पाये हुए केवल 11 आदमियों से अवशिष्ट 39 का नाम नहीं चल सकता । वे यदि कच्ची ही शिक्षा पावें और अपने घर का हिसाब रखने और पत्र लिखने पढ़ने योग्य हो जाँय तो यह इतना ही लाभ उनके लिए बहुत समझिये ... सरकार का यह कर्तव्य होना चाहिए कि प्रजा की शिक्षा का वह पूरा-पूरा प्रबन्ध करें, एक आदमी को भी अशिक्षित न रहने दें । शिक्षा के साधन सबके लिए सुलभ कर दें । "

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर महावीर प्रसाद द्विवेदी तक हिन्दी जागरण के नव सूत्रधार पुराने चर्खे कर्धे वाले भारत का स्वप्न नहीं देखते । वे देश देश में आधुनिक उद्योग - धन्धों के विकास के पक्षपाती हैं । गाँधीवादी विचारधारा से हिन्दी नवजागरण का यह भेद उल्लेखनीय है ।

हिन्दी नवजागरण के लिए वैज्ञानिक शिक्षा आवश्यक है साथ ही शताब्दियों से चली आती हुई रूढ़ियों की जड़ काटने के लिए, इतिहास और मानव सम्बन्धों को सही - सही समझने के लिए , प्रकृति के रहस्यको जानने के लिए आवश्यक है । यह नवजागरण अतीत के प्रतिभावुकता, पुनरुत्थानवाद और रहस्यवाद की दृष्टि नहीं

सरस्वती मार्च 1915

नहीं अपनाता । इसीलिए हिन्दी में अद्वैतवाद, उपनिषदों और रवीन्द्रनाथ के रहस्यवाद की चर्चा 1920 से पहले कम होती है । हिन्दी नवजागरण मूलत: बुद्धिवादी और रहस्यवाद- विरोधी है । कुछ समय के लिए रहस्यवादी धारणाएं उस पर हावी होती दिखायी देती हैं पर पूरी तरह नहीं । प्रेमचन्द अपनी जगह अडिग रहते हैं और उनका साहित्य अनेक महारथियों के सम्मिलित कृतित्व से बढ़कर है । नये रहस्यवाद का मूल स्रोत बंगाल है । उद्योगीकरण और आधुनिक विज्ञान का विरोध करने वाली विचार धारा का स्रोत गुजरात है ।

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में और 20वीं शदी के प्रारम्भिक दशकों में समाज सुधार के आन्दोलन अनेक प्रदेशों में चालू हुए । इनके समान हिन्दी नवजागरण भी समाज का ढाँचा बदलना चाहता था । पुराने रीति- रिवाजों, संस्कारों और समाज के पुराने ढाँचे को कायम रखने वाले सामन्ती तत्व थे जिनका संरक्षक अंग्रेजी राज था । इसलिए सामन्त वर्ग से टक्कर लिये बिना समाज - सुधार की योजनाएं पूरी न हो सकती थी । हिन्दी प्रदेश में समाज सुधार के ये आन्दोलन प्रखर रूप से सामन्त विरोधी हैं, इसके साथ अंग्रेजों की संरक्षक भूमिका के विरोधी हैं । इसका श्रेष्ठ निदर्शन प्रेमचन्द्र का साहित्य है ।

डॉ० राम विलास वर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी, और हिन्दी नवजागरण पृ० - 180

वर्तमान बुद्धिजीवी वर्ग जितना ही किसान जनता से अलग - थलग रहता है, शहर में रहते हुए मजदूर वर्ग से कटा रहता है, उतना ही हिन्दी नवजागरण का महत्व समझने में असमर्थ दिखायी देता है ।

xxxxx
xxx
x

डा० राम विलास शर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी, और हिन्दी नवजागरण

पृ० - 180

तृतीय अध्याय

नवजागरण एवं शरतचन्द्र

साहित्य किसी भी साहित्यकार के जीवनगत अनुभवों एवं कल्पनाओं का संवाहक होता है। दूसरे शब्दों में इसे हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि जब साहित्यकार को तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक परिवेश कुछ ज्यादा ही झकझोरने लगते है। और वह इन सामाजिक मूल्य मान्यताओं का मौन अनुयायी नहीं रह पाता, उसके अन्दर के संवेग अपनी अभिव्यक्ति पाने के प्रयास करने लगते हैं तभी साहित्य का जन्म होता है। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक इत्यादि पहलुओं का सीधा सम्बन्ध मानव जीवन से होता है इसलिए साहित्यकार इन मूल्य मान्यताओं के उतार-चढ़ाव से जल्दी प्रभावित होता है। यही कारण है कि हर साहित्यकार इन्हीं मुददों को अपने साहित्य का मुख्य उपजीव्य बनाता है। इस प्रकार तत्कालीन परिवेश ही साहित्यकार के साहित्यिक जीवन का निर्माण करते हैं।

रचनाकार की सभी रचनाएं समाज में समान रूप से समादृत नहीं हो पाती हैं केवल वे ही रचनाएं ज्यादा प्रेरणादायक होती हैं जो उसके निजी जीवन की अनुभूतियों के परिणामस्वरूप सृजित होती हैं। ज्यादा कल्पना से बोझिल रचनाएं

है कि वह जिन घटनाओं को अपने साहित्य के माध्यम से चित्रित करना चाहता हो उसका वह प्रत्यक्षदर्शी हो, स्वयं भोक्ता हो शायद यही कारण है कि आदि-कालीन कवि अपने आश्रयदाताओं के साथ युद्ध- क्षेत्र में जाकर वीर रस परक रचनाएं लिखा करते थे। भक्तिकालीन कवि भी जनता के बीच में जाकर अपने विचारों को पुष्टि प्रदान करते थे। रीतिकालीन कवि तो सजे -सजाए दरबार में मधु पान से रक्त अरुणिमा वाले नर्तकियों के अधरों को देखकर श्रृंगार युक्त रचनाएं किया करते थे। किन्तु धीरे - धीरे साहित्य में इस प्रवृत्ति का क्रमश: लोप होता चला गया। रचना केवल कल्पना की वस्तु रह गयी। शायद यही कारण है कि वर्तमान साहित्य में अपेक्षाकृत कम प्रेषणीयता पायी जाती है। यूँ तो सभी साहित्यकारों में कल्पना एवं यथार्थ का अद्भुत सामन्जस्य पाया जाता है। किन्तु कतिपय रचनाकार इस यथार्थ की अभिव्यक्ति करने में कुछ ज्यादा ही सफल हुए हैं। इस प्रकार रचनाकार और उसके कर्म के बीच घनिष्ठता परमावश्यक सी लगती है। घटनाएं अति यथार्थ के चित्रण के कारण नग्न सी न होने लगे इस दोष से बचने के लिए उसमें कल्पना का समावेश किया जाता है। अपने परिवेश के चित्रण में वही रचनाकार सफल होता है जो ज्यादा समाज गत अनुभवों को संचित करता है।

बंगला साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर शरतचन्द्र तथा हिन्दी साहित्य के के प्रधान शिल्पी प्रेमचन्द अपने इसी यथार्थ चित्रण में सिद्ध हस्त है।

सामाजिक दृष्टिकोण :

" नवजागरण की पृष्ठभूमि" में हम देख चुके हैं कि तत्कालीन समाज कुरीतियों, अन्ध विश्वासों, भेद-भावों, आडम्बरों तथा अशिक्षा की मजबूत जंजीरों में जकड़ा हुआ था । समाज दिन - प्रतिदिन अवनति की ओर अग्रसर होता चला जा रहा था । धर्म के नाम पर तमाम प्रकार के सामाजिक अत्याचार, समाज पतियों द्वारा प्रारम्भ हो गये । इन अत्याचारों का शिकार समाज का निम्न वर्ग तथा नारी हुई । नारी को अपना जीवन पुरूष वर्ग पर निर्भर कर देना पड़ा । उनके ऊपर अनमेल विवाह, बाल- विवाह, सती- प्रथा, अशिक्षा, वेश्यावृत्ति इत्यादि अमानवीय एवं घृणित परम्पराओं को थोप दिया गया । ये शोषण की दीवारें इतनी मजबूत बनायी गयीं कि नारी - जीवन के लिए इसे तोड़ पाना असम्भव सा लगने लगा । इस शोषण को तत्कालीन नारी समाज ने अपनी नियति मान ली । अपने जीवन की सार्थकता पुरूष वर्ग की सेवा, उनकी वासना की शान्ति, तथा पति के देहान्त के बाद उसके शव के साथ स्वयं को जला देने में समझी । जिस वर्ग के ऊपर इतना शोषण, अत्याचार होता हो उस वर्ग का उत्थान हो पाना नितान्त आश्चर्य जनक बात है । जब समाज का आधारभूत वर्ग, (नारी वर्ग) इतने शोषणों को झेल रहा हो तो समाज का उत्थान हो पाना बिल्कुल असम्भव है । शायद यही कारण है कि बंगाल के नवजागरण के प्रारम्भिक आन्दोलन नारी सुधार आन्दोलन से जुड़े थे ।

शरतचन्द्र की लेखिनी समाज की इन कुरीतियों से टकरायी और उन्होंने अपने साहित्य में नारी वर्ग को महत्वपूर्ण स्थान दिया। नारी के प्रति उनकी व्यापक सहानुभूति परिलक्षित होती है। नारी जीवन के लगभग प्रत्येक आयामों को उन्होंने स्पर्श किया है। विधवा-विवाह का समर्थन, अनमेल-विवाह के दुष्परिणाम, नारी शिक्षा का समर्थन, नारी जीवन में स्वतन्त्रता की स्थापना तथा पुरुष वर्ग की विलासिता की वस्तु के स्थान पर एक मानव के रूप में स्थापना तथा वेश्यावृत्ति का उन्मूलन कर उनको सम्मान जनक स्थान दिलाना इत्यादि कार्य उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से किया। उनके व्यक्तित्व का मानव पक्ष अत्यन्त विकसित था। भारत की दीन - दुखी जनता, गाँव के अपद और निम्न वर्ग, वर्ग व्यवस्था के शिकार नर - नारी उनके विशेष स्नेह भाजन थे। इसलिए उनके अधिकतर उपन्यास इसी भावना से प्रेरित होकर लिखे गये हैं। उनके नारी परक उपन्यासों में " दीदी", "स्वामी", गृह दाह, "बैकुण्ठ का दान- पत्र", "नव- विधान", "परिणिता", "चन्द्रनाथ", "श्रीकान्त", देना-पावना", "बिन्दो का लड़का", "ब्राह्मण की बेटी", "शुभदा," तथा "आरक्षणीया" है।

इन उपन्यासों के नारी पात्र भिन्न - भिन्न नवजागरण कालीन प्रवृत्तियों का संवाहन करते हैं। उनके विधवा समस्या पर लिखे हुए उपन्यास

मुख्यत: निम्न है :-

बड़-दीदी:-

इस उपन्यास के शरतचन्द्र ने परम्परागत सती- प्रथा के समर्थन स्थान पर नारी - जीवन को सम्मान जनक जिन्दगी जीने की मान्यता स्थापित की है। बड़ - दीदी के रूप में माधवी नामक स्त्री पात्र परि-कल्पित की गयी है जो विधवा है। वह न्यायालय, अदालत हर जगह अपनी पैरवी करने के लिए अपने भान्जे के साथ जाती है। इस प्रकार परम्परागत दकियानूसी मान्यताओं का खण्डन करती है। उपन्यास के अन्त में हम पाते हैं कि सुरेन्द्र नाथ जिसके एक बार माधवी के कमरे में प्रवेश करने पर माधवी के शरीर में लज्जा से कम्पन होने लगा था, विधवा होने के कारण पर - पुरुष का दर्शन निषिद्ध था, वही माधवी परम्परा को तोड़कर खुले दिल से सुरेन्द्र नाथ को स्वीकार कर लेती है। "सन्ध्या" के बाद सुरेन्द्र नाथ को होश आया। आँख खोलकर वह माधवी की ओर देखता रहा, माधवी के चेहरे पर घूँघट नहीं है, सिर्फ माथे पर कुछ अंश आँचल से ढँका हुआ था। गोदी में सुरेन्द्र का सिर लिये बैठी थी माधवी। इस प्रकार विधवा जीवन के मुक्त आकाश में विचरण करने की पक्षधारता इस उपन्यास में मिलती है।

1• शरत समग्र: पृ0 - 32

इसी प्रकार विधवा प्रेम का समर्थन "चरित्रहीन" उपन्यास की विधवा सावित्री के चरित्र द्वारा भी परिलक्षित होता है ।

शरतचन्द्र ने बड़ी -दीदी उपन्यास में विधवा के शुद्ध सात्विक प्रेम को दर्शाया है किन्तु विधवा- विवाह का समर्थन नहीं कर पाये हैं । शुभदा नामक उपन्यास में ललना शुभदा की बड़ी लड़की जो कि बाल - विधवा है, उसके साथ सुरेन्द्रनाथ शादी करने को तैयार हो जाते हैं । वे कहते हैं कि -

> " लेकिन तुम बतला दो कि अगर शादी के द्वारा ही सुखी हो सको तो मैं तुम्हारे साथ शादी करने को तैयार हूँ । जाति कुल, इतने प्रतिष्ठित वंश की मर्यादा को तरफ मैं जरा भी ध्यान न दूँगा ।"[2]

इस प्रकार इस उपन्यास में विधवा जीवन के प्रति सद्भावनायें इतनी ज्यादा बढ़ जाती है कि उसे पुण्य सूत्र में बाँधकर सम्मानजनक जीवन जीने की मान्यता स्थापित करते हैं ।

इसके अतिरिक्त शरतचन्द्र के कुछ उपन्यासों में विधवा पति की मृत्यु के बाद भी पति का गृह त्याग नहीं करती, जैसे - "गृह दाह" उपन्यास की विधवा

- -

2• शरत समग्र पृ0- 124, भाग - 3

"मृणाल" । तथा "ब्राह्मण " की बेटी" उपन्यास की विधवा "ज्ञानदा" ।

इस प्रकार शरतचन्द्र के उपन्यास में विधवा नारी के प्रति तीन प्रकार के दृष्टिकोण परिलक्षित होते हैं :-

1• विधवा प्रेम सम्बन्धी ।

2• विधवा - विवाह सम्बन्धी ।

3• परम्परागत ढंग से पति के घर में जीवन व्यतीत करने सम्बन्धी ।

शरतचन्द्र की सहानुभूति सम्पूर्ण विधवाओं के प्रति बहुतायत से पायी जाती है । विधवा प्रेम तथा विधवा विवाह सम्बन्धी उपन्यास परम्परागत पुरातन पंथी मान्यताओं से हटकर लिखे गये हैं । सती- प्रथा का समर्थन किसी भी उपन्यास में देखने को नहीं मिलता है । जो विधवायें परम्परागत मान्यताओं के अनुसरण पर अपने पति के घर में पड़ी रहती हैं उनके प्रति भी शरतचन्द्र का सम्मानजनक दृष्टिकोण पाया जाता है । वे विधवायें तिरस्कार को पात्र न होकर सम्मानजनक स्थान पाती है ।

2• वेश्या - सम्बन्धी दृष्टिकोण :

नारी जीवन का सबसे त्रासद रूप शायद वेश्या का है । वह शायद समाज का सबसे निरादृत तबका है । पुरुष वर्ग के शोषण और तिरस्कार का नग्न रूप यहीं देखने को मिलता है । उसे केवल वासना को तृप्ति का भाजन मात्र

समझा जाता है। उसके जीवन में सम्मान और प्रेम का कोई स्थान नहीं, पैसे के बल पर उसके व्यक्तित्व को खरीदा जा सकता है। वह सबको अपनाने के बावजूद भी सबसे तिरस्कृत है। अपना सर्वस्व पुरूष वर्ग पर न्यौछावर कर देने पर भी सम्मान या प्रेम का अंशमात्र भी नहींपाती। वह पुरूष के हाथ का खिलौना मात्र है, जिसे जब तब पैसे के बल पर खरीदा जा सकता है।

शरत चन्द्र की प्रतिमा इस वर्ग के उत्थान में विशेष रूप से मुखरित हुई है। वेश्याओं के प्रति सम्मान जनक नजरिया उनके उपन्यासों में देखने को मिलता है। जैसे - "श्रीकान्त" उपन्यास की राजलक्ष्मी, जो कि प्यारी बाई बनकर गाने का काम प्रारम्भ कर लेती है। उसे श्रीकान्त अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर लेता है। राजलक्ष्मी में मानवता कूट - कूट कर भरी है। वह गरीब बस्तियों में विद्यालय खुलवाती है तथा चिकित्सालय का भी प्रबन्ध करती है।

इस प्रकार शरतचन्द्र की वेश्यायें अब समाज की उपेक्षित और तिरस्कृत तबका न होकर समाज को गतिशील बनाने में सहायक हैं।

शिक्षा प्रसार पर बल :

अशिक्षा देश के पिछड़ेपन का प्रमुख कारण है। अशिक्षा के कारण अनेक प्रकार की कुरीतियाँ समाज में जन्म लेती हैं। यदि सर्वतोरूप से

देश का विकास करना है तो शिक्षा का प्रसार व्यापक पैमाने पर करना होगा। देश में वैज्ञानिक चिन्तन का प्रसार करना होगा । इसीलिए नवजागरण कालीन सभी सुधारवादी संगठनों ने शिक्षा के प्रसार पर विशेष बल दिया । राजा राम मोहन राय ने ब्रम्ह समाज के माध्यम से पाश्चात्य शिक्षा को प्रोत्साहित किया तो स्वामी दयानन्द सरस्वती ने परम्परागत वैदिक शिक्षा पर बल दिया । ईश्वर चन्द्र विद्या सागर ने नारी शिक्षा को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया ।

इस प्रकार शिक्षा के प्रचार - प्रसार ने भारत से सम्पूर्ण कुरीतियों, अत्याचारों, शोषणों एवं मिथ्यावाद का अन्त करके नये तर्कवाद को जन्म दिया । इसी तर्कवाद के परिणामस्वरूप सुधारवादी आन्दोलन सफल हुए ।

शरतचन्द्र के उपन्यासों में शिक्षा प्रसार को मुख्य बिन्दु बनाया गया है । उनके कुछ उपन्यासों में पाश्चात्य शिक्षा को प्रोत्साहन मिलता है तो कुछ में नारी शिक्षा को विशेष रूप से महत्व प्रदान किया गया है । इसके साथ ही साथ किसानों को भी शिक्षित करने के लिए प्रयास किया गया है । "ब्राह्मण की बेटी" में पाश्चात्य शिक्षा पर बल अरूण के इस कथन से मिलता है :- " बोला, यदि विलायत जाने से जाति जाती है तो जाये, मेरे लिए वही अच्छा ।"[1]

1· शरत समग्र भाग -3, पृ0- 333

" नव विधान " उपन्यास में भी इसी दृष्टिकोण के दर्शन होते हैं। किभा सोमेन्द्र को जो कि शैलेश्वर का लड़का है, विलायत पढ़ने के लिए भेजना चाहती है। " उसकी बड़ी इच्छा थी कि सोमेन्द्र विलायत में जाकर पढ़े और मनुष्य बने।"[1]

"दत्ता" उपन्यास का नरेन्द्र वैज्ञानिक चिन्तन का प्रचार - प्रसार करता है।

" नरेन्द्र कहता है कि - हम लोगों के देश में वास्तविक किसान नहीं है। खेती करना "पैतृक" व्यवसाय है, इसलिए लोग समय -असमय दो बार हल चलाकर बीज छिड़क कर आकाश की ओर मुँह बाए देखते रहते हैं, इसे खेती करना नहीं कहते, यह तो लॉटरी का एक खेल है किस जमीन में कब खाद देनी चाहिए, खाद किसे कहते हैं, यह सब वे जानते ही नहीं। साथ यह विद्या भी सीख आया है। अच्छी बात है, किसी दिन जाइयेगा उसका स्कूल देखने। मैदान में वृक्ष के नीचे बाप-बेटा-बाबा सब मिलकर जहाँ पाठशाला में बैठते हैं वहीं पर।"[2]

श्रीकान्त की राजलक्ष्मी स्वदेशी शिक्षा का प्रचार- प्रसार करती है। "पण्डित जी" उपन्यास में सार्वजनिक शिक्षा पर बल दिया गया है। "आजकल सभी लोगों"

- -

1· शरत समग्र ,भाग - 2, पृ0 - 297

2· शरत समग्र, भाग - 2, पृ0 - 27

ने समझ लिया है कि देश में कोई करने योग्य काम है तो वह सर्वसाधारण के बालकों को शिक्षा देना है। शिक्षा देने के सिवा हम चाहे और जितने काम करें, वे सब व्यर्थ हैं।[1]

"विप्रदास" उपन्यास में नारी शिक्षा पर बल दिया गया है। वन्दना जो कि पढ़ी - लिखी लड़की है उसे इंगित कर दयामयी कहती है - "पढ़ी - लिखी लड़कियों की बात ही कुछ और होती है। यदि तुम साथ न होती तो आज सभी को इतना विपदा में पड़ना पड़ता।"[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि शरतचन्द्र पाश्चात्य शिक्षा, वैज्ञानिक चिन्तन के प्रसार, नारी शिक्षा एवं सार्वजनिक शिक्षा पर विशेष बल देते हैं।

छुआछूत समस्या और शरतचन्द्र का दृष्टिकोण :

छुआछूत से ग्रस्त बंग समाज पंगु हो गया था। मानव-मानव में भेदभाव की परम्परा ने देश के सामने एक ऐसी समस्या पैदा कर दी कि उसमें सदाशयता का रह पाना असम्भव सा लगने लगा। समाज में छुआछूत के उन्मूलन

---

1. शरतचन्द्र, भाग -3, पृ० · 272

2. शरत समग्र., पृ० - 156

के लिए नवजागरण सुधारवादी आन्दोलन में मुख्य मुद्दा बनाया गया । सभी सुधारवादी संगठनों ने इस कुप्रथा को अतार्किक एवं अमानवीय घोषित किया । सभी व्यक्ति एक समान है । इस भावना को प्रश्रय मिला ।

शरतचन्द्र के अधिकांश उपन्यासों में इस कुप्रथा के उन्मूलन पर बल दिया गया । कुछ उपन्यासों में इस कुप्रथा का चित्रण कर उसके प्रति घृणा पैदा करने का प्रयास किया गया है "पथ के दावेदार " उपन्यास में अपूर्व के वर्मा जाने के प्रश्न पर उसकी माँ कहती है - तू पागल हो गया है । उस देश में कोई आदमी नहीं जाता । वहाँ जात-पात, छूत-छात, आचार - विचार कुछ नहीं, मैं तुझे वहाँ नहीं जाने दूँगी ।[1] इसका घिनौना रूप भारती तथा तिवारी के बीच इस वार्ता में मिलता है " सहसा भारती बोल उठी, अच्छा एक बातपूँछती हूँ आपसे । मेरे हाथ का पानी पीने से तिवारी की जाति तो मारी गयी ।" इस पर तिवारी ने निश्चय किया " कि कलकत्ता जाकर वह अपने घर चला जायेगा, वहाँ गंगा स्नान करके, छिपकर गोबर खाकर और किसी बहाने ब्राह्मण भोजन कराकर वह अपने देह को किसी प्रकार शुद्ध कर लेगा ।"[2]

1• शरत समग्र: भाग - 1, पृ० - 156

2• शरत समग्र: भाग - 1, पृ० - 198

इस प्रकार कुछ उपन्यासों में छुआछूत का नग्न रूप प्रदर्शित करके पाठक के मन में इस कुप्रथा के प्रति घृणा पैदा करना चाहा है।

"गृह दाह" उपन्यास से "राम बाबू" कहता है कि -

" इस छूत-छात के भ्रम से ही तो देश धीरे - धीरे रसातल को जा रहा है, क्योंकि इसकी जड़ में घृणा है और घृणा का कभी अच्छा परिणाम नहीं होता। (क)

"शेष प्रश्न" श्रीकान्त" तथा "चरित्र हीन" उपन्यास में इस कुप्रथा का तर्कपूर्ण ढंग से खण्डन किया गया है। शेष प्रश्न का नायक अजित कहता है - " अपने को बड़ा मानकर जो लोग अपमान करके, आपको दूर रखना चाहते हैं, जो लोग अकारण ग्लानि करते फिरते हैं, वे तो आपके पाँव छूने योग्य भी नहीं। संसार में देवी का आसन अगर किसी के लिए हो तो वह आपके लिए है।"[1]

"चरित्र हीन" उपन्यास में भी इसी प्रकार की भावना पायी जाती है, "किरणमयी कहती है " हम इंसान नहीं हैं? या हमारे शरीर में इंसान का रक्त नहीं है।[2]

- -

(क) शरत समग्र, भाग -2, पृ० - 206
1. शरत समग्र:, चतुर्थ पर्व : 163

2. " ,पंचम खण्ड , 126

"श्रीकान्त" उपन्यास की मुख्य महिला पात्र - राजलक्ष्मी जो कि प्यारी बाई के नाम से गाने का काम करने लगती है, कमल लता के साथ एक ही बिस्तर पर शयन करती है। तथा श्रीकान्त से उसका विवाह सम्पन्न होता है।

" श्रीकान्त" उपन्यास में छुआछूत पर स्थान-स्थान पर कुठाराघात किया गया है। जिस समाज में लोग "शव" को अछूत मानते हो अथवा "समाज बहिष्कृत व्यक्ति के घर में देह- त्यागने के कारण उसका शव -अछूत समझा जाए, उस समाज का भविष्य क्या हो सकता है? " बोला इन्द्र, मरे हुए की जाति क्या? यह तो वैसे ही है जैसे हमारी यह डोंगी, आम या जामुन जिस किसी की बनी हो अब तो इसे डोंगी छोड़कर कोई भी नहीं कहेगा कि यह आम है या जामुन।" उसी तरह है यह भी।"[1]

इस प्रकार छुआछूत के सन्दर्भ में शरत चन्द्र ने इस कुप्रथा के प्रति घृणा पैदा करके इसका तर्कपूर्ण खण्डन प्रस्तुत किया है।

- -

1• शरत समग्र, चतुर्थ पर्व, पृ० - 470

दहेज प्रथा और शरत चन्द्र का दृष्टिकोण

शरतचन्द्र के सामाजिक उपन्यासों में दहेज प्रथा एवं अनमेल विवाह का विरोध भी किया गया है। "परिणिता" नामक उपन्यास में इस कुप्रथा का विरोध परिलक्षित होता है। "समाज कहता है कि लड़की की उम्र हो चुकी है, ब्याह कर दो, लेकिन ब्याहने का इन्तजाम नहीं कर सकता। ठीक कहते हैं गिरीन, मुझको ही देखो न, मकान तक गिरवी रख देना पड़ा, दो दिन बाद बाल-बच्चों को लेकर राह का भिखारी बनना पड़ेगा - समाज तब यह थोड़े ही कहेगा कि आओ हमारे घर आश्रय ले लो।"[1]

इस प्रकार शरत चन्द्र ने दहेज प्रथा से होने वाले दुष्परिणामों की ओर संकेत किया है।

अनमेल विवाह और शरत चन्द्र का दृष्टिकोण

अनमेल विवाह के परिणामस्वरूप नारी जीवन का सच्चा वैवाहिक सुख समाप्त हो जाता है। किसी तरह जिंदगी काटनी पड़ती है। अनमेल विवाह के परिणामस्वरूप बाल विधवाओं की वृद्धि बहुत सम्भव है। इसलिए नवजागरण सुधारवादी आन्दोलन में इस कुप्रथा का विरोध किया गया।

---

1. शरत चन्द्र, भाग -2, पृ० - 330

शरत चन्द्र के उपन्यास में भी इस कुप्रथा का विरोध मिलता है। "विधवा की बेटी" उपन्यास में संध्या, गौलोम चटर्जी जो कि उसके नाना की उम्र के हैं। से कहती है - " कहा है कि घाट के मुर्दे के गले में कटे जूतों की माला बनाकर पहनाउँगी।"[1]

इस प्रकार अनमेल विवाह के प्रति शरतचन्द्र का बड़ा - कड़ा रुख देखने को मिलता है।

शरत चन्द्र के राजनैतिक विचार :

बंगाल का सुधारवादी आन्दोलन प्रारम्भ में भाववादी रहा। केवल समाज तथा धर्म में परिष्कार कर आत्मा की उन्नति पर बल दिया गया। किन्तु शीघ्र ही इस आन्दोलन ने राजनैतिक कलेवर धारण करना प्रारम्भ कर दिया। राजनीति के क्षेत्र में गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन का प्रभाव सम्पूर्ण देश पर पड़ने लगा। किन्तु साथ ही क्रान्तिकारी विचार धाराएं भी कम प्रभावशाली नहीं रहीं। साम्प्रदायिक एकता, देश प्रेम, किसान जागरण की भावना भी बलवती हुई। जब सम्पूर्ण देश इस वातावरण से क्षुब्ध था, शरदचन्द्र भी इससे अछूत नहीं रह सके।

- -

1• शरत समग्र, भाग -3, पृ0- 36।

साम्प्रदायिक एकता सम्बन्धी विचार :

शरत चन्द्र ने साम्प्रदायिकता के परिणाम को गम्भीरता से महसूस किया । और हिन्दू -मुस्लिम एकीकरण की भावना पर विशेष बल दिया । उनके साम्प्रदायि एका भावना में ब्राह्म समाजियों से भी सामन्जस्य दिखाया गया है । इस प्रकार एकीकरण के दो प्रमुख रूप परिलक्षित होते हैं । प्रथम ब्राह्म समाजियों से एकीकरण द्वितीय हिन्दू मुस्लिम एकीकरण "गृह दाह " उपन्यास की नायिका अचला ब्राह्म समाजी है तथा महिम हिन्दू नवयुवक है । अचला की शादी महिम के साथ सम्पन्न होती है । इस प्रकार ब्राह्म समाज एवं हिन्दू समाज के समन्वय पर बल दिया गया है । यही भावना " दत्ता " उपन्यास में भी परिलक्षित होती है । विजया जो कि ब्राह्म समाजी लड़की है, उसकी शादी नरेन्द्र के साथ हिन्दू रीति से सम्पन्न होती है ।

ब्राह्म समाज तथा हिन्दू समाज की एकता तक ही शरत चन्द्र की दृष्टि केन्द्रित नहीं रही । उनके उपन्यासों में हिन्दू मुस्लिम एकीकरण के प्रयास भी मिलते हैं । "ग्रामीण समाज उपन्यास में रमेश हिन्दू मुस्लिम एका की भावना से ओत-प्रोत है । उसी के परिणामस्वरूप " वहाँ हिन्दू मुसलमानों ने आपस में भाई चारा स्थापित कर लिया है । दोनों एक मन और एक प्राण हैं ।[1]

1• शरत समग्र ,भाग -1, पृ० - 394

" गृह दाह " उपन्यास में केदार बाबू के इस वक्तव्य में भी साम्प्रदायिक एकता की भावना पायी जाती है " किसी धर्म से उन्हें बैर नहीं क्योंकि संसार के सभी धर्म मूलत: एक हैं। हिन्दू के राम और मुसलमान के अल्लाह एक ही है।[1]

"श्रीकान्त" उपन्यास में भी यही भावना स्पष्ट हुई है। श्रीकान्त गौहर से कहता है " तुम मुसलमान की सन्तान कभी नहीं हो। ऐसा लगता है कि तुम्हारे शरीर में शुद्ध ब्राह्मण का रक्त प्रवाहित है।[2]

इस प्रकार शरत चन्द्र के कुछ उपन्यासों में ब्राह्म समाज तथा हिन्दू समाज से एकीकरण की भावना पायी जाती है तो कुछ उपन्यासों हिन्दू-मुस्लिम एकीकरण की भावना पुष्टि हुई है।

स्वदेश प्रेम और शरत चन्द्र की दृष्टि :

स्वदेश प्रेम के द्वारा ही देश का कल्याण सम्भव था। मातृभूमि की सेवा में अपने जीवन का उत्सर्ग ही नवजागरण का मूल मन्त्र था। देश प्रेम के सामने अपने स्वार्थ तुच्छ हैं इसलिए देश प्रेम की भावना को विशेष रूप से पल्लवित किया गया है।

1· शरत समग्र, भाग- 2, पृ० - 220

2· वही, भाग - चतुर्थ पर्व, पृ० - 507

शरत चन्द्र के उपन्यासों में भी देश प्रेम की यह भावना पायी जाती है " पथ के दावेदार " उपन्यास में यह भावना विशेष रूप से मुखरित हुई है । अपूर्व के प्रवासी जीवन के समय के चिन्तन में इसकी प्राप्ति होती है " हे अभागे देश के शक्तिहीन लोग । जिस ऐश्वर्य शालिनी भूमिका भार तुम लोग सम्हाल नहीं सकते , इस पर व्यर्थ का लोभ किसलिए ? स्वतन्त्रता का जन्मजात अधिकार केवल मनुष्यत्व को नहीं । तुम केवल अपनी क्षुद्र इन्द्रियों को ही मनुष्य समझ बैठे हो । इससे अधिक आत्मघाती प्रवृत्ति और क्या हो सकती है ।[1] अपूर्व आगे कहता है कि हम पराधीन राष्ट्र के हैं भारती । न अंग्रेज हैं और न फ्रांसीसी, अमेरिकी भी नहीं ।[2]

मातृभूमि के प्रति प्रेम न केवल पुरुष पात्रों में परिलक्षित होती है । महिला पात्र भी इससे युक्त है ।" ग्रामीण समाज " उपन्यास में महिला पात्र - विश्वेश्वरी रमेश को प्रोत्साहित करती हुई कहती है " जिस रास्ते पर तुमने पैर रखा है, सिर्फ वही एक रास्ता है । इसीलिए तो मैं तुमसे बराबर कहती हूँ कि तुम अपनी इस जन्मभूमि को किसी तरह भी छोड़कर न जाना ।"[3]

1• शरत समग्र, पृ० - 182

2• शरत समग्र, पृ० - 198

3• शरत समग्र, पृ० - 373

देश प्रेम की यह भावना " श्रीकान्त" उपन्यास में भी दृष्टव्य है "यह सोने की भूमि किस तरह धीरे - धीरे ऐसी शुष्क, ऐसी रिक्त हो गयी, कैसे देश की समस्त सम्पदा विदेशियों के हाथ में पड़कर धीरे - धीरे विदेश में चली गयी किस तरह मातृभूमि की समस्त मेद मज्जा और रक्त को विदेशियों ने शोषण कर लिया,..... मगर हाँ देश की सेवा करना भी हम लोगों का एक व्रत है ।[1]

इस प्रकार शरत चन्द्र के उपन्यासों में कहीं - कहीं आत्म बलिदान की भावना के द्वारा देश प्रेम दिखलाया गया है तथा किन्हीं - किन्हीं स्थलों पर देश के शोषण तथा विदेशियों द्वारा दोहन पर भी चिन्ता व्यक्त की गयी है ।

गाँधीवादी विचारधारा

देश के राजनैतिक मंच पर गाँधी जी के आ जाने से क्रान्तिकारी परिवर्तन प्रारम्भ होता है । उन्होंने बहुत बड़ी शून्यता की समाप्ति की । देश को सही दिशा निर्देशन दिया । साहित्यकार उनके असहयोग तथा स्वदेशी आन्दोलन एवं मातृ भाषा प्रयोग से विशेष प्रभावित हुए ।

---

1. शरत समग्र, भाग -13, पृ0 - 425

गाँधी वादी विचारधाराओं का प्रभाव शरत चन्द्र में भी देखने को मिलता है। " जागरण " उपन्यास में गाँधी जी के विचारों का पूरा प्रभाव दिखाई पड़ता है। इस उपन्यास में असहयोग आन्दोलन का बड़ा प्रभाव है। इस उपन्यास का मुख्य पात्र अमर नाथ असहयोग आन्दोलन का समर्थन करता है, वह कहता है - " तुम लोग मार काट मत करो, किसी व्यक्ति विशेष या अंग्रेज के प्रति विरोध भावना अपने अन्दर न आने देना ! लेकिन इस दुराचारी अधर्म परायण और असत्य प्रिय मौजूदा सरकार से किसी प्रकार का सम्पर्क मत रखो। नौकरी की लालच में पड़कर इसके आगे नाक मत रगड़ो, विद्या प्राप्ति के लिए स्कूल कालेज के हाते के अन्दर पैर मत रखो। इन्साफ की आशा से इसको कचहरी की ओर मत बढ़ो।[1]

स्वदेशी आन्दोलन का प्रभाव भी इस उपन्यास में देखने को मिलता है - " अमर पुर " बाजार में विदेशी कपड़ों को बिक्री गुण्डों ने रुकवा दी है।[2]

कृषक, श्रमिक एवं मजदूर जागरण

राजनैतिक सुधारवादी आन्दोलनों में कृषकों एवं श्रमिक मजदूरों को जगाने का प्रयास किया गया था। इसके परिणामस्वरूप इन वर्गों में संगठन की भावना

---

1. शरत समग्र, भाग -3, पृ० - 377
2. वही, " पृ० - 381

पैदा हुई । पूंजीपतियों द्वारा स्थापित फैक्टरियों एवं कारखानों में हड़ताल एवं आगजनी हुई । पूंजीपति वर्ग श्रमिक वर्ग का शोषण करता है, यह भावना श्रमिक एवं मजदूरों में कूट- कूट कर भरी गयी । कृषक जीवन के उत्थान का भी प्रयास किया गया ।

शरत चन्द्र के उपन्यास " दत्ता " में नरेन्द्र खेती की जानकारी किसानों को देता है । किसान जब तक देवाभिमुखी रहेगा, तब तक उसका विकास सम्भव नहीं, यह भावना नरेन्द्र में समाहित है ।

श्रमिक एवं मजदूर जागरण की भावना " पथ के दावेदार " नामक उपन्यास में विशेष रूप से पायी जाती है । श्रमिक एवं मजदूर वर्ग के संगठन की आवश्यकता अतिशयता से महसूस की गयी - " एक बार सब मिलकर एक साथ खड़े होकर कहो- कि यह अत्याचार हम लोग और अधिक सहन नहीं करेंगे । केवल एक बार तुम लोग अपने सच्चे बल को पहचान लो, फिर देखो वे कैसे तुम्हारे बदन पर हाथ उठाते हैं। जोर से चिल्लाकर सबको सुना दीजिए कि संगठित हुए बिना तुम लोगों के उद्धार का कोई भी उपाय नहीं है । कारखानों के मालिकों ने आज हम लोगों का जैसा अपमान किया है, तुम लोग "यदि अपने को मनुष्य समझते हो तो उसका बदला अवश्य लेना ।[1]

---

1. शरत समग्र, पृ०- 229

अमर नाथ असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर लगान बन्दी करवाता है।

जमींदारी उन्मूलन की भी भावना इस उपन्यास में दृष्टव्य है - "प्राण की मनः स्थिति में भारी परिवर्तन आ गया है। अब चाहे यह शिक्षा का परिणाम हो, चाहे युग का धर्म हो, चाहे जमींदारी अत्याचारों का ही नतीजा हो, जनता अब जमींदारी प्रथा का नाश चाहती है। दो रोज पहले हो या दो रोज बाद, जमींदारी मिटेगी जरूर। जमींदारों को विदा होना होगा, तुम किसी तरह बचा नहीं सकोगे।"[1]

"विप्रदास" नामक उपन्यास में भी जमींदारी उन्मूलन पर बल दिया गया है - "इस एक साधारण देहाती जमींदार का इतना भय, यही तो हमारे दुश्मन है, हमारा खून निरन्तर चूस रहे हैं, हमारा असली आक्रमण तो इन्हीं के विरुद्ध है।"[2]

"पथ के दावेदार" नामक उपन्यास में मातृभाषा से प्रेम दिखाई पड़ता है। इसी उपन्यास में फ्रांस क्रान्ति के समय उद्घोषित स्वतन्त्रता, समानता तथा विश्व बन्धुत्व का स्वर भी सुनाई पड़ता है। इसी भावना को चरितार्थ करने के लिए पथ के दावेदार" नामक क्रान्तिकारी संघ का निर्माण होता है तथा नवतारा, सुमित्रा एवं भारती जैसी महिलायें इस दल की सदस्य बनती हैं।

1• शरत् समग्र, भाग -3, पृ0- 407
2• वही भाग -4, पृ0-11

मानवतावाद की भावभूमि पर प्रतिष्ठित शरतचन्द्र के उपन्यास सामाजिक सुधारवादी आन्दोलनों से ज्यादा प्रभावित दिखाई पड़ते हैं । जिसके अन्तर्गत नारी उद्धार, सामाजिक कुरीतियों का अन्त, शिक्षा का प्रसार, पाश्चात्य शिक्षा पर समर्थन पर विशेष बल दिया । राजनैतिक क्षेत्र में गांधी जी के प्रभाव से ज्यादा प्रभावित दिखलायी पड़ते हैं । जिसके कारण असहयोग आन्दोलन तथा स्वदेशी आन्दोलन को अपने उपन्यास में स्थान दिया ।

मानवतावाद

नवजागरण की बुनियाद मानवतावाद पर ही पड़ी थी । इसलिए नव-जागरण कालीन सभी बिन्दुओं में मानवतावाद समाहित है । सारे सुधारवादी प्रयास मानवतावाद के ही परिणाम थे । मानव सेवा को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया । गरीब, असहायों, निर्बल वर्गों तथा रोगियों के प्रति सहानुभूति की भावना को ही मानवतावाद कहा जा सकता है ।

शरतचन्द्र के उपन्यास में यह मानवतावाद सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है । "बड़दीदी" उपन्यास में एक विधवा को सती होने के स्थान पर उसे सामाजिक हित के कार्यों में नियोजित करने का उपदेश निश्चित रूप से मानवतावादी चिन्तन है । मरणासन्न योगेन्द्र नाथ अपनी पत्नी माधवी से कहते हैं ।" माधवी, जिस जीवन को तुम मेरे सुख के लिए अर्पण करती, उसे सबको सुख देने के काम में लगाना।

जिसके चेहरे पर तुम्हें मायूसी नजर आये, उसे खुश करने की कोशिश करना ।"[1]

"दत्ता" उपन्यास की विजया कहती है " हम लोगों के शास्त्र में लिखा है दरिद्र भगवान की विशेष मूर्ति है उनकी सेवा का अधिकार सभी को होगा।"[2]

मानवतावाद "गृहदाह" उपन्यास के मुख्यपात्र सुरेश के कृत्य में परिलक्षित होता है जब प्लेग तथा आग की लपेट में आये फैजाबाद में आकर वह गरीब, असहाय, एवं मरीजों की सेवा करता है ।"

" उस दिन शहर के गरीबों के मोहल्ले में जोरों की आग लगा गयी । एक तो प्लेग फैला है, तिस पर यह दुर्घटना लोगों के कष्ट की कोई सीमा न रही । कुछ दिनों से सुरेश नाम के एक भद्र युवक यहाँ आकर रुपये, पैसे, दवाई और शारीरिक श्रम लगाकर रोगियों की सेवा कर रहे हैं ।"[3]

"सुरेश" अपनी सारी जायदाद गरीबों के कार्य के लिए दे देता है । इस प्रकार मानवतावादी विचारधारा सुरेश में अत्यधिक है ।

1· शरत समग्र, पृ0 - 8

2· वही भाग, -2, पृ0 - 27

3· वही " पृ0- 132

" परिणिता" नामक उपन्यास में " गिरीन्द्र " और "शेखर ऋणग्रस्त "गुरूचरण" को सदैव मदद करते हैं।

"श्रीकान्त" उपन्यास में इन्द्रनाथ, श्रीकान्त तथा महिलाओं में सुनन्दा राजलक्ष्मी मानवतावादी विचारधारा नाबालिग बच्चे को तुम उसकी सम्पत्ति से वंचित रखकर जिन्दगी भर के लिए राह का भिखारी बना दोगी।[1] तथा "यह जायदाद जिसकी है उसे अगर आप वापस नहीं देंगे तो मैं जीते जी इस महापाप के अन्न का एक दाना भी अपने पति पुत्रों को न खिला सकूँगी।"[2]

"अरक्षणीया " उपन्यास में अतुल जाति युत ज्ञानदा को मानवतावादी भावना के परिणामस्वरूप अपनाता है। " देना-पावना" उपन्यास की षोडसी कुष्ठाश्रम में जाकर रोगियों की सेवा करती है। निर्मल अपने ससुर के विपरीत मानव सेवा को ही अपना धर्म समझते हैं, लेकिन जो पीड़ित है जो अस्वस्थ है, उनकी रक्षा करना हो तो हम लोगों का पेशा है - माँ।"[3]

"शुभदा"उपन्यास का सदानन्द - शुभदा के पति हराण चन्द्र के परिवार

1• शरत समग्र , भाग दो - पृ० - 443

2• वही भाग - तीन, पृ० - 444

3• वही, भाग - तीन, पृ० - 92

का पालन- पोषण करता है । छल्ना की शादी स्वयं अपने पैसे से करता है । लल्ना शुभदा की बडी लड़की परिवार संयोजन के लिए कलकत्ता जाकर अत्यन्त घृणित कार्य करने के लिए तैयार हो जाती है । इस प्रकार यह उपन्यास मानवतावाद से ओत- प्रोत है । "जागरण" उपन्यास का मुख्य पात्र अमरनाथ मानवतावाद का संवाहक है वह कहता है-इसदेश में अपंग, कमजोर, अयोग्य- अकर्मण्य को भी रोटी - कपड़ा पाने का हक है ।-[1]

"चरित्र हीन " उपन्यास में मुफ्त दवाखाना खुलवाया जाता है । हैजे की रोक थाम की व्यवस्था की जाती है " इधर - उधर की कुछ बातें सीखकर अपने गाँव के मकान पर एक बिना पैसे वाला मुफ्त दवाखाना खोल दूँगा । चिकित्सा के अभाव से देश गाँव के गरीब दुखी हैजे की बीमारी से उजड़ते जाते हैं उन लोगों की चिकित्सा करना ही मेरा उद्देश्य है ।" [2]

" विप्रदास " उपन्यास में गरीब लोगों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की गयी है " देश के पंचानवे प्रतिशत लोगों को एक समय भी भरपेट खाना नहीं मिलता । प्रात: से सन्ध्या तक परिश्रम करने पर भी नहीं - और बिना हाथ -

- -

1• शरत समग्र, भाग -3, पृ0- 39।

2• वही, भाग - पंचम खण्ड पृ0 - 18

पैर डुलाये हो मेरे लिए मेवे- पकवानों का प्रबन्ध है । पाप का यह दाना मुझे नहीं भाता ।"[1] इस प्रकार मानवतावाद का प्रमुख स्वर शरतचन्द्र के प्रत्येक उपन्यास में पाया जाता है । यह मानवतावाद नारी तथा पुरुष दोनों पात्रों में समान रूप से है ।

ईश्वरवाद सम्बन्धी दृष्टि

नवजागरण आन्दोलन में ईश्वर सम्बन्धी धारणाएं कई प्रकार की परिलक्षित होती है । समाज सुधारवादी संगठन ईश्वर के सम्बन्ध में अलग -अलग धारणाएं रखते थे । जैसे - ब्राह्म समाज में एकेश्वर वाद पर बल दिया गया । आर्य समाज में मूर्ति पूजा का विरोध किया तथा अन्य सामाजिक संगठन ईश्वर की उपासना में विश्वास करते थे ।

ब्राह्म समाज तथा आर्य समाज जैसे सुधारवादीसंगठन मूर्ति पूजा का विरोध कर रहे थे, किन्तु जिस देश की जनता की भावना मूर्ति पूजा में लग गयी है वह उस विचार को क्यों मानेगी जिसके द्वारा उसकी भावनाओं को ठेस पहुंचती हो " निरूपयोजन अपने पड़ोसी के धर्म विश्वास पर आप आघात करेंगे -

---

1 शरत समग्र, भाग - 4, पृ0 - 17

इस पर विश्वास न करना ही तो स्वाभाविक है ।[1]

"जागरण" उपन्यास में मूर्तिपूजा का समर्थन मिलता है ।" अमर नाथ कहता है " देवी - देवताओं पर तुम्हारा विश्वास नहीं, उन्हें वंचित करो यह मैं नहीं होने दूँगा ।"[2] "चरित्र हीन " उपन्यास का नायक "महिम" आर्य समाजी विचारधारा से प्रभावित लगता है जिसमें मूर्तिपूजा तथा ब्रह्म का विरोध किया गया था । केवल वेदों को महत्व दिया गया था । महिम कहता है - छोटा सा निराकार ब्रह्म मानों, या हाथ पावधारी तैंतीस करोड़ देवताओं को ही स्वीकार करें - कोई युक्ति नहीं लगती ।"[3]

xx xxxxx

1• शरत समग्र , भाग -2, पृ0 - 17

2• शरत समग्र, भाग -3, प0 - 385

3• शरत समग्र, पंचम खण्ड- पृ0- 15

चतुर्थ अध्याय

"नवजागरण एवं प्रेमचन्द"

सामाजिक सुधार

1. नारी उद्धार : नवजागरण का शायद सबसे महत्वपूर्ण प्रयास नारी सुधार था। बंगाल का नवजागरण भाववादी था तथा राजनैतिक कम। हिन्दी प्रदेशों में नवजागरण का प्रकट रूप 1857 को क्रान्ति से माना जाता है। इस क्रान्ति में हिन्दू मुसलमान दोनों सम्प्रदायों के बीच एकता के दर्शन हुए। सम्पूर्ण भारत में एकीकरण का प्रयास किया गया। बहादुरशाह जफर को सर्व सम्मति से राष्ट्रीय नेता के रूप में स्वीकार किया गया। यह पहला अवसर था जब इतने बड़े पैमाने पर संगठन के प्रयास किये गये, अंग्रेजी शासन के विरूद्ध जनता में भावना भरी गयी, देश - प्रेम तथा साम्प्रदायिक एकता जिसे कि अंग्रेजों ने तहस - नहस कर दिया था, सम्पूर्ण देश में फिर से फैलायी गयी।

इस प्रकार हिन्दी प्रदेशों के राजनैतिक सुधारवादी आन्दोलन प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम से ही माने जा सकते है।

बंगाल के समाज सुधार आन्दोलन भी हिन्दी प्रदेशों में समाहित किये गये। " भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र" बंगाल के इतिहास प्रसिद्ध सेठ

था । इसके साथ ही ईश्वर चन्द्र विद्यासागर भी बनारस आया- जाया करते थे । " भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र " का उनके साथ सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध था । चूँकि ईश्वरचन्द्र विद्यासागर सुधारवादी आन्दोलन के प्रमुख नेता थे इसलिए उनके व्यक्तित्व का प्रभाव सन्निकट के व्यक्तियों का प्रभाव सन्निकट के व्यक्तियों तक पहुँचना स्वाभाविक था । भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र भी इससे अछूत नहीं रहे । उन्होंने उनके नारी - उद्धार सम्बन्धी प्रयासों का अपने साहित्य में चित्रण किया ।

देश में अंग्रेजों की आर्थिक शोषण नीति के विरूद्ध ब्रिटिश साम्राज्यवाद तथा फूट डालो राज्य करो, की नीति के विरूद्ध आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने लेखों के माध्यम से आवाज बुलन्द की । "निराला" जी का सीधा सम्बन्ध बंगाल से था, इसलिए उनके भी साहित्य में नवजागरण के भाव परिलक्षित होते हैं । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी बंगला साहित्य से विशेष रूप से प्रभावित हुये ।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य के प्रबुद्ध लेखकों ने नवजागरण को अपने साहित्य में स्थान दिया । प्रेमचन्द ने नवजागरण के सामाजिक सुधारवादी दोनों रूपों को आत्मसात किया और नवजागरण कालीन निम्न बिन्दुओं को स्थान दिया ।

1· नारी सुधार के बिना समाज सुधार की परिकल्पना सर्वथा गलत है। इसलिए नारी उद्धार का प्रयास नवजागरण आन्दोलन में किया गया था। नारी उद्धार के लिए विधवा - विवाह का समर्थन, अनमेल विवाह तथा बाल- विवाह पर रोक बहु - विवाह पर रोक, नारी- शिक्षा पर बल, दहेज - प्रथा पर रोक सती प्रथा का विरोध, वेश्या वृत्ति का विरोध किया गया।

विधवा विवाह :

प्रेम चन्द्र के उपन्यास में विधवा विवाह का समर्थन मिलता है। "प्रेमा" उपन्यास में विधवा- विवाह का समर्थन किया गया है। "अमृतराय" पूर्णा से कहता है जो कि एक विधवा है - "मैं तुमसे शास्त्रीय रीति पर विवाह करना चाहता हूँ, ऐसा विवाह तुमको अनोखा मालूम होगा, तुम समझोगी यह धोखे की बात है, मगर सत्य मानों अब इस देश में ऐसे विवाह कहीं होने लगे है।"[1]

"गोदान" उपन्यास में भी विधवा विवाह का समर्थन पूर जोर ढंग से किया गया है। "होरी" का लड़का "गोबर" "झुनिया" नामक विधवा को अपनी पत्नी के रूप में घर लाता है। "गोदान" उपन्यास

- -

1· "प्रेमा" पृ० - 80

का ही एक अन्य पात्र ' शोभा भी एक नोहरी नामक विधवा से शादी कर लेता है ।

इस प्रकार " गोदान " उपन्यास में विधवा विवाह को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । "संजोग से एक जवान विधवा मिल गयी जिसके पति का देहान्त हुए केवल तीन महीने हुए थे,एक लड़का भी था । भोला को लार टपक पड़ी, झट- पट शिकार मार लाये । जब तक सगाई न हुई उसका घर खोद डाला ।"[1]

अनमेल विवाह का विरोध

अधिक आयु के पुरूष के साथ जब कम अवस्था की लड़की की शादी की जाती है तो इस प्रकार के विवाह को अनमेल विवाह कहते हैं। कभी - कभी बाप - नाना की अवस्था वाले पुरूष के साथ 12 या 13 साल की लड़की की शादी हो जाती थी जिसके कारण लड़की का जीवन कंटका-कीर्ण हो जाता था । उसका जीवन उदासीनता से परिपूर्ण हो जाता था । ऐसे विवाह का यह भी परिणाम होता था कि वह शीघ्र ही विधवा हो जाती थी । नवजागरण में ऐसे विवाह का विरोध नारी उद्धार का ही एक रूप था ।

---

1. "गोदान " पृ० - 297

"प्रेमचन्द के उपन्यास " निर्मला" में इस कुप्रथा का विरोध किया गया है। "निर्मला" जो एक अल्प व्यस्क लड़की है उसकी शादी तोता राम से होती है जो उसके पिता की उम्र के हैं। इस पर प्रेमचन्द का विचार है "बेजोड़ विवाह हो जाने से वह चाहे किसी की ओर आँखे उठाकर न देखे, पर उसका चित्त दुःखी रहता है।"[1]

"गोदान" उपन्यास में रतन का पति एक वृद्ध है। वह कभी भी उसके साथ वैवाहिक जीवन का आनन्द नहीं प्राप्त कर पाती। होरी की बेटी रूपा की शादी राम सेवक से होती है। राम सेवक रूपा से उम्र में बहुत ही बड़ा है। रूपा के जीवन का चित्रण विवाह के बाद नहीं हो पाता है। फिलहाल, निर्मला" उपन्यास में इस अनमेल विवाह का त्रासद रूप दिखलाई पड़ता है।

दहेज प्रथा पर रोक:÷-

दहेज प्रथा सामान्य रूप से उस वस्तु या उपहार को कहते हैं जो शादी के समय लड़की के पिता की तरफ से वर पक्ष को दिया जाता है। यह प्रथा इतनी

---

1. निर्मला, पृ0 - 93

कुत्सित होने लगी जिसके कारण लड़कियाँ अभिशाप समझी जाने लगी । कितनी लड़कियों का जन्म लेते ही वध कर दिया जाता था । अनमेल विवाह को बढ़ावा मिला । लड़कियों की त्रासदी का चित्रण प्रेमचन्द के उपन्यास में देखने को मिलता है । " निर्मला " उपन्यास में भाल चन्द्र कहता है " बस चले तो दहेज लेने वालों और दहेज देने वाले दोनों ही को गोली मार दूँ , चाहे फाँसी क्यों न हो जाए। पूछो आप लड़के का विवाह करते हैं या उसे बेचते हैं ? "[1]

"गोदान " उपन्यास में भी दहेज प्रथा का यही विरोध होरी की बेटी सोना के इस वक्तव्य में परिलक्षित होता है " मैं तो सोनारी वालों से कह दूँगी, अगर तुमने एक पैसा भी दहेज लिया, तो मैं तुमसे व्याह न करूँगी ।"[2]

इसी उपन्यास का पुरुष पात्र मथुरा जिसके साथ सोना की शादी होती है वह भी इस दहेज का विरोध करता है ।

अनमेल विवाह के मूल में यही दहेज प्रथा ही है , जिसके कारण रूपा की शादी राम सेवक नामक अधिक उम्र के व्यक्ति से होती है ।

1• निर्मला, पृ0 - 20

2• गोदान , पृ0 - 292

वेश्यावृत्ति का अन्त :-

नारी सुधारवादी कदमों में वेश्यावृत्ति का अन्त एक ऐतिहासिक कदम था । नारी जीवन को विकृत तथा पुरुष के शोषण से बचाने का यह सही रास्ता था । इस कुप्रथा के कारण नारियाँ केवल पुरुष के आमोद-प्रमोद तथा भोग विलास की वस्तु बनी रही । उसके दिल में प्रेम नहीं, मानवता नहीं, आत्म सम्मान नहीं । अपना सब कुछ वह पुरुष वर्ग पर न्योछावर करती है मात्र पैसे के लिए ।

प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में इस कुप्रथा के अन्त करने हेतु प्रयास किया । "गबन" उपन्यास में "जोहरा" जो कि एक नाचने गाने वाली वेश्या है उसमें मानवतावाद का गुण भरा हुआ है । वह "रमा नाथ" के संसर्ग में आने पर अपना पेशा त्याग कर रमानाथ के साथ प्रयाग आ जाती है । रमानाथ स्वयं कहता है "जालपा के त्याग, निष्ठा और सत्यप्रेम ने मेरी आँखे खोली और उससे भी ज्यादा जोहरा के सौजन्य और निष्कपट व्यवहार ने । मैं इसे अपना सौभाग्य समझता हूँ कि मुझे उस तरफ से प्रकाश मिला जिधर औरों को अंधकार मिलता है । विष में मुझे सुधा प्राप्त हो गया ।"[1]

---

1. गबन, पृ0 - 279

"गोदान" उपन्यास में भी यही भावना देखने को मिलती है। दिग्विजय सिंह की पत्नी मीनाक्षी इस कुप्रथा का अन्त करने का प्रयास करती है "वेश्या अभी तक कोने में दबकी खड़ी थी। अब उसका नम्बर आया। मीनाक्षी हंटर तानकर जमाना ही चाहती थी कि वेश्या उनके पैरों पर गिर पड़ी और रोकर बोली - दुल्हिन जी, आज आप मेरी जान बख्श दें। मैं फिर कभी यहाँ न आऊँगी।"[1]

वेश्यावृत्ति समस्या पर लिखा हुआ "सेवासदन" नामक उपन्यास वेश्या जीवन के चित्रण एवं उनका हृदय परिवर्तन करने में काफी सफल हुआ है। एक सामान्य नारी किस प्रकार वेश्यावृत्ति अपनाती है तथा उसका हृदय परिवर्तन किस प्रकार किया जा सकता है। इस उपन्यास में वर्णित है।

विट्ठलदास तथा पदमा सिंह जो कि इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं इस कुप्रथा को मिटाने का पुरजोर प्रयास करते हैं। विट्ठल दास कहते हैं "मेरा पहला उद्देश्य है कि वेश्याओं को सार्वजनिक स्थान से हटाना और दूसरा, वेश्याओं के नाचने - गाने की रस्म को मिटाना।"[2]

---

1. गोदान, पृ0 - 364

2. सेवा सदन, पृ0 - 89

पदम सिंह के इस वक्तव्य में वेश्यावृत्ति के विरोध का स्वर सुनायी देता है " ऐसी अवस्था में क्या यह समझना कठिन है कि सैकड़ों स्त्रियां जो हर रोज बाजार में झरोखों में बैठी दिखायी देती हैं, जिन्होंने अपनी लज्जा और सतीत्व को नष्ट कर दिया है, उनके जीवन का सर्वनाश करने वाले हमीं लोग है। वह हजारों परिवार जो आये दिन इस कुवासना को भँवर में पड़कर विलुप्त हो जाते हैं, ईश्वर के दरबार में हमारा ही दामन पकड़ेंगे, जिस प्रथा मे इतनी बुराइयां हों उसका त्याग करना क्या अनुचित है।"[1]

नारी स्वतन्त्रता :

नारी उद्धार सन्दर्भ में सभी प्रयास निर्मूल साबित होंगे, यदि उन्हें स्वतन्त्रता के अधिकार से वंचित कर दिया जाये। इसलिए नारी - स्वतन्त्रता भी आवश्यक है। उन्हें स्वतन्त्रता, समानता तथा आत्म सम्मान का ज्ञान नवजागरण आन्दोलन में कराया गया। पुरुष वर्ग के प्रति परमुखापेक्षी प्रवृत्ति को समाप्त किया गया। नारी स्वतन्त्रता की भावना प्रेम चन्द के उपन्यासों में पायी जाती है।

1• सेवा सदन, पृ० - 107

"गबन" उपन्यास में वकील कहता है " यह समझ लीजिए कि जिस देश में स्त्रियों की जितनी अधिक स्वाधीनता है वह देश उतना ही सभ्य है। स्त्रियों को कैद में परदे में या पुरुषों से कोसों दूर रखने का तात्पर्य यही निकलता है कि आपके यहाँ की जनता इतनी आचार-भ्रष्ट है कि स्त्रियों का अपमान करने में संकोच नहीं करती।"[1] "गोदान" उपन्यास की महिला पात्र " मालती " का व्यक्तित्व नारी स्वतन्त्रता का ही प्रतीक है वह कहती है - " हम पुरुषों से सलाह नहीं माँगती, अगर वे अपने बारे में स्वतन्त्र है तो स्त्रियाँ भी अपने विषय में स्वतन्त्र है।"[2]

इस प्रकार मालती के चरित्रांकन द्वारा प्रेमचन्द ने नारी स्वतन्त्रता की स्थापना की है।

नारी महिमा की स्थापना :

नारी जीवन में समुचित परिवर्तन करके उनको महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। अब नारी उपेक्षा और अपमान को पीछे ढकेल कर सम्मानजनक

- -

1. गबन, पृ० - 91

2. गोदान, पृ० - 175

जिन्दगी जीने की ओर अग्रसर हुई । नवजागरण आन्दोलन ने नारी गरिमा को विशेष रूप से प्रतिष्ठित किया । उन्हें देवी की उपाधि से विभूषित किया । इस प्रकार नारी जो अभी तक उपेक्षा का जीवन बिता रही थी, सम्मान की पात्र बनी ।

प्रेम चन्द अपने उपन्यासों में नारी जीवन को विशेष रूप से महिमा मण्डित करते हैं । " गबन" उपन्यास में " रमानाथ " अपनी पत्नी " जालपा" से कहता है - " जिस उँचाई पर तुम मुझे ले जाना चाहती हो, वहाँ तक पहुँचने की मुझमें शक्ति नहीं है । वहाँ पहुँच कर शायद चक्कर खाकर गिर पड़ूँ। मैं अब भी तुम्हारे चरणों पर सिर झुकाता हूँ ।" [1]

" कायाकल्प " में " ख्वाजा" कहता है - " उसने हर एक लड़की के लिए नमूना पेश कर दिया । खुदा और रसूल दोनों उसे दुआ दे रहे है । फरिश्ते उसके कदमों का बोसा ले रहे है ।" [2]

" कर्मभूमि " उपन्यास में "मुन्नी " का पति तथा "अमर" दोनों नारी महिमा की भावना से ओत - प्रोत है । "मुन्नी " का पति कहता है - " मैं आपसे सत्य कहता हूँ बाबू जी, वह अगर बरी हो जाये तो मैं उसके चरण धो-

---

1. "गबन" पृ0 - 26

धोकर पीऊँ और घर ले जाकर उसकी पूजा करूँ।"[1]

" सेवा -सदन " उपन्यास में विट्ठल दास प्रबल ढंग से नारी को महिमा मण्डित करता है। वह " सुमन" से कहता है - " सुमन", तुम सच कहती हो, हम बेशक हिन्दू जाति अधोगति को पहुँच गयी और अब तक वह कभी नष्ट हो गयी होती, पर हिन्दू स्त्रियों हो ने अभी तक उसकी मर्यादा को रक्षा की है, उन्हीं के सत्य और सु-कीर्ति ने उसे बचाया है। केवल हिन्दुओं की लाज रखने के लिए लाखों स्त्रियाँ आग में भस्म हो गयी, यही वह विलक्षण भूमि है जहाँ स्त्रियाँ नाना प्रकार के कष्ट भोग कर अपमान और निरादर सहकर पुरूषों की क्रूरताओं को चित्त में न लाकर हिन्दू जाति का मुख उज्जवल करती थी। यह साधारण स्त्रियों का तो पूछना ही क्या।"[2]

"रंगभूमि" उपन्यास में पुत्र के लिए बलिदान को प्रेरणा देने वाली जाह्नवी को सम्बोधित करके " विनय" कहता है - " माता तुम्हें धन्य हैं स्वर्ग में बैठी हुई राजपुतानियों की बोर आत्माएं तुम्हारी आदर्शवादिता पर गर्व करती होंगी।"[3]

- -

1. "कर्मभूमि" पृ0- 46
2. " सेवासदन" , पृ0- 63
3. " रंगभूमि " पृ० - 427

छुआछूत का विरोध :-

इस कुप्रथा के कारण मनुष्य- मनुष्य में घृणा पैदा हो गयी थी। इसलिए समानता का नारा नवजागरण सुधारवादी आन्दोलन में दिया गया।

प्रेम चन्द के उपन्यास में यह स्वर विशेष रूप से मुखरित हुआ है। "गबन" उपन्यास में देवीदीन की बुढ़िया कहती है " आदमी पाप से नीच होता है। खाने - पीने से नीच नहीं होता है। प्रेम से जो भोजन मिलता है, वह पवित्र होता है। उसे तो देवता भी खाते हैं।"[1]

"निर्मला" उपन्यास में भालचन्द्र छुआछूत को ढकोसला बताता है। इसी प्रकार " गोदान" उपन्यास में धनुष यज्ञ के साथ सभी जाति या धर्म के लोग एक साथ बैठकर भोजन किए। इसी उपन्यास में माता दीन तथा सिलिया का जीवन पति-पत्नी रूप में व्यतीत होना भी छुआछूत का विरोध हो लगता है क्योंकि मातादीन पण्डित के पुत्र थे बकि सिलिया चमार की लड़की थी। माता दीन कहते है " नहीं सिलिया जब तक प्राण है, तेरी शरण में रहूँगा। तेरी ही पूजा करूँगा।"[2]

---

1. गबन, पृ० - 160

2. गोदान, पृ० - 388

" कायाकल्प " उपन्यास में मनोरमा छुआछूत का विरोध करती हुई कहती है । दिल से यह भाव बिल्कुल निकाल डालिए कि वह नीची है और आप ऊँचे हैं। इस भाव का लेश भी दिल में न रहने दीजिए ।"[1]

"कर्मभूमि" उपन्यास का अमरकान्त, शान्तिकुमार तथा नैना के व्यक्तित्व में इस कुप्रथा का विरोध परिलक्षित होता है । शान्तिकुमार कहते हैं"तुम्हारे ही ऊपर समाज खड़ा है पर तुम अछूत हो । तुम मन्दिर में नहीं जा सकते । ऐसी अनीति इस अभागे देश के सिवा और कहाँ हो सकती है ? क्या तुम सदैव इसी भाँति पतित और दलित बने रहना चाहते हो ।"[2]

इस प्रकार प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों के माध्यम से इस कुप्रथा का विरोध किया है ।

रूढि एवं कुप्रथाओं का विरोध :

प्रेमचन्द के उपन्यासों में रूढियों एवं कुप्रथाओं का विरोध भी मिलता है । " प्रेम " उपन्यास की विधवापूर्णा कहती है ।" मगर चाहे कुछ हो, मैं इन बालों को मुड़वाकर मुण्डी नहीं बनना चाहती । ईश्वर ने सब कुछ तो हर लिया, अब क्या इन बालों से भी हाथ धोऊँ ।"[3]

1· कायाकल्प, भाग-2, पृ0 - 37

2· कर्मभूमि, पृ0 - 116

विरोध का यह स्वर " गोदान " उपन्यास में ज्यादा मुखर हुआ है मेहता कहते हैं " हम व्यर्थ का भार अपने ऊपर लादकर रूढ़ियों और विश्वासों के इतिहासों के मलवे के नीचे दबे पड़े हैं, उठने का नाम लेते, वह सामर्थ्य ही नहीं रही, जो शक्ति जो स्फूर्ति मानव धर्म को पूरा करने में लगनी चाहिए थी, सहयोग में, भाई चारे में, वह पुरानी अदावतों का बदला लेने और बाप-दादों का ऋण चुकाने की भेंट हो जाती, [1] गोदान उपन्यास की ही नारी धनिया स्थान - स्थान पर रूढ़ि और कुप्रथाओं के विरोध में खड़ी होती है ।

" सेवासदन " में भोली नामक वेश्या के व्यक्तित्व में भी विरोध का यह स्वर सुनायी पड़ता है । वह कहती है " यह बेहूदा रिवाज यहीं के लोगों में है कि औरत को इतना जलील समझते हैं, नहीं तो सब मुल्कों में औरतें आजाद हैं, अपनी पसन्द से शादी करती हैं और जब उससे रास नहीं आती तो तलाक दे देती हैं लेकिन हम सब वही पुरानी लकीर पीटे चली जा रही हैं ।" [2]

गोदान उपन्यास में सूदखोरी तथा नशाबन्दी का भी विरोध किया गया है । मेहता कहते हैं " आज आपके सामने प्रतिज्ञा करता हूँ कि शराब की एक बूँद भी कण्ठ के नीचे न जाने दूँगा ।" [3]

- -

1. गोदान, पृ. - 217
2. सेवा सदन, पृ0 - 40
3. गोदान पृ0 - 217

"भिक्षा वृत्ति" का उन्मूलन भी समाज सेवा का एक अंग था । प्रेमचन्द ने भी इसके उन्मूलन पर बल दिया ।"रंगभूमि" में सूरदास कहता है " सुनता हूं, अंधे कुर्सी, मोढ़े , दरी, टाट बुन सकते है, यह काम किसले सी खू, कुछ भी हो अब भीख न मागूँगा ।" [क]

राजनैतिक सुधारवादी दृष्टिकोण :

राजनीति के क्षेत्र में भी नवजागरण के परिणाम स्वरूप सुधार प्रारम्भ हुए । अंग्रेजों ने जो साम्प्रदायिकता का बीज सम्पूर्ण देश में बोया था । उसका अन्त करना बहुत ही आवश्यक हो गया । इसलिए साम्प्रदायिकता का विरोध किया गया । देश - प्रेम, अंग्रेजी नीति का विरोध , स्वतन्त्रता पर बल दिया । प्रेमचन्द के उपन्यासों में राजनीति के ये सुधारवादी बिन्दु पाये जाते हैं ।

(1) साम्प्रदायिकता का विरोध :-

" कायाकल्प " उपन्यास में साम्प्रदायिकता का सबसे ज्यादा विरोध मिलता है । हिन्दू - चक्रधर, वागीश्वरी तथा मुसलमान ख्वाजा साहब इसके मुख्य संवाहक हैं । चक्रधर कहता है" हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध सभी सत्कर्म

(क) रंग भूमि, पृ0 - 65

और सद विचार की शिक्षा देते हैं। हमें कृष्ण, राम, ईसा, मुहम्मद, बुद्ध सभी महात्माओं का समान आदर करना चाहिए। ये मानव जाति के निर्माता हैं जो इनमें से किसी का अनादर करता है या उसकी तुलना करने बैठता है। वह अपनी मूर्खता का परिचय देता है।"[1]

इसी उपन्यास की महिला पात्र वागीश्वरी कहती है " नित्य समझाती रही, इन झगड़ों में न पड़ो। न मुसलमानों के लिए दुनिया में कोई दूसरा ठौर-ठिकाना है, न हिन्दुओं के लिए। दोनों इसी देश में रहेंगे और इसी देश में मरेंगे। फिर आपस में क्यों लड़ मरते हो, क्यों एक दूसरे को निगल जाने पर तुले हुए हो? न तुम्हारे निगले वे निगले जायेंगे, न उनके निगले तुम निगले जाओगे। मिल-जुलकर रहो, उन्हें बड़े होकर रहने दो, तुम छोटे ही होकर रहो, मगर मेरी कौन सुनता है।"[2]

इसी उपन्यास के एक अन्य मुसलमान पात्र ख्वाजा में भी साम्प्रदायिक एकता की भावना दिखायी पड़ती है, वह कहता है - " मेरा तो यह कौल है कि हिन्दू रहो, चाहे मुसलमान, खुदा के सच्चे बन्दे रहो। सारी खूबियां किसी एक कौम के हिस्से में नहीं आयी। न सब मुसलमान पाकीजा है, न सब हिन्दू देवता, इसी तरह न सभी हिन्दू काफिर हैं न सभी मुसलमान मोमिन।

1• कायाकल्प, प्रथम भाग, पृ० - 193

जो आदमी दूसरी कौम से जितनी नफरत करता है, समझ लीजिए कि वह खुदा से उतनी ही दूर है।" [1]

प्रेम चन्द जी के "कर्मभूमि" उपन्यास में भी साम्प्रदायिक एकता की भावना परिलक्षित होती है। इस उपन्यास के " हाफिज हलीम " जो कि "सलीम " का पिता है, कहता है - " आइये, हम और आप गले मिल कर उस देवी की रूह को खुश करें जो हमारी सच्ची रहनुमा, तारीकी में सुबह का पैगाम लाने वाली सुपेदी थी, खुदा हमें तौफीक दे कि इस सच्चे शहीद से हम हकपरस्ती और खिदमत का सबक हासिल करें।" [2]

" रंगभूमि" उपन्यास में भी साम्प्रदायिक एकता की भावना दृष्टिगोचर होती है। इस उपन्यास की महिला पात्र सोफिया कहती है - " ईसा और कृष्ण में कितनी समानता है, पर उनके अनुचरों में कितनी विभिन्नता। कौन कह सकता है कि साम्प्रदायिक भेदों ने हमारी आत्माओं पर कितना अत्याचार किया है। [3]

---

1. कायाकल्प, भाग - दो, पृ० - 162
2. कर्मभूमि, पृ० - 219
3. रंगभूमि, पृ० - 106

इसी उपन्यास की " जाह्नवी " में भी साम्प्रदायिक एकता की भावना झलकती है, वह कहती है - " क्या कहा ? मुसलमान है । कर्तव्य के क्षेत्र में हिन्दू और मुसलमान का भेद नहीं, दोनों एक ही नाव में बैठे हुए हैं, डूबेंगे, तो दोनों डूबेंगे, बचेंगे तो दोनों बचेंगे ।"[1]

रंगभूमि उपन्यास में सोफिया तथा विनय की शादी होती है । सोफिया ईसाई लड़की है तथा विनय हिन्दू युवक है । इस प्रकार ईसाई तथा हिन्दू धर्म में एकता की भावना दर्शायी गयी है ।

कृषक एवं श्रमिक एकता :

कृषक एकता प्रेमचन्द के " गोदान " उपन्यास में पायी जाती है । " भोला " "होरी" से कहता है - " हम लोग " तो बैल है और जुतने के लिए पैदा हुए हैं उस पर एक दूसरे को देख नहीं सकता । एका का नाम नहीं, एक किसान दूसरे के खेत पर न चढ़े तो जाफा कैसे करें, प्रेम तो संसार से उठ गया ।"[2]

---

1. " रंगभूमि" , पृ० - 538

2. " गोदान " पृ० - 21

इसी उपन्यास के " राम सेवक " नामक पात्र में कृषक एकता की भावना विशेष रूप से बलवती हुई है । " राम सेवक " कहता है - " मैंने गाँव भर में डोड़ी पिटवा दी कि कोई बेसी लगान न दो और न खेत छोड़ो, हमको कोई कायल कर दे, तो हम जापर देने को तैयार हैं । लेकिन जो तुम चाहो कि वे किसानों को पीसकर पी जाये तो यह न होगा ।" [1]

कृषक एकीकरण की भावना " रंगभूमि " नामक उपन्यास में भी देखने को मिलती है । " दीवान साहब " कहते हैं - " कोई कोर्ट में कृषकों की सभाएं बनाता फिरता है कोई बीकानेर में बेगार की जड़ खोदने पर तत्पर हो रहा है कोई मारवाड़ में रियासत के उन करों का विरोध कर रहा है जो परम्परा से वसूल होते चले आये हैं ।" [2]

श्रमिक जागरण के परिणामस्वरूप श्रमिक मजदूरों में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी । शोषण के खिलाफ आवाज उठाये, फैक्टरियों में, कारखानों में हड़तालें हुई " गोदान " उपन्यास में भी दोनों मिल में हड़ताल एवं आगजनी

---

1. गोदान , पृ० - 394

2. "रंगभूमि", पृ० - 213

की घटना वर्णित है । " मजदूरों का संघ हड़ताल करने को बैठा हुआ था इधर मजूरी घटी और उधर हड़ताल हुई, उसे मजूरी में धेले की कटौती भी स्वीकार न थी ।"[1]

देश - प्रेम :-

नवजागरण आन्दोलन का प्रारम्भ ही देशप्रेम की भावना से अभिभूत होने का परिणाम है । इसलिए देशप्रेम की भावना हर सुधारवादी संगठनों में देखने को मिलती है ।

प्रेमचन्द इस भावना से भरे हुए हैं, उनमें देश प्रेम सर्वोपरि है । " कायाकल्प " नामक उपन्यास में "चक्रधर " "मनोरमा" से कहता है - "सारा देश गुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है, फिर भी हम अपने भाइयों की गर्दन पर छुरी करने से बाज नहीं आते इतनी दुर्दशा पर भी हमारी आँखे नहीं खुलती, जिनसे लड़ना चाहिए उनके तो तलुवे चाटते हैं, और जिनसे गले मिलना चाहिए उनकी गर्दन दबाते हैं ।"[2]

- -

1. " गोदान " पृ० - 316

2. "कायाकल्प " भाग - प्रथम, पृ० - 315

" गोदान" उपन्यास में " राय साहब " " ओंकारनाथ " सम्पादक से कहते हैं - " आप बनते तो हैं आदर्श और सिद्धान्तवादी पर अपने अपने फायदे के लिए देश का धन विदेश भेजते हुए आपको जरा भी खेद नहीं होता ?"[1]

ओंकारनाथ " भी अपने वक्तव्य में देश प्रेम पर प्रकाश डालते हैं वे कहते हैं - " मैं जनता की सेवा करने आया था और यथाशक्ति किये जाता हूँ, राष्ट्र का कल्याण हो, यही मेरी कामना है ।"[2]

" सेवा सदन " उपन्यास में गायनाचार गाता है - " दयामयी भारत को अपनाओं ।

x x

सोये आर्य जाति के गौरव जननि

फेर जगाओ

दुलड़ा पराधीनता रूपी बेड़ी काट बहाओ ।"[3]

"रंगभूमि " उपन्यास में स्वदेश प्रेम " सोफिया" " प्रभुसेवक", "विनय", "जाह्नवी" कुँवर सिंह, के व्यक्तित्व में परिलक्षित होता है । "सोफिया" कहती है - " मैं

- -

1. गोदान, पृ0 - 63

2. गोदान, पृ0 - 187

3. सेवा सदन, पृ0 - 231

खड़ी होकर कह दूँ, मैं अपने को भारत सेवा के लिए समर्पित करती हूँ ।"[1] देश प्रेम की भावना " गबन " उपन्यास में भी पायी जाती है - देवीदीन कहता है - " जिस देश में रहते हैं, जिसका अन्न जल खाते है, इनमें लिये इतना भी न करें तो जीने को धिक्कार है, दो जवान बेटे इसी स्वदेशी को भेंट कर चुका हूँ । भैइया।" {द}

गाँधी वादी विचारधारा :

गाँधी जी के राजनीति में आ जाने से बुद्धिजीवी वर्ग विशेष रूप से प्रभावित हुआ । रचनाकारों ने उनकी राजनीतिक विचारधारा को अपनी रचनाओं में स्थान दिया । प्रेमचन्द भी इससे वंचित नहीं रह सके । उनमें जो साम्प्रदायिक एकीकरण तथा छुआछूत विरोध की भावना पायी जाती है वह गाँधीवादी विचारधारा का ही परिणाम है ।

" रंगभूमि" उपन्यास में सूरदास के माध्यम से ग्रामीण बस्तियों को तहस-नहस करके कल-कारखानों की स्थापना का विरोध किया जाता है । यह निश्चित

- -

1. "रंगभूमि, पृ० - 38

2. "गबन" पृ० - 150

रूप से गाँधीवादी विचारधारा का ही परिणाम है ।

कलकारखानों का विरोध करते हुए "जमुनी" कहती है - " मूड़ी काटे कारखाने बनाने चले हैं, दुनियाँ को उजाड़ कर अपना घर भरेंगे ।"[1]

गाँधी जी के स्वदेशी आन्दोलन का भी प्रभाव प्रेमचन्द के उपन्यासों में परिलक्षित होता है । "गबन" उपन्यास में देवी-दीन स्वदेशी पर बल देता है । वह देश भक्तों को उलाहना देता हुआ कहता है " गरीबों को लूटकर विलायत का घर भरना तुम्हारा काम है इसीलिए तुम्हारा इस देश में जनम हुआ है । हाँ रोये जाव, विलायती सराबें उड़ाओं, विलायती मोटरें दौड़ाओं, विलायती मुरब्बे और अचार चखो, विलायती बरतनों में खाओ, बिलायती दवाइयाँ पियों, पर देश के नाम पर रोये जाव ।"[2]

"रंगभूमि" उपन्यास में जान सेवक विदेशी वस्त्रों के उपयोग का विरोध तथा स्वदेशी पर बल देते हैं " मैं इसी विचार और उद्देश्य से जाऊँगा कि स्वदेशी व्यापार की रक्षा कर सकूँ । मैं प्रयत्न करूँगा कि विदेशी वस्तुओं पर बड़ी कठोरता से कर लगाया जाए ।"[3]

- -

1. रंगभूमि, पृ० - 502
2. गबन, पृ० - 150
3. रंगभूमि , पृ० - 386

स्वतन्त्रता पर बल .-

" कायाकल्प" उपन्यास में हरिसेवक सिंह विशाल सिंह से चक्रधर के विचार समझाता हुआ कहता है " ये लोग सबसे कहते फिरते हैं कि ईश्वर ने सभी मनुष्यों को बराबर - बराबर बनाया है, किसी को तुम्हारे उपर राज्य करने का अधिकार नहीं है, किसी को तुमसे बेगार लेने का अधिकार नहीं।"[1]

"रंगभूमि " उपन्यास का नायक विनय कहता है " मैं वचन और कर्म में इतनी स्वतन्त्रता अनिवार्य समझता हूँ, जो हमारे आत्म सम्मान की रक्षा करें।[2]

बिना स्वतन्त्रता के नवजागरण का सपना अधूरा था । इसलिए स्वतन्त्रता,समानता, तथा विश्व बन्धुत्व को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया गया। यह फ्रान्स की राज्य क्रान्ति के परिणाम स्वरूप देश में समान रूप से समादृत हुई ।

धार्मिक सुधार के बिन्दु

ऐकेश्वरवाद की स्थापना :

" नवजागरण" आन्दोलन के परिणामस्वरूप एकेश्वरवाद की स्थापना हुई । प्रेमचन्द भी इससे अछूत नहीं रहे ।" कायाकल्प" में चक्रधर कहता

- -

1. कायाकल्प, पृ० - 124

2. रंगभूमि पृ० - 522

है " मैं एक खुदा का कायल हूँ । वही सारे जहान का खालिक है और मालिक है । फिर और किस पर ईमान लाऊँ ।"[1]

प्रेमचन्द का यह एकेश्वरवादी विचार ब्राह्म समाज में प्रभावित लगता है मिस्टर सेवक कहते हैं " धर्म हमारी रक्षा और कल्याण के लिए है । अगर वह हमारी आत्मा को शान्ति और देह को सुख नहीं प्रदान कर सकता, तो मैं उसे पुराने कोट की भाँति उतार फेंकना पसन्द करूँगा जो धर्म हमारी आत्मा का बन्धन हो जाया करता है, उससे जितनी जल्द हम गला छुड़ा ले, उतना ही अच्छा ।"[2]

शिक्षा पर बल :

सम्पूर्ण सुधारवादी संगठन बात से आश्वस्त थे कि शिक्षा के प्रचार-प्रसार के बिना नवजागरण सम्पूर्ण देश में नहीं फैलाया जा सकता है । इसलिए शिक्षा प्रसार पर बल दिया गया ।

" कर्मभूमि" उपन्यास में डाक्टर कहता है " तालीम में भी खर्च ज्यादा करो, ज्यादा ऊँचा ओहदा पाओगे । मैं चाहता हूँ ऊँची से ऊँची लियाकत हासिल कर सके और ऊँचा से ऊँचा ओहदा पा सके । यूनीवर्सिटी के दरवाजे में सबके लिए

---

1. कायाकल्प, भाग।-।, पृ0- 33

2. रंगभूमि, पृ0 - 548

खुले रखना चाहता हूँ।[1]

अशिक्षा ही सभी कुप्रथाओं की जननी है। "सेवा सदन" में सेठ बलभद्र कहते हैं। "कोई कुप्रथा उपेक्षा या निर्दयता से नहीं मिटती। उसका नाश शिक्षा, ज्ञान और दया से होता है।[2]

इस प्रकार शिक्षा के प्रचार - प्रसार पर भी बल दिया गया है।

मानवतावाद :

मानवतावाद नवजागरण का मुख्य सन्देश था। गरीब असहायों के प्रति प्रेम, रोगियों की सेवा भावना इसी के परिणाम स्वरूप प्रचलित हुए।

प्रेमचन्द का सम्पूर्ण साहित्य इसी भावना से ओत-प्रोत है। "गबन" उपन्यास की नायिका जालपा- दिनेश के घर जाकर उसके बाल-बच्चों तथा बूढ़ी माँ की सेवा करती है। क्योंकि रमानाथ ने उस दिनेश के खिलाफ झूठी गवाही दी थी।

"प्रेमा" उपन्यास में "अमृत राय" का जीवन मानवतावाद से भरा हुआ है। "कायाकल्प" उपन्यास का नायक "चक्रधर" तो समाज में समानता लाने के लिए हर सम्भव प्रयास करता है। सामाजिक असमानता पर वह कहता है कि-

---

1. कर्मभूमि, पृ० - 45

2. सेवासदन, पृ० - 127

यह कौन सा इन्साफ है कि कोई तो दुनिया के मजे उड़ाये, कोई धक्के खाये ? एक जाति दूसरी का रक्त चूसे और मूछों पर ताव दें। दूसरी कुचली जाये और दाने - दाने को तरसे। यह अन्यायमय संसार ईश्वर की सृष्टि नहीं हो सकता।[1]

"गोदान" उपन्यास में "धनिया, मानवतावादी विचार के कारण ही सामाजिक रूप से निष्कासित अपनी बहू को अपने घर में रखती है तथा "सिलिया" को भी शरण देती है। इसी उपन्यास के "राय साहब" अपने मानवतावादी विचार को, व्यक्त करते हुए कहते हैं - "मैं इसे स्वीकार करता हूँ कि किसी को दूसरे के श्रम पर मोटे होने का अधिकार नहीं है, उपजीवी होना घोर लज्जा की बात है। कर्म करना प्राणी मात्र का धर्म है। समाज की ऐसी व्यवस्था जिसमें कुछ लोग मौज करे और अधिक लोग पिसे और रोये, कभी सुखद नहीं हो सकती। पूँजी और शिक्षा जिसे मैं पूँजी का ही एक रूप समझता हूँ, इनका किला जितनी जल्द टूट जाये, उतना ही अच्छा है। जिन्हें पेट की रोटी मयस्सर नहीं, उनके अफसर और नियोजक दस - दस, पाँच-पाँच हजार फटकारें यह हास्यास्पद है और लज्जास्पद भी।"[2] "मालती अपने जीवन को समाज सेवा में ही नियोजित करती है।

- -

1. कायाकल्प, भाग -1, पृ0 - 193

2. "गोदान" पृ0 - 57

" कर्मभूमि" उपन्यास में " अमरकान्त" तथा मुन्नी" दोनों का व्यक्तित्व मानवतावाद से भरा हुआ है । इस उपन्यास की महिला पात्र मुन्नी कहती है - " जिसे देखो, गरीबों का ही रक्त चूसने को तैयार है, हम जमा करने को नहीं माँगते, न हमें भोग - विलास की इच्छा है, लेकिन पेट को रोटी और तन ढाँकने को कपड़ा तो चाहिए ।"[1]

" सेवा - सदन " में " पदम सिंह " अपने भाई को समझाते हुए कहते हैं - आप तीन सौ की जगह पाँच सौ रुपये के कम्बल लेकर अमोला के दीन -दुखियों में बाँट दीजिए तो कैसा हो? कम से कम दो सौ मनुष्य आशीर्वाद देंगे और जब तक कम्बल का एक - एक धागा भी रहेगा आपका यश गाते रहेंगे और यदि यह स्वीकार न हो तो अमोला में दो सौ रुपये की लागत से एक कुआँ बनवा दीजिए।[2]

इस प्रकार प्रेमचन्द के सम्पूर्ण उपन्यास मानवतावाद का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

प्रेस के विकास पर बल :

नवजागरण आन्दोलन का प्रचार - प्रसार समाचार पत्र और और पत्रिकाओं के माध्यम से होता था । नवजागरण के संदेश प्रसारण के लिए पत्र-

---

1· कर्मभूमि, पृ० - 187

2· सेवा सदन, पृ० - 108

पत्रिकाओं को वृद्धि आवश्यक थी । इसलिए प्रेस - विकास पर बल दिया गया ।

" गोदान" उपन्यास में प्रेमचन्द इसी भावना की पुष्टि करते हैं । इस उपन्यास के ओंकारनाथ " नामक एक पात्र कहते हैं - खेद यही है कि पत्रों की ओर से जनता कितनी उदासीन है । स्कूल और कालेजों और मन्दिरों के लिए धन की कमी नहीं है पर आज तक एक भी ऐसा दानी न निकला जो पत्रों के प्रचार के लिए दान देता, हालांकि जन- शिक्षा का उद्देश्य जितने कम खर्च में पत्रों से पूरा हो सकता और किसी तरह नहीं हो सकता जैसे शिक्षालयों को संस्थाओं द्वारा सहायता मिला करती है ऐसे ही अगर पत्रकारों को मिलने लगे तो इन बेचारों को अपना जितना समय और स्थान किसानों को भेंट करना पड़ता है वह क्यों करना पड़े ?[1]

मातृभाषा से प्रेम .

नवजागरण आन्दोलन में मातृभाषा के प्रति लगाव तथा उसके व्यवहार पर बल दिया गया था । " सेवा - सदन" उपन्यास में प्रेमचन्द मातृ-भाषा के पक्ष में अपना विचार प्रकट करते हैं । इस उपन्यास का मुख्य पात्र

---

1. " गोदाम " पृ० - 187

कुँवर डॉ० श्यामाचरण से कहते हैं; " इसका प्रायश्चित यही है कि आप मित्रों से अपनी मातृभाषा का व्यवहार किया कीजिए ।[1] आगे फिर कहता है -" जब तक आप जैसे विद्वान लोग अंग्रेजी के भक्त बने रहेंगे, कभी एक सार्वदेशिक भाषा का जन्म न होगा, मगर यह काम कष्ट साध्य है, इसे कौन करें ? यहाँ तो लोगों को अंग्रेजी जैसे समुन्नत भाषा मिल गयी, सब उसी के हाथों बिकगये ।"[2]

युक्तिवादी चिन्तनधारा :

नवजागरण आन्दोलन को प्रगतिशील एवं लोकप्रिय बनाने में युक्तिवादी चिंतनधारा ही समाहित है । सम्पूर्ण सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक चिन्तन धाराओं के पीछे युक्तिवादी चिन्तनधारा का ही प्रमुख योगदान है । किसी भी परम्परा को आत्मसात करने तथा उसका त्याग करने का निर्णय लेने की क्षमता ही युक्तिवादी चिन्तनधारा कही जा सकती है ।

प्रेम चन्द भी इस तर्कवाद से प्रभावित हुए उन्होंने " सेवा सदन " नामक उपन्यास में इस विचारधारा का क्रियान्वयन किया है ।"पद्म सिंह" कहते हैं -

---

1· सेवा सदन, पृ० - 174

2· सेवा सदन, पृ० - 174

" यह कितनी निर्दयता है कि जिस समय हमारा आत्मीय युवक ऐसा कठिन व्रत धारण कर रहा हो, उस समय हम आनंदोत्सव मनाने बैठें। वह इस गुरुत्तर भार से दबा जाता हो और हम नाच - रंग में मस्त हों। अगर दुर्भाग्य से आजकल यही उल्टी प्रथा चल पड़ी है तो क्या यह आवश्यक है कि हम भी उसी लकीर पर चलें? शिक्षा का कम से कम इतना प्रभाव तो होना चाहिए कि धार्मिक विषयों में हम मूर्खों की प्रसन्नताओं को प्रधान न समझें।"[1]

स्वसंस्कृति परगर्व :

आर्य समाज ने वेदों की ओर चलो " का नारा दिया था। अपनी पुरानी संस्कृति पर गर्व किया। पाश्चात्य संस्कृति का विरोध किया। प्रेमचन्द के उपन्यास सेवासदन में भी यह भावना परिलक्षित होती है। कुँवर कहते हैं " हम सब राजा हों या रंक, गुलाम है, हम अगर अपढ़, निर्धन, गंवार हैं तो थोड़े गुलाम हैं - हम अपने राम का नाम लेते हैं, अपनी गाय पालते हैं, अपनी गंगा में नहाते हैं और हम यदि विद्वान, उन्नत, ऐश्वर्यवान हैं तो बहुत गुलाम हैं, जो विदेशी भाषा बोलते हैं, कुत्ते पालते हैं और अपने देश वासियों को

---

1. सेवा सदन, पृ0 - 109

नीच समझते हैं।[1]

इस प्रकार प्रेमचन्द के उपन्यास में नवजागरण सुधारवादी आन्दोलन के सामाजिक, राजनैतिक, तथा धार्मिक क्षेत्र के मुख्य बिन्दु पूर्ण रूपेण व्यवस्थापित हैं।

xxx xxxx

---

1. सेवा सदन, पृ0 -172

पंचम अध्याय

शरतचन्द्र एवं प्रेमचंद के उपन्यासों में साम्य एवं दृष्टि भेद

शरतचन्द्र बंग नवजागरण के प्रमुख संवाहक हैं। सामाजिक रीति-नीतियों का पूर्णरूप से निर्वाह उन्होंने अपने उपन्यासों में नहीं किया है। वे सामाजिक मान्यतायें, विचार धाराएं उनके उपन्यासों में समादृत नहीं हो सकी हैं, जो उनके अनुसार अतार्किक एवं अव्यावहारिक है। मानवतावाद का यदि कहीं कोई भी बिन्दु दिखाई पड़ता है तो शरत चन्द्र उसे आत्मसात कर लेते हैं। चाहे वह समाज के किसी भी वर्ग में विद्यमान हो। इसीलिए उनके उपन्यासों में वेश्यायें तथा कई अन्यान्य अछूत जातियाँ भी सम्मानजनक स्थान पाती हैं।

प्रेमचन्द हिन्दी नवजागरण के मुख्य उन्नायक हैं। प्रेमचन्द मानवता की सुदृढ़ भाव भूमि पर स्थिर हैं। हिन्दी नवजागरण, बंग नवजागरण की अपेक्षा राजनैतिक कुछ ज्यादा ही रहा, इसलिए प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी अपेक्षाकृत राजनीतिक पुट कुछ ज्यादा ही देखने को मिलते हैं। सामाजिक उपन्यासों में भारत की दीन दुखी जनता, गाँव के अपढ़ और भोले किसान, शहर के शोषित मजदूर, निम्न वर्ग के असंख्य श्रमिक वर्ग ही उनके अधिकांश उपन्यासों के नायक हैं। इसके अतिरिक्त उच्च वर्ग के राजा, उद्योग पति, जमींदार और हुक्काम के साथ ही व्यवसायिक, पुराणपंथी पंडित के भी चित्रण होते हैं। किन्तु इन सबमें प्रेमचन्द की सहानुभूति समाज के निम्न वर्ग एवं शोषितों के प्रति ही रही।

शरतचन्द्र और प्रेमचन्द में नवजागरण कालीन दृष्टि बहुत कुछ समान रूप से पायी जाती है ।

1. सामाजिक दृष्टि .

विधवा विवाह समर्थक . नवजागरण सुधारवादी आन्दोलन समाज में परिष्कार करना चाहता था । एक ऐसे समाज के निर्माण की कल्पना की गयी जो मानवता-वादी हो, तार्किक हो, शोषणमुक्त हो, भाई - चारे की भावना से ओत- प्रोत हो ।

इस प्रकार शोषण मुक्त समाज के दर्शन दो साहित्यकारों के उपन्यासों में परिलक्षित होते हैं । समाज का सबसे शोषित तबका नारी है । उसमें भी वेश्याएं और विधवायें पुरुष के शोषण के अत्याचारों की सबसे अधिक शिकार हुई । हैं । शरतचन्द्र ने इस वर्ग के उत्थान के लिए अपने उपन्यासों के माध्यम से बहुत प्रयास किया है । माधवी सुरेन्द्र नाथ नामक युवक से अपना प्रणय सम्बन्ध स्थापित करती है । तथा अपने पति योगेन्द्र नाथ को जमीन में हिस्सा लेने के लिए न्यायालय और कचहरी का चक्कर लगाती है । "शुभदा " नामक उपन्यास में ललना जो कि बाल विधवा है, उसकी शादी सुरेन्द्रनाथ से हो जाती है ।

इस प्रकार शरत चन्द्र के उपन्यास में वातावरण विधवाओं के लिए मुक्त है। वह पर पुरुष से प्रेम भी कर सकती है तथा विवाह भी, एवं सम्मानजनक जिन्दगी भी जी सकती है।

प्रेमचन्द भी नारी जीवन की इस त्रासदी से परिचित थे। उन्होंने विधवाओं को मुक्त आकाश प्रदान करने का प्रयास किया। प्रेमचन्द की नारियाँ पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक तार्किक लगती हैं। विधवा के प्रति प्रेमचन्द की व्यापक सहानुभूति है। विधवाएं भी समाज के सम्मानजनक और बेहतर ढंग से जीवन जी सकती हैं। ऐसा विचार प्रेमचन्द का था। वे न केवल सिद्धान्त रूप में इसे स्वीकार करते हैं बल्कि उसे व्यवहार रूप में भी उतारते हैं। उन्होंने स्वयं एक विधवा से विवाह किया था। " गोदान " उपन्यास की विधवा "झुनिया" की शादी "गोबर" नामक युवक से होती है। " गोबर" समाज भय से लखनऊ भाग जाता है। किन्तु झुनिया अपने ससुर "होरी" सास " धनिया" के साथ जीवन बिताने लगती है। इस प्रकार प्रेमचन्द विधवा जीवन को सम्मानक स्थिति प्रदान करने में सफल होते हैं।

" प्रेमा" उपन्यास में विधवा जीवन के अभिशाप्त एवं तिरस्कृत जीवन को चित्रित किया गया है तथा विधवा विवाह का भी समर्थन किया गया है।

लक्ष्मी, रामकली तथा पूर्णा एवं प्रेमा की शादी विधवा विवाह का ही समर्थन है। शरतचन्द्र ने समाज की उपेक्षित विधवाओं को सम्मान जनक स्थान दिया है। तत्कालीन समाज में विधवा के लिए सम्मानजनक जिन्दगी जीना असम्भव था। उसे या तो पति के साथ चिता में जलना पड़ता था या फिर पिता के घर में एक त्रासपूर्ण जीवन जीने को मजबूर किया जाता था। पर पुरुष से प्रेम तो क्या दर्शन भी करना पाप समझा जाता था। किसी भी मांगलिक अवसर पर उनकी उपस्थिति अशुभ सूचक मानी जाती थी। अधिकांश विधवायें काशी जाकर अपना जीवन एक सन्यासिनी के रूप में बिताया करती थीं।

शरतचन्द्र ने इस अमानवीय कुप्रथा के विरोध में अपनी लेखनी उठायी। उनके उपन्यासों की विधवायें मुक्त रूप से प्रेम भी करती हैं तथा शादी भी करती हैं। पति की जायदाद में हिस्सा लेने के लिए न्यायालयों और कचहरियों का चक्कर भी लगाती हैं। " बड़ी दीदी " उपन्यास की नायिका " माधवी " का जीवन इसी प्रकार का है।

"गोदान" उपन्यास में "नोहरा" नामक विधवा की शादी " शोभा " नामक व्यक्ति से होती है। इस प्रकार उपन्यास साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर प्रेमचन्द तथा शरतचन्द्र दोनों में विधवा विवाह का समर्थन पाया जाता है।

किन्तु शरतचन्द्र की कुछ विधवायें परम्परावादी प्रवृत्ति को नहीं छोड़ सकी है, वे या तो पति के घर में ही रहने को विवश है अथवा समाज से पलायन कर देती हैं ।

"ब्राह्मण की बेटी " उपन्यास की विधवा " ज्ञानदा " पति के घर में ही अपना जीवन बिता देती है। " चरित्र हीन " उपन्यास की विधवा किरणमयी " दिवाकर " को लेकर समाज से बाहर चली जाती है ।

इस प्रकार शरत्चन्द्र की विधवाओं के कई रूप हैं । कुछ तो सधवा के रूप में जीवन व्यतीत करती हैं, कुछ ससुर के घर जीवन व्यतीत करती हैं, कुछ समाज के बाहर चली जाती हैं । लेकिन ज्यादातर विधवायें सधवा के रूप में अपना जीवन व्यतीत करना चाहती हैं ।

इस प्रकार शरतचन्द्र और प्रेमचन्द दोनों साहित्यकारों की दृष्टि में विधवा विवाह तर्कसंगत एवं मानवीय है । इसी कारण विधवा विवाह का समर्थन दोनों रचनाकारों की रचनाओं में मिलता हैं ।

वेश्यावृत्ति उन्मूलन परक दृष्टि :

समाज में सबसे तिरस्कृत जीवन व्यतीत करने वाली वेश्यायें होती हैं । उनका कुछ भी अपना नहीं होता है । वे सबकी होती हैं । लेकिन

उन्हें अपना कहने वाला कोई नहीं होता । शोषण तथा अपमान इनकी नियति बन गयी होती है । समाज का पुरुष वर्ग इन्हें अपने आमोद- प्रमोद तथा वासना तृप्ति का साधन मात्र समझता है । जीवन में सम्मान उनको कभी मिलता ही नहीं ।

शरतचन्द्र वेश्या जीवन की विवशता से पूर्ण परिचित थे । उन्होंने महसूस किया कि वेश्यायें अपना पेशा छोड़कर सामान्य नारी का जीवन व्यतीत करना चाहती है किन्तु समाज उन्हें स्वीकृति नहीं देता । इस अमानवीय कुप्रथा का अंत करने के लिए शरतचन्द्र ने अपना सशक्त उपन्यास " श्रीकान्त " लिखा । "श्रीकान्त " में " राजलक्ष्मी " जो कि प्यारी बाईनाम से गाने बजाने का कार्य करती है । उसकी शादी " श्रीकान्त " से सम्पन्न होती है । प्यारी बाई अनेक शैक्षणिक संस्थायें खुलवाती हैं । चिकित्सालयों की स्थापना करवाती है। इस प्रकार उसे सामाजिक मर्यादा प्राप्त होती है ।

"गबन" उपन्यास में जोहरा रमानाथ के साथ कलकत्ता से प्रयाग आ जाती है तथा अपना पेशा (नाचने-गाने का) समाप्त कर देती है । जिसकी प्रशंसा रमानाथ मुक्त कंठ से करता है -

" जालपा के त्याग, निष्ठा और सत्यप्रेम ने मेरी आँखे खोली और उससे भी ज्यादा "जोहरा" के सोजन्य और निष्कपट व्यवहार ने, मै इसे अपना सोभाग्य

समझता हूँ कि मुझे उस तरफ से प्रकाश मिला जिधर औरों को अंधकार मिलता है। विष में मुझे सुधा प्राप्त हो गयी।"[1]

इसी प्रकार "गोदान" उपन्यास में "दिग्विजय सिंह" की पत्नी "मीनाक्षी" के द्वारा प्रताड़ित किये जाने पर वेश्या अपना पेशा छोड़ने का वचन लेती है। वेश्याओं के नाचने - गाने की रस्म को मिटाने तथा सार्वजनिक स्थान से हटाने का उपक्रम "सेवा- सदन" नामक उपन्यास में किया गया है। एक साधारण नारी के वेश्या बनने एवं वेश्याओं के हृदय - परिवर्तन का सुन्दर चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। विट्ठलदास" कहते हैं - मेरा पहला उद्देश्य है कि वेश्याओं को सार्वजनिक स्थान से हटाना और दूसरा वेश्याओं के नाचने गाने की रस्म को मिटाना।"[2] "सुमन" का पति "गजाधर" भी सुमन को वेश्यावृत्ति त्यागने पर बल देता है।

इस प्रकार प्रेमचन्द वेश्यावृत्ति का अन्त करके उसे एक सामान्य जीवन में नियोजित करने का प्रयास करते हैं। उसे सम्मानजनक जिन्दगी प्रदान करते हैं। यही कार्य शरतचन्द्र भी अपने उपन्यासों के माध्यम से सम्पन्न करते हैं।

---

1. गबन, पृ0- 279

2. सेवासदन, पृ0 - 89

इस आधार पर शरतचन्द्र एवं प्रेमचन्द दोनों साहित्यकारों में वेश्या वृत्ति उन्मूलन की बलवती भावना पायी जाती है ।

अनमेल विवाह का विरोध सम्बन्धी दृष्टि :

अनमेल विवाह नारी जीवन में दुख का बीज बोता है । स्वाभाविक वैवाहिक आनन्द का लोप हो जाता है । नारी न तो आनन्दपूर्वक जीवन जी पाती है और न ही जीवन का परित्याग ही कर पाती है । असमय में ही वृद्ध हो जाती है ।

शरतचन्द्र के उपन्यासों में इस कुप्रथा का विरोध किया गया है । "विधवा की बेटी " नामक उपन्यास में "संध्या " गोलोक चटर्जी जो उसके नाना की उम्र के हैं, से इस अनमेल विवाह का कठोरता पूर्वक विरोध करती है । प्रेमचन्द भी इस कुप्रथा को समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहे । उन्होंने " निर्मला " नामक उपन्यास में इसका विरोध किया है । " निर्मला" तथा " तोताराम" का जीवन कंटकपूर्ण हो जाता है । " निर्मला" अपने पति " तोताराम " के । जो उसके पिता की उम्र के हैं, के पति आ सा प्यार देने में संकोच करती है ।

" गोदान " उपन्यास में " रतन" तथा वकील साहब की शादी भी अनमेल विवाह का उदाहरण हो सकता है । रतन का पति वकील रतन का प्यार

नहीं दया पाता है । अन्त में असमय में ही " रतन" को छोड़कर स्वर्ग वासी हो जाती है । इस प्रकार शरतचन्द्र और प्रेमचन्द दोनों में अनमेल विवाह के निषेध की भावना देखी जा सकती है ।

दहेज प्रथा सम्बन्धी दृष्टिकोण :

नारी जीवन को उपयुक्त स्थान पर न पहुँचाने का श्रेय दहेज प्रथा को ही है । इस प्रथा के कारण नारियों पर अनेक प्रकार के अत्याचार भी प्रारम्भ होते हैं । शादी ऐसे लोगों के साथ हो जाती है जिनमें मानवीय संवेदनाओं का अभाव होता है ।

शरतचन्द्र का ध्यान इस कुप्रथा की ओर भी गया । उनमें उपन्यास "परिणिता" में इस कुप्रथा का विरोध परि-लक्षित होता है, जिसमें उन्होंने विवाह के लिए मकान गिरवी रखने के लिए तथा अन्तत: भिखारी बनने की बात भी कहलवायी है और इस दहेज प्रथा के लिए उत्तरदायी यह हमारे समाज को ही माना है । " समाज कहता है कि लड़की की उम्र हो चुकी है, ब्याह कर दो, लेकिन ब्याहने का इंतजाम नहीं कर सकता, ठीक कहते हो गिरीन । मुझको ही देखो न, मकान तक गिरवी रख देना पड़ा, दो दिन बाद बाल बच्चों को लेकर राह का भिखारी बनना पड़ेगा । समाज तब यह थोड़े ही कहेगा कि आओ हमारे घर आश्रय ले लो।[1]

---

1. शरत समग्र, भाग - 2, पृ० - 330

इस प्रकार शरत चन्द्र ने दहेज प्रथा के दुष्परिणामों को चित्रित किया है। प्रेमचन्द्र ने भी "निर्मला" उपन्यास में दहेज प्रथा का विरोध किया है। इस उपन्यास का एक पात्र "मालचन्द" कहता है - "बस चले तो दहेज लेने वालों और दहेज देने वाले, दोनों को ही गोली मार दूँ, चाहे फाँसी क्यों न हो जाये। पूछो, आप लड़के का विवाह करते हैं या उसे बेचते हैं ?"[1]

"गोदान" उपन्यास में भी प्रेमचन्द ने इस कुप्रथा का विरोध किया है। "होरी" की बेटी "सोना" कहती है - "मैं तो सोनारी वालों से कह दूँगी, अगर तुमने एक पैसा भी दहेज लिया तो तुमसे ब्याह न करूँगी।"[2]

इस प्रकार शरतचन्द्र और प्रेमचन्द दोनों रचनाकारों में इस कुप्रथा के प्रति विरोध प्रकट किया है।

<u>छुआछूत समस्या पर दृष्टिकोण</u>.

यह एक ऐसी सामाजिक कुप्रथा है जिसने मानव - मानव को बाँट दिया है। एक वर्ग दूसरे वर्ग पर इसका संबल लेकर शोषण का शिकंजा रचता है। एक वर्ग को शिक्षा, सम्मान, आर्थिक उन्नति धार्मिक उन्नति इत्यादि मानवीय अधिकारों से

- -

1. "निर्मला" पृ० - 20

2. "गोदान" पृ० - 202

वंचित कर देता है ।

नवजागरण आन्दोलन में इस समस्या पर विशेष रूप से चिन्ता प्रकट की गयी । वेदों और उपनिषदों का सहारा लेकर इसे अतार्किक, अबौद्धिक तथा अधार्मिक घोषित किया गया । शरतचन्द्र एवं प्रेमचन्द दोनों ने ही इसका जोरदार ढंग से विरोध किया तथा इस कुप्रथा को मानने वालों के प्रति घृणा पैदा की गयी, इसका तर्कपूर्ण खण्डन किया गया ।

बंग समाज में छुआछूत अन्य प्रदेशों की अपेक्षा कुछ ज्यादा ही पायी जाती है । इसलिए इस कुप्रथा से क्षुब्ध हो जाना शरतचन्द्र के लिए स्वाभाविक ही था । उनके उपन्यास " पथ के दावेदार " में " अपूर्व" की माँ उसे बर्मा जाने से छुआछूत के कारण ही रोकती है तथा ईसाई लड़की "भारती" द्वारा " तिवारी" को छू लेने पर काशी जाकर प्रायश्चित करने का विचार इस कुप्रथा के प्रति स्वाभाविक आक्रोश पैदा करता है ।

"शेष प्रश्न " उपन्यास में भी इस कुप्रथा का विरोध किया गया है । "चरित्रहीन " उपन्यास की महिला पात्र किरणमयी" तर्कपूर्ण ढंग से इस कुप्रथा का विरोध करती है । "श्रीकान्त" उपन्यास की "राजलक्ष्मी" जो प्यारी बाई के नाम से गाने - बजाने का कार्य प्रारम्भ करती है, कमल लता के साथ एक ही बिस्तर

जो कि एक युवक है एक शव के लोगों द्वारा अछूत कहने पर अपना मत इस प्रकार प्रकट करता है । " मरे हुये की जाति क्या ? यह तो वैसे ही है, जैसे हमारी यह डोंगी, आम या जामुन जिस किसी की बनी हो, अब तो डोंगी छोड़कर कोई भी नहीं कहेगा कि यह आम है या जामुन, उसी तरह है यह भी ।"[1]

प्रेमचन्द के उपन्यास इस कुप्रथा के प्रबल विरोधी हैं । " गोदान " "कायाकल्प", "कर्मभूमि", तथा " निर्मला" में इस कुप्रथा का प्रबल विरोध किया गया है । " गोदान " उपन्यास में पण्डित दातादीन के लड़के "मातादीन" ने "सिलिया" नामक अछूत युवती को पत्नी के रूप में स्वीकार किया । इस प्रकार छुआछूत की भावना को इस उपन्यास में समाप्त करने का प्रयास किया गया है ।

"सिलिया" का पिता "मातादीन" से कहता है - " तुम हमें ब्राह्मण नहीं बना सकते, मुदा हमें तुम्हें चमार बना सकते हैं, हमें ब्राह्मण बना दो, सारी बिरादरी बनने को तैयार है, जब यह समरथ नहीं है तो तुम भी चमार बनो, हमारे साथ खाओ- पियो, उठो- बैठो, हमारी इज्जत लेते हो तो अपना धरम हमें दो ।"[2]

---

1. शरत समग्र, पंचम खण्ड, पृ0 - 126

2. "गोदान " पृ0 - 392

"कायाकल्प " में छुआछूत का विरोध किया गया है । "मनोरमा " कहती है - " दिल से यह भाव बिलकुल व निकाल डालिये - कि वह नीची है और आप ऊँचे हैं, इस भाव का लेश भी दिल में न रहने दीजिए । "[1]

"कर्मभूमि " उपन्यास में इस भावना के विरोध का सबसे प्रबल रूप "अमर-कान्त" और "शान्तिकुमार " में पाया जाता है ।

"अमर कान्त " कहता है -

"क्यों खान- पान में, रस्म- रिवाज में, धर्म अपनी टाँग अड़ाता है । मैं चोरी करूँ, खून करूँ, धोखा दूँ, धर्म मुझे अलग नहीं कर सकता , अछूत के हाथ से पानी पी लूँ, धर्म छू मन्तर हो गया । "[2]

इसी उपन्यास के एक पात्र "शान्ति कुमार " कहते हैं -

" तुम्हारे ही ऊपर समाज खड़ा है, पर तुम अछूत हो, तुम मन्दिर में नहीं जा सकते, ऐसी अनीति इस अभागे देश के सिवा और कहाँ हो सकती है ? क्या तुम सदैव इसी भाँति पतित और दरिद्र बने रहना चाहते हो । " नयना " कहती है - भगवान ने तो किसी को ऊँचा या नीचा नहीं बनाया।[3]

---

1. कायाकल्प, भाग -2, पृ0 = 37
2. कर्मभूमि, पृ0 - 55
3. वही, पृ0 - 116

इसी प्रकार की भावना " निर्मला" उपन्यास के "भालचन्द्र " नामक युवक में पायी जाती है। इस प्रकार अआदर्श के सम्बन्ध में भी शरतचन्द्र और प्रेमचन्द्र के दृष्टिकोण में समानता प्राप्त होती है।

राजनैतिक दृष्टिकोण।

नवजागरण का "शुभारंभ समाज सुधार से प्रारम्भ हुआ। सामाजिक कुरीतियों तथा धार्मिक आडम्बरों का तर्कपूर्ण खण्डन करके सामाजिक गतिशीलता प्रदान करना ही मुख्य उद्देश्य था। ऐसा महसूस किया गया कि बिना आत्मा की उन्नति के नवजागरण का सपना पूरा नहीं हो सकता, इसलिए पहले सामाजिक भाववादी सुधार ही प्रारम्भ हुए।

किन्तु राजनीतिक सुधारवादी आन्दोलन भी चलाये गये। देश को अंग्रेजों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए राष्ट्रीय भावना की महती आवश्यकता महसूस हुई। अंग्रेजों को भगाने के लिए देश प्रेम, राष्ट्रभाषा से प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं मे प्रेम तथा हिन्दू मुस्लिम एकता की अत्यधिक आवश्यकता थी, इसलिए नवजागरण के पुरोधाओं ने इन तत्वों के विकास पर बल दिया। महात्मा गाँधी के राजनैतिक मंच पर आ जाने से सत्य - अहिंसा, असहयोग आन्दोलन, स्वदेशी आन्दोलन तथा साम्प्रदायिक एकता का स्वर मुख्य रूप से मुखरित हुआ। प्रबुद्ध वर्ग ने महात्मा गाँधी को

एक स्वर से अपना नेता माना तथा इन सिद्धान्तों की स्थापना अपनी रचनाओं में करने लगे । राजनैतिक आन्दोलन का क्रान्तिकारी पक्ष भी कम सक्रिय नहीं रहा । भारतीय युवा वर्ग इस भावना से प्रेरित हुए और उन्होंने क्रान्ति का आह्वान किया । स्थान - स्थान पर श्रमिक, मजदूर संगठन बनने लगे । किसान संगठन बनने की प्रेरणा दी जाने लगी । मिलों में आगजनी प्रारम्भ हुई ।

इस प्रकार पूंजीपतियों के प्रति, शोषकों के प्रति, अंग्रेजी हुकूमत के प्रति, सशक्त क्रान्ति का आह्वान हुआ ।

शरतचन्द्र और प्रेमचन्द दोनों रचनाकार एक जागरूक साहित्यकार के रूप में समाज के सामने प्रकट हुए और इन मुद्दों पर अपनी - अपनी लेखनी चलायी । तत्कालीन राजनैतिक सुधारवादी आन्दोलन के मुख्य बिन्दु दोनों रचनाकारों के उपन्यासों में पाये जाते है ।

<u>साम्प्रदायिक एकता सम्बन्धी दृष्टि .</u>

अंग्रेजों ने भारत में बांटो और राज्य करो " की नीति का बीज डाला था जिसके परिणाम स्वरूप लम्बे अरसे से साथ साथ रहने वाले देश के दो प्रमुख सम्प्रदायों (हिन्दू - मुस्लिम) आपस में ईर्ष्या द्वेश से भर गये, एक दूसरे के प्राण के भूखे हो गये ।

इस चिन्तनीय स्थिति से निपटने का प्रयास शरत चन्द्र ने अपने उपन्यास में किया है। " ग्रामीण समाज " नामक उपन्यास में "रमेश " हिन्दू मुस्लिम एकता की भावना से ओत-प्रोत है, उसी के परिणाम स्वरूप " वहाँ हिन्दू -मुसलमानों ने आपस में भाई - चारा स्थापित कर लिया है, दोनों एक मन और एक प्राण हैं।"[1]

साम्प्रदायिक एकता की भावना " गृहदाह " उपन्यास के " केदार बाबू" के इस वक्तव्य में भी दृष्टव्य है - " किसी धर्म से उन्हें बैर नहीं, क्योंकि संसार के सभी धर्म मूलतः एक हैं, हिन्दू के राम और मुसलमानों के अल्लाह एक ही हैं।"[2]

"श्रीकान्त"उपन्यास में "श्रीकान्त " और गौहर से दोस्ती भी इसी साम्प्रदायिक एकता का प्रयास है। तत्कालीन बंग समाज में यह भेदभाव न केवल मुसलमानों से ही था। बल्कि ब्रह्म समाजियों से भी इसी प्रकार का व्यवहार था।

शरत चन्द्र के उपन्यास " गृह दाह " की नायिका "अचला" की शादी "महिम" नामक हिन्दू से सम्पन्न होती है।

---

1. शरत समग्र , भाग -1, पृ0 - 394

2. वही, भाग -2, पृ0 - 220

इस प्रकार साम्प्रदायिक एकता के बिन्द शरत चन्द्र के उपन्यास में बहुतायत से पाये जाते हैं ।

प्रेमचन्द साम्प्रदायिकता और उसके दुष्परिणाम से भली प्रकार अवगत थे। यदि व्यक्ति सम्पूर्ण देश का नागरिक न होकर केवल हिन्दू या मुसलमान हो जाता है तो देश निरन्तर निर्बल होता ह जाता है । देश को सही दिशा देने के लिए इस साम्प्रदायिकता का अन्त आवश्यक है ।

" कायाकल्प " उपन्यास में "चक्रधर ", "आगोश्वरी", तथा "ख्वाजा" में साम्प्रदायिक एकता के बिन्दु पाये जाते हैं । मुस्लिम मोहल्ले में कुर्बानी के लिए तत्पर भीड के बीच में हिन्दू और मुसलमान दोनों को समान रूप से चक्रधर समझाता है - " मैं तो यही कहूँगा कि मुसलमानों को लोग नाहक बदनाम करते हैं, फसाद से वे भी इतना ही डरते हैं जितना हिन्दू, शान्ति की इच्छा भी उनमें हिन्दुओं से कम नहीं है । लोगों का ख्याल है कि मुसलमान लोग हिन्दुओं पर राज्य करने का स्वप्न देख रहे हैं, बिलकुल गलत है । मुसलमानों को केवल यह शंका हो गयी है कि हिन्दू उनसे पुराना बैर चुकाना चाहते हैं और उनकी हस्ती को मिटा देने की फिक्र कर रहे हैं ।"[1]

---

1. " कायाकल्प " भाग -1, पृ0 - 49

हिन्दू मुस्लिम, सिख और ईसाई धर्मों में समानता की बात चक्रधर के इस वक्तव्य में दृष्टव्य है - " हिन्दू- मुसलमान, ईसाई, बौद्ध सभी सत्कर्म और सद्विचार की शिक्षा देते हैं। हमें कृष्ण, राम, ईसा, मोहम्मद, बुद्ध सभी महात्माओं का समान आदर करना चाहिए। ये मानव जाति के निर्माता हैं। जो इनमें से किसी का अनादर करता है या उनकी तुलना करने बैठता है वह अपनी मूर्खता का परिचय देता है। बुरे हिन्दू से अच्छा मुसलमान उतना ही अच्छा है, जितना बुरे मुसलमान से अच्छा हिन्दू। देखना यह चाहिए कि यह आदमी है, यह कि किस धर्म का आदमी है। संसार का भावी धर्म सत्य, न्याय और प्रेम के आधार पर बनेगा। हमें अगर संसार में जीवित रहना है तो अपने हृदय में हमें इन्हीं भावों का संचार करना पड़ेगा।"[1]

साम्प्रदायिक एकता की भावना न केवल पुरूष पात्रों में पायी जाती है बल्कि नारी पात्रों में भी इस प्रकार की भावना भरी हुई है "यशोदा-नन्दन, की पत्नी " वागीश्वरी" कहती है :- " नित्य समझाती रहो, इन झगड़ों में न पड़ो, न मुसलमानों के लिए दुनिया में कोई दूसरा ठौर ठिकाना है न हिन्दुओं के लिए। दोनों इसी देश में रहेंगे और इसी देश में मरेंगे, फिर

---

1. कायाकल्प, भाग -2, पृ० - 199

आपस में क्यों लड़ - मरते हो ?, क्यों एक दूसरे को निगल जाने पर तुले हुए हो, ? न तुम्हारे निगले वे निगले जायेंगे, न उनके निगले तुम निगले जाओगे। मिल जुलकर रहो, उन्हें बड़े होकर रहने दो, तुम छोटे होकर ही रहो, मगर मेरी कौन सुनता है।"[1]

" ख्वाजा" जिसका लड़का एक हिन्दू लड़की का अपहरण करके अपने घर में रखता है, वह अपने लड़के को गोली मार देता है। इस प्रकार हिन्दू मुस्लिम एकीकरण की भावना इस उपन्यास में अत्यधिक पायी जाती है।

यह साम्प्रदायिक एकता " कर्मभूमि " उपन्यास में भी दृष्टव्य है। " सलीम" का पिता " हाफिज हलीम " कहता है - " आइये, हम और आप गले मिलकर उस देवी की रूह को खुश करें, जो हमारी सच्ची, रहनुमा, तारीकी में सुबह का पैगाम लाने वाली सुफेदी थी, खुदा हमे तौफीक दें कि इस सच्चे शहीद से हम हक परस्ती और खिदमत का सबक हासिल करें।"[2]

"रंगभूमि " उपन्यास में ईसाई तथा हिन्दू धर्म में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

---

1. कायाकल्प, भाग-2, पृ0 - 12
2. "कर्मभूमि " ,पृ0 - 219

सोफिया " जो कि ईसाई लड़की है, उसकी शादी " विनय" नामक हिन्दू युवक से हो जाती है । तथा " सोफिया" हिन्दू और ईसाई धर्मों में समानता बताते हुए कहती है कि - " ईसा और कृष्ण में कितनी समानता है पर उनके अनुचरों में कितनी विभिन्नता । कौन कह सकता है कि साम्प्रदायिक भेदों ने हमारी आत्माओं पर कितना अत्याचार किया है ।" [1]

इस उपन्यास में न केवल ईसाई और हिन्दू धर्मों में एकता स्थापित करने का प्रयास किया गया है । बल्कि हिन्दू और मुसलमान धर्मों में भी एकीकरण स्थापना पर बल दिया गया है । "जाह्नवी " कहती है - " क्या कहा ? मुसलमान है, । कर्तव्य के क्षेत्र में हिन्दू और मुसलमान का भेद नहीं , दोनों एक ही नाव में बैठे हुए हैं, डूबेगी तो दोनों डूबेंगे, बचेगी तो दोनों बचेंगे ।" [2]

इस प्रकार शरत चन्द्र और प्रेमचन्द दोनों रचनाकारों में साम्प्रदायिक एकता के बिन्दु समान रूप से पाये जाते हैं ।

स्वदेश - प्रेम :-

देश में खुशहाली लाने का एक ही उपाय था - देश प्रेम । देश प्रेम की भावना जागृत हो जाने पर जाति धर्म तथा क्षेत्रवाद की संकुचित भावनाएं स्वतः

1· " रंगभूमि" , पृ0 - 109

2· " वही , पृ0 - 539

ही समाप्त हो जाती है। प्रत्येक नागरिक का न कोई अपना धर्म होता है। और न कोई अपनी जाति। एक ही धर्म होता है - देश धर्म तथा एक ही जाति होती है - मानव जाति।

नवजागरण आन्दोलन में देश - प्रेम की भावना जगा करके देश का उद्धार करने का प्रयास किया गया। देश को मुक्त कराने के लिए नवयुवकों ने क्रान्ति का रास्ता अपनाया। शरतचन्द्र भी इस भावना से प्रभावित हुए। " पथ के दावेदार " नामक उपन्यास में " अपूर्व" के प्रवासी जीवन के समय के चिन्तन में इस प्रकार की भावना पायी जाती है - " हे अभागे देश के शक्ति-हीन लोग। जिस ऐश्वर्य शालिनी भूमि का भार तुम लोग संभाल नहीं सके, उस पर व्यर्थ का लोभ किसलिए ? स्वतन्त्रता का जन्मजात अधिकार केवल मनुष्यत्व को नहीं, तुम अपनी क्षुद्र इन्द्रियों को ही मनुष्य समझ बैठे हो, इससे अधिक आत्मघाती प्रवृत्ति और क्या हो सकती है ?"[1]

मातृभूमि के प्रति प्रेम न केवल पुरुष वर्ग में पाया जाता है बल्कि नारी पात्रों में भी पाया जाता है। -"नवनतारा ", सुमित्रा", "भारती", महिलायें,"पथ के दावेदार" नामक उपन्यास में क्रान्तिकारी संगठन में शामिल होती है तथा देश को मुक्त कराने का प्रयास करती है।

---

1. शरत समग्र, पृ० - 182

ग्रामीण समाज की महिला पात्र "विश्वेश्वरी" भी देश-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत है। "श्रीकान्त" उपन्यास में भी देश-प्रेम की भावना मुखरित हुई है -

" यह सोने की भूमि किस तरह ऐसी शुष्क, ऐसी रिक्त हो गयी, कैसे देश की समस्त सम्पदा विदेशियों के हाथ में पड़कर धीरे - धीरे विदेश में चली गयी, किस तरह मातृभूमि के समस्त मेद - मज्जा, और रक्त को विदेशियों ने शोषण कर लिया ... मगर हाँ। देश की सेवा करना भी हम लोगों का एक व्रत है।"[1]

इस प्रकार शरतचन्द्र देश प्रेम की भावना पर बल देते हैं।

प्रेमचन्द्र में भी यह भावना व्यापक पैमाने पर पायी जाती है। "गबन" उपन्यास का "देवी-दीन" जिसके दो बेटे स्वदेशी की वेदी पर चढ़ गये, कहता है - " जिस देश में रहते है, जिसका अन्न- जल खाते हैं, उसके लिए इतना भी न करें तो जीने के धिक्कार है। दो जवान बेटे इस स्वेदशी की भेंट कर

---

1. "शरत समग्र, भाग-3, पृ0 - 425

चुका हूँ, भइया।"[1]

"कायाकल्प" का नायक "चक्रधर" स्वदेश प्रेम की भावना से भरा हुआ है। वह "मनोरमा" से कहता है - "सारा देश गुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है, फिर भी हम अपने भाइयों की गर्दन पर छुरी करने से बाज नहीं आते। इतनी दुर्दशा पर भी हमारी आँखें नहीं खुलती। जिनसे लड़ना चाहिए उनके तलुये चाटते हैं और जिनसे गले मिलना चाहिए उनकी गर्दन दबाते हैं।"[2]

"गोदान" उपन्यास के "राय साहब" के इस वक्तव्य में भी देश-प्रेम की भावना झलकती है, वे "ओंकारनाथ" संवादक से कहते हैं - "आप बनते तो हैं - आदर्शवादी और सिद्धान्तवादी, पर अपने फायदे के लिए, देश का धन विदेश भेजते हुये आपको जरा भी खेद नहीं होता ?[3]

"सेवा-सदन" उपन्यास में देश को स्वतन्त्र कराने की विनती गायनाचार अपने इस पद में गाता है - "दयामयी भारत को अपनाओ

x x x

---

1. "गबन" पृ० - 150
2. कायाकल्प, भाग-2, पृ० 115
3. गोदान, पृ० - 63

सोये आर्य जाति के गौरव

जननि फेर जगाओ

दुखदा पराधीनता रूपी बेडी काट बहाओ "[1]

"रंगभूमि" उपन्यास में तो स्वदेश प्रेम बडे पैमाने पर पाया जाता है। सोफिया", " प्रभु सेवक" , "विनय", "जाह्नवी" इत्यादि पात्र देश - प्रेम की भावना से ओत- प्रोत है। विनय की माँ "जाहन्वी" अपनी देशभक्ति परक भावना व्यक्त करती हुई कहती है - " एक नई अभिलाषा उत्पन्न हुई - मेरी कोख से भी कोई ऐसा पुत्र जन्म लेता, जो अभिमन्यु , दुर्गादास और प्रताप की भाँति जाति का मस्तक ऊँचा करता। मैंने व्रत किया कि पुत्र हुआ तो उसे देश और जाति के हित के लिए समर्पित कर दूँगी।"[2]

"सोफिया" का सम्पूर्ण जीवन देश प्रेम तथा मानवतावाद से भरा हुआ है। वह देश का उद्धार करने के लिए मिस्टर जॉन क्लार्क जैसे अधिकारियों से शादी नहीं करती, बल्कि " विनय " के पथ का अनुसरण करती है किन्तु जब विनय जनता के

---

1. सेवासदन, पृ० - 231

2. रंगभूमि , पृ० - 99

ऊपर गोली चलाकर असन्तोष फैलाते हैं तो वह उनसे भी घृणा करने लगती है। वह कहती है - " जो लोग आज निरापराधियों की हत्या करके सम्मान और कीर्ति का उपभोग कर रहे हैं, उन्हें नरक कुण्ड में जलाऊँगी, और जब तक अत्याचारियों के इस जत्थे का मूलाच्छेद न कर दूँगी, चैन न लूँगी, चाहे रियासत में विप्लव व ही क्यों न हो जाये, चाहे रियासत का निशान ही क्यों न मिट जायें।"[1]

" गांगुली " और "इन्द्र दत्त " में भी देशप्रेम की यह भावना कूट - कूट कर भरी है।

इस प्रकार प्रेमचन्द में देश प्रेम की भावना कभी अँग्रेजों के शोषण नीति के विरुद्ध जागृत हुई तो कभी निरपराधी जनता पर गोली चलाने वाले रियासतदारों और जमींदारों पर। एतद्रूपेण में हम देखते हैं कि देश प्रेम की भावना शरत चन्द्र और प्रेमचन्द में विद्यमान है किन्तु परिमाण में प्रेमचन्द में अधिक है।

3. <u>गाँधीवादी विचारधारा :</u>

गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन, स्वदेशी आन्दोलन

---

1. " रंगभूमि" , पृ0 - 352

तथा मातृभाषा के प्रयोग का प्रभाव साहित्यकारों पर अधिकांश रूप से देखने को मिलता है। कल - कारखानों का ग्रामीण बस्तियों के समीप निर्माण भी महात्मा गाँधी की दृष्टि में हानिकारक थी, इसको भी अभिव्यक्ति रचनाकारों की रचनाओं में देखने को मिलती है।

शरतचन्द्र के " जागरण" उपन्यास में असहयोग आन्दोलन का प्रभाव दिखाई पड़ता है। " अमर नाथ " कहता है " - तुम लोग मार- काट मत करो, किसी व्यक्ति विशेष या अंग्रेज के प्रति विद्वेष भावना अपने अन्दर न आने देना, लेकिन इन दुराचारी अधर्म परायण और असत्य प्रिय मौजूदा सरकार से किसी प्रकार का सम्पर्क मत रखो। नौकरी का लालच में पड़कर इसके आगे नाक मत रगड़ो। विद्या प्राप्ति के लिए स्कूल कालेज के हाते में अन्दर पैर मत रखो, इन्साफ की आशा में इसकी कचहरी की ओर मत बढ़ो।"[1]

यह भावना निश्चित रूप से 1921 में महात्मा गाँधी द्वारा चलाये गये असहयोग आन्दोलन के परिणामस्वरूप ही पैदा हुई।

महात्मा गाँधी ने " स्वदेशी अपनाओं का नारा दिया। विदेशी कपड़ों की होली जलाई गयी। विदेशी वस्त्रों के परित्याग पर बल दिया गया। इस

- -

1. शरत समग्र, भाग -3, पृ0 377

उपन्यास में यह भावना भी देखने को मिलती है - " अमरपुर बाजार में विदेशी कपड़ों की बिक्री गुण्डों ने रुकवा दी है।"[1]

इस प्रकार गांधी जी के असहयोग तथा स्वदेशी आन्दोलन का प्रभाव शरतचन्द्र के उपन्यासों में देखने को मिलता है ।

प्रेमचन्द भी तो महात्मा गांधी के नेतृत्व में पूर्णरूप से विश्वास रखते थे। वे उनके सच्चे अनुयायी थे। इसलिए उनकी भावनाओं का अपने उपन्यासों में स्थान-स्थान पर प्रतिपादन किया है। " गबन" उपन्यास में " देवी दीन स्वदेशी वस्तुओं पर बल देता है तथा " रमानाथ " से कहता है " " कुछ बेसी दाम लगे, पर रुपया तो देश में ही रह जाता है। नवे दिन दूकानदारों ने कसम खायी कि विलायती कपड़े अब न मँगवायेंगे। तब पहरे उठा लिये गये। तब से विदेशी दियासलाई तक घर में नहीं लाया।[2]

देश भक्तों को उलाहना देता हुआ देवीदीन कहता है - " गरीबों को लूटकर विलायत का घर भरना तुम्हारा काम है, इसीलिए तुम्हारा इस देश

---

1. शरत समग्र, भाग- 3, पृ0 38।

2. "गबन", पृ0 - 150

में जन्म हुआ है । हाँ रोये जाओ, विलायती शराब उड़ाओ, विलायती मोटरें दौड़ाओ, विलायती मुरब्बे और अचार चखो, विलायती बर्तनों में खाओ, विलायती दवाइयाँ पियो, पर देश के नाम पर रोये जाओ ।"[1]

इस प्रकार शरतचन्द्र और प्रेमचन्द के उपन्यासों में गाँधीवादी विचार धारा भी समान रूप से पायी जाती है ।

xxxxxx

---

1. "गबन " पृ० - 151

वैषम्य

साहित्य के क्षेत्र में

शरतचन्द्र और प्रेमचन्द में अनेक तथ्यपरक समानता के बावजूद वैषम्य भी पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। दोनों का वातावरण, सामाजिक परिवेश कुछ अलग किस्म का था। शरतचन्द्र का रचना संसार अपेक्षाकृत अधिक भावुक है। सम्पूर्ण साहित्य में इसी का चित्रण किया गया है। इनके उपन्यासों की कथावस्तु वर्जित प्रेम का चित्रांकन है। ऐसे नारी पुरुष पात्रों के प्रेम जिन्हें समाज नैतिक नहीं कहता है। वर्जित प्रेम कहे जाते हैं। किनसे प्रेम करना चाहिए ? किससे बैर करना चाहिए। ? ऐसा लगता है समाज के पास इसका एक निश्चित नियम कानून है यदि उस पृष्ठभूमि के आधार पर प्रेम किया जाता है तो वैध अन्यथा अवैध करार कर दिया जाता है। सभी व्यक्तियों को प्रेम करने का अधिकार नहीं है इसके लिए भी व्यक्तियों की श्रेणी है। इस प्रकार भी समाज में प्रेम का एक निश्चित स्वरूप निर्धारित कर दिया गया था। शरतचन्द्र ने इन मान्यताओं का खण्डन किया। क्योंकि प्रेम सिद्धान्त पर नहीं स्थिर किया जा सकता। यह शुद्ध रूप से हृदय पक्ष की बात है। प्रेम के द्वारा समाज की ऊँच - नीच, छुआछूत, गरीब, अमीर की खाई पट जाती है। अतः समाज में सुव्यवस्था लाने के लिए प्रेम को इन नियमों के दायरे से बाहर निकलवाना होगा। शरतचन्द्र का अधिकांश

साहित्य इसी कथावस्तु में लिखा गया है । कहीं विधवा प्रेम कहीं वेश्या प्रेम कहीं अन्तर जातीय प्रेम की समस्या को उठाया गया है ।

" बड़दीदी" उपन्यास में माधवी जो कि एक विधवा है उसका प्रेम सुरेन्द्र नाथ नामक युवक से हो जाता है। चूँकि माधवी विधवा है अतः सुरेन्द्र नाथ के साथ उसका प्रेम औचित्यपूर्ण नहीं माना जाता है । " देवदास " उपन्यास में पार्वती का देवदास से प्रेम हो जाता है । दोनों परिवारों का आर्थिक आधार एक सा नहीं है । देवदास के पिता नारायण मुखर्जी जमींदार हैं तथा पार्वती के पिता नीलकंठ चक्रवर्ती साधारण से काश्तकार । इसलिए पार्वती और देवदास का विवाह नहीं हो पाता है । पार्वती की शादी अधेड़ उम्र के भुवन स्वामी के साथ हो जाती है । प्रेम की पूर्णता प्राप्त न होने के कारण देवदास शराबी हो जाता है । वेश्यालय जाने लगता है । इस प्रकार इस उपन्यास की भी कथावस्तु वर्जित प्रेम ही है ।

" गृहदाह " उपन्यास में अचला जो कि एक ब्राह्म समाजी है, उसका प्रेम महिम नामक हिन्दू युवक से हो जाता है । इस प्रेम का विरोध उसका मित्र सुरेश करता है किन्तु धीरे - धीरे सुरेश भी अचला का प्रेमी बन जाता है तथा उसे प्राप्त करने के लिए कभी अकेले में अचला के पास पहुँच जाता है कभी उसका अपहरण कर लेता है । इस प्रकार सम्पूर्ण कथा - अचला - महिम और सुरेश के त्रिकोणात्मक

प्रेम को लक्ष्य बनाकर चलती है ।

"चरित्रहीन " उपन्यास में सतीश और सावित्री की प्रेम कथा का वर्णन है । सावित्री कुलीन परिवार की बाल विधवा ब्राह्मणी है जिसे कि उसके किसी रिश्तेदार ने बहला - फुसलाकर संयोग स्थापित कर लिया इस प्रकार उसका जीवन सामाजिक दृष्टि से पापमय हो गया । ऐसी दूषित युवती से सतीश का प्रेम समायोजित नहीं कहा जा सकता उपन्यास के अन्त में हम देखते हैं कि उपेन्द्र जो कि सतीश का मित्र है वह सावित्री का बहिन का सा सम्मान देता है । सम्पूर्ण कथा के मूल में इसी प्रेम का चित्रण हुआ है ।

" श्रीकान्त " उपन्यास की कथावस्तु भी प्रेम ही है । श्रीकान्त का राजलक्ष्मी नामक गाने वाली के प्रति आकर्षण तथा उसका श्रीकान्त के प्रति सेवाभाव एवं समर्पण ही कथा की मुख्य घटना है । सावित्री तथा श्रीकान्त का विवाह भी सम्पन्न होता है । कहने का अभिप्राय कि सम्पूर्ण कथानक में प्रेम का ही चित्रण हुआ है ।

इस प्रकार शरतचन्द्र के अधिकांश उपन्यासों के कथातत्व के रूप में वर्जित प्रेम आता है ।

प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी इस वर्जित प्रेम का चित्रांकन हुआ है । लेकिन वहाँ पर वह प्रधान न होकर केवल घटना को सरस बनाने तथा घटनाक्रम को आगे बढ़ाने के लिए किया गया है । जैसे - कर्मभूमि में - सकीना तथा अमरकान्त का प्रेम " गोदान " में झुनिया (विधवा) तथा गोबर का प्रेम । गोदान में ही पं० मातादीन तथा चमारिन सिलिया का प्रेम । " रंगभूमि" में विनय तथा सोफिया का प्रेम । इन उपन्यासों का मुख्य प्रतिपाद्य कथातत्व शोषितों का चित्रण तथा इनके खिलाफ संघर्ष है । जैसे कर्मभूमि उपन्यास का नायक अमरकान्त साम्यवादी व्यवस्था के लिए संघर्ष दिखाना है न कि सकीना - अमरकान्त का प्रणय प्रसंग - या सकीना - सलीम के सम्बन्ध बतलाना । प्रेमचन्द की मान्यता है कि समाज में जो कुछ भी अनैतिक कार्य होते हैं वे सभी सम्पत्ति अर्जित करने के लिए होते हैं । यदि इन सम्पत्तियों के अर्जन पर रोक लगा दी जाय तो सारे अनैतिक कार्य बन्द हो जायेंगे ।

इस प्रकार उपन्यास का मुख्य प्रतिपाद्य साम्यवादी व्यवस्था का समर्थन है ।

" गोदान " उपन्यास की भी कथावस्तु -सिलिया चमारिन तथा पं० मातादीन का प्रेम चित्रांकन नहीं है । ये सब गौण घटनाएं हैं । मुख्य घटना ग्रामीण कृषक जीवन की दयनीयता का चित्रण करना है ।

इसी प्रकार रंगभूमि भी मुख्य रूप से राजनैतिक उपन्यास है। जिसमें सूरदास - गाँधी जी, विनय, जवाहर लाल नेहरू, विनय के पिता कुँवर भरत सिंह, मोती लाल नेहरू, सोफिया श्रीमती ऐनीबेसेन्ट तथा डॉ० गांगुली - देश बन्धु चितरन्जनदास के रूप में काम कर रहे हैं। यहाँ पर उपन्यास का मुख्य प्रतिपाद्य असहयोग आन्दोलन का चित्रण करना है। न कि विनय तथा सोफिया के प्रेम का चित्रण करना।

इस प्रकार शरतचन्द्र के उपन्यासों की कथावस्तु वर्जित प्रेम का चित्रण करना है जबकि प्रेम चन्द का मुख्य प्रतिपाद्य भारतीय स्वाधीनता संग्राम के दौर के समय के समाज का चित्रण करना है।

शररतचन्द्र तथा प्रेमचन्द के उपन्यासों में पात्र भेद भी मिलते हैं। शरतचन्द्र के ज्यादातर नायक अवारा किस्म के हैं। चाहे वह " देवदास " का नायक देवदास हो अथवा " चरित्रहीन " का सतीश या गृहदाह का महिम हो। सभी नायक व्यवस्था या परिवार के प्रति जिम्मेदारी नहीं महसूस करते। श्रीकान्त उपन्यास का नायक श्रीकान्त भी घुमक्कड़ किस्म का नायक है जो कभी सन्यासी का रूप धारण करता है तो कभी बच्चों के साथ जाकर अन्य साहसिक कार्यों में मनो-विनोद करता है। इन पात्रों में धन के प्रति जरा भी आसक्ति नहीं दिखलायी पड़ती। देवदास, शराब पीता है, वेश्यालय जाता है। तथा वह चन्द्रमुखी नामक

वेश्या को "बड़ी" कहता है। "चरित्र हीन" का नायक सतीश शराबी है और एक पतित समझी जाने वाली स्त्री का प्रेमी। "गृहदाह" का नायक महिम भी बेपरवा चरित्र है। श्रीकान्त का नायक "श्रीकान्त" भी राजलक्ष्मी नामक गाने वाली का प्रेमी बनता है तथा उससे शादी भी करता है। कभी बंगाल जाता है कभी बर्मा। कभी अन्नदा दीदी से मिलता है। तो कभी अभया को सहारा देता है। बर्मा जाता है। इस प्रकार उसका सम्पूर्ण जीवन आवारा सा लगता है। उसका यह जीवन स्वयं शरतचन्द्र के जीवन से मिलता जुलता लगता है।

प्रेमचन्द्र के उपन्यासों के नायक सिर से पैर तक जिम्मेदारी का निर्वाह करते हुए नजर आते हैं। उनमें अवारगी का एक भी अंश नहीं पाया जाता है। जैसे - "गोदान" का नायक होरी। अपने परिवार की जिम्मेदारी का निर्वाह करता है। समाज की परम्पराओं का भी निर्वाह करता है। रंगभूमि का नायक सूरदास भी पुरानी सोच का व्यक्ति है। इसीलिए उसमें औद्योगिक भावना नहीं पनप पाती है। वह अन्त तक इसका विरोध करता रहता है। किसी भी प्रकार की चारित्रिक दुर्बलता उसमें नहीं पायी जाती।

"कर्मभूमि" का नायक अमरकान्त भी एक जिम्मेदार युवक है। "प्रेमाश्रय" में ज्ञान शंकर सच्चरित्रवान नवयुवक है।

कहने का तात्पर्य कि प्रेमचन्द्र के सभी नायक सच्चरित्रवान तथा जिम्मेदार हैं जबकि शरतचन्द्र के नायक शराबी तथा आवारगी की प्रवृत्ति से युक्त है ।

इसी प्रकार शरतचन्द्र के उपन्यास की नायिकाएं भी समाज के पतित वर्ग से आती हैं । "चरित्रहीन" उपन्यास की नायिका "सावित्री" उच्च कुलोत्पन्न ब्राह्मणी जो कि विधवा हो गयी हो गयी है । उसके किसी रिश्तेदार ने फुसलाकर उसके साथ संभोग स्थापित किया है । अब वह खाना बनाने का काम करती है। इस प्रकार वह समाज की दृष्टि से पतिता है ।

" गृहदाह" की नायिका अचलाब्राह्म समाजी लड़की है । सुरेश उसके साथबलात्कार करता है तथा उसका अपहरण भी कर लेता है। इस प्रकार वह भी मुक्त विचारों वाली नायिका है जो समाज की दृष्टि में अनैतिक है ।

"श्रीकान्त " उपन्यास में तीन प्रमुख महिला पात्र है अन्नदा दीदी अभया, राजलक्ष्मी । ये तीनों ही नारियाँ परम्परागत समाज में समाहृत नहीं है । अन्नदा दीदी पति के मुसलमान बन जानेपर वह भी अपना धर्मत्याग कर उसके साथ अभाव मय जीवन व्यतीत करने लगती है । उसका यह धर्म परिवर्तन सामाजिक दृष्टिकोण से नैतिक नहीं माना जाता है ।

अभ्या वर्मा में प्रवासी पति के दूसरी शादी कर लेने के कारण उसके साथ न रहकर रोहिणी नामक युवक से शादी कर लेती है । इस प्रकार वह भी सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित पात्र है ।

राजलक्ष्मी महलों और हवेलियों में जाकर गाने वाली प्यारी बाई बन जाती है इस प्रकार वह भी अपना सामाजिक सम्मान खो चुकी है ।

किन्तु प्रेमचन्द की नायिकाएं समाज के गरीब वर्ग से सम्बन्धित अवश्य हैं। किन्तु उपेक्षित नहीं । गोदान की नायिका धनिया - होरी महतो की सम्मानित पत्नी है जो कि परम्परागत तरीके से व्याही है ।

इसी प्रकार कर्मभूमि की नायिका - सकीना तथा रंगभूमि की सोफिया भी सामाजिक दृष्टि से सम्मानित नायिकाएं हैं । " निर्मला" उपन्यास की नायिका निर्मला भी गरीब अवश्य है किन्तु सामाजिक दृष्टि से पतित नहीं है ।

केवल " सेवासदन " की नायिका सुमन वेश्या बन जाने पर निरादृत होती है किन्तु उपन्यास के अन्त में उसमें भी वेश्या परिवर्तन की भावना आती है ।

इस प्रकार शरतचन्द्र की नायिकाएं समाज के पतित वर्ग से आती हैं जबकि प्रेमचन्द की नायिकाएं समाज की सम्मानित नायिकाएं हैं।

शरतचन्द्र स्वभावत: रोमानी हैं। वे यह जताते हुए प्रतीत होते हैं हैं कि परम्परागत नैतिकता मनुष्य के दृष्टिकोण को संकीर्ण बनाती है। प्रचलित मानदण्डों का अनुसरण करने से ही कोई अच्छा या महान नहीं बन जाता, बल्कि व्यापक दृष्टिकोण और संवेदनशील हृदय हो तो मनुष्य सचमुच वीरोदात्त कहा जाता है। इसीलिए उन्होंने अपने उपन्यासों में नैतिकता पालन पर बल न देकर मानव हृदय की भावना के पालन पर बल दिया है। समाज के द्वारा बनाये गये नियम युग सापेक्ष होते हैं वे नियम कानून, कायदे तत्कालीन परिस्थितियों के उपयुक्त हो सकते हैं किन्तु उनकी शाश्वतता के विषय में कोई गारण्टी नहीं है।

प्रेमचन्द के साहित्य का उद्देश्य समाज - राजनीति का यथार्थ चित्रण करके उनमें सुधार तथा परिष्कार करना। यद्यपि कि उनका भीमानना है कि समाज के द्वारा बनाये गये नियम युग सापेक्ष होते हैं वे नियम कानून, कायदे तत्कालीन परिस्थितियों के उपयुक्त हो सकते हैं किन्तु उनकी शाश्वतता के विषय में कोई गारण्टी नहीं है।

प्रेमचन्द के साहित्य का उद्देश्य समाज राजनीति का यथार्थ चित्रण करके उनमें सुधार तथा परिष्कार करना । यद्यपि कि उनका भी मानना है कि समाज के द्वारा बनाये गये सम्पूर्ण नियमों का यथावत पालन नहीं करना चाहिए । किन्तु उन परम्पराओं को तोड़ने में उनके अन्दर एक संकोच पाया जाता है । जिसके कारण वे नयी सोच के दौर में उतना आगे नहीं जा सके हैं । जितना शरत-चन्द्र जाते हैं । " गोदान " होरी अपना सम्पूर्ण जीवन इन्हीं सामाजिक परम्परा-ओं को अपने अन्तस में संजोये -संजोये अन्ततः तबाह हो जाता है ।

प्रेमचन्द के उपन्यासों में वस्त्राभूषण से आकर्षण तथा तज्जनित पीड़ा का भी चित्रण किया गया है । जैसे - "गबन" उपन्यास में "जालपा" तथा "रतन" शरत चन्द्र के सभी पात्र इस प्रवृत्ति से ग्रसित नहीं लगते हैं । प्रेमचन्द तथा शरत चन्द्र के परिवेश में अन्तर होने के कारण साहित्य के उपकरणों में भी अन्तर पाया जाता है । जहाँ प्रेमचन्द के साहित्य में कबड्डी तथा गुल्ली डन्डा जैसे ग्रामीण खेलों का वर्णन किया गया है । वहीं शरत चन्द्र के साहित्य में मनो-विनोद का मुख्य साधन है मछली पकड़ना तथा नाव खेना । जैसे श्रीकान्त उपन्यास में श्रीकान्त तथा इन्द्रनाथ का खेल ;

राजनैतिक वैषम्य :

शरत चन्द्र गाँधी जी के आलोचक थे। किन्तु वे गाँधी जी की अपेक्षा देशबन्धु चित्तरन्जन दास से अधिक प्रभावित थे। देशबन्धु की फोरेमस्ती का प्रभाव शरत साहित्य में अधिकांश रूप से पाया जाता है। उनके सभी पात्र धन के प्रति अनासक्त लगते हैं।

शरत चन्द्र आतंकवाद तथा क्रान्तिकारी गतिविधियों के भी पक्ष धर नहीं थे। फिर भी स्वाधीनता संग्राम में क्रान्तिकारियों ने जो आग धधकायी है उसकी सराहना उन्होंने -" पथेरदबि" तथा " जागरण " उपन्यासों में किया है। इसका अर्थ यह भी नहीं लगाया जाना चाहिए कि वे स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन से बिल्कुल ही अछूते रहे। "जागरण" उपन्यास में गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन का वह प्रभाव परिलक्षित होता है। जिसके माध्यम से इन्होंने न्यायालयों तथा स्कूल कालेजों के बहिष्कार पर बल दिया था। आपसी वाद-विवाद मिलजुलकर हल किये जाने चाहिए। यह बिन्दु उनके उपन्यास "जागरण" तथा पाल्लि समाज में मिलता है। " पथ के दावेदार " में क्रान्तिकारियों के जीवन का चित्रण किया गया है। जहाँ किसी व्यक्ति विशेष को सम्मान के स्थान पर सबके विचारों को सम्मान देने की ध्वनि सुनायी देती है। इस आतंक

-वादी गतिविधि में न केवल पुरुष पात्र सम्मिलित हैं - अपितु सुमित्रा तथा भारती जैसी जागरूक नारियाँ क भी सम्मिलित हैं ।

प्रेमचन्द्र ने अपने साहित्य में स्वाधीनता संग्राम आन्दोलन को व्यापक फलक पर देखने का प्रयास किया है । वे गाँधी जी से बहुत ज्यादा प्रभावित है । उनका सम्पूर्ण साहित्य ही इस आन्दोलन से भरा पड़ा है । प्रेमचन्द जी ने अपने " लिटरेरी जीवन " का प्रारम्भ 1901 से प्रारम्भ किया । 1907 में उन्होंने दुनिया का सबसे अनमोल रतन नामक कहानी लिखो । इसमें उन्होंने खून की उस बूंद को दुनिया कासबसे अनमोल रतन कहा जो देश की स्वतन्त्रता के लिए बहाया गया है । 1908 में क्रान्तिकारी खुदी राम बोस को फाँसी होती है । इस क्रान्ति की पृष्ठभूमि में ही " सोजे वतन" नामक कहानी संग्रह प्रकाशित हुई । जिसे ब्रिटिश सरकार ने 1908 में जब्त कर लिया । अभी तक नवाब राय थे जो उर्दू में लिखते थे किन्तु अब बदलकर हिन्दी के प्रेमचन्द बन गये ।

स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन की पृष्ठभूमि में ही "कर्मभूमि ﹐ कायाकल्प तथा "रंगभूमि" उपन्यासों की सृष्टि हुई । "कर्मभूमि में समरकान्त तथा अमरकान्त बाप -बेटे, समाज में नयी चेतना पैदा करते हैं । यह काम स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन में मोती लाल नेहरू तथा जवाहर लाल नेहरू कर रहे थे । हिन्दू

मुस्लिम एकीकरण की भावना का प्रचार - प्रसार तत्कालीन आन्दोलन मौलाना अली कर रहे थे । " कायाकल्प" में यह कार्य ख्वाजा मौलवी साहब करते हैं । गाँधी जी के लिए प्रेमचन्द के मन में अत्यधिक आस्था थी । गाँधी जी की अचल निष्ठा थी - कर्म पथ पर । प्रेमचन्द कभी कभी इस संकोच में पड़ जाते थे कि वे महात्मा गाँधी की बात को प्रमाणित मानें अथवा जो कुछ वे स्वयं अपनी आँखों से देख रहे हैं । उनके जीवन के अपने अनुभव तथा महात्मा गाँधी के कथन के बीच बराबर रस्साकशी चलती रहती थी अन्त में दोनों के बीच सामंजस्य का रास्ता तय करते थे । गाँधी जी आह्वान पर उन्होंने 16 फरवरी 1921 को सरकारी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया । गाँधी जी ने चरखा पर बल दिया । प्रेमचन्द ने सरकारी नौकरी से त्याग पत्र देने के बाद 20 हथकरघों का एक कारखाना स्थापित किये । न्यायालयों के स्थान पर पंचों के माध्यम से विवादों के सुलझाने की कोशिश की गयी । इसके लिए प्रेमचन्द ने पंच परमेश्वर कहानी लिखी । गाँधी जी ने उद्योग - धन्धों का विरोध किया था । "रंगभूमि" का सूरदास भी पांडेपुर में मि0 जान्सेवक द्वारा स्थापित की जाने वाली सिगरेट फैक्टरी का विरोध करता है । इस प्रकार शरतचन्द का राजनैतिक दृष्टि सीमित परिलक्षित होता है जबकि प्रेमचन्द का वर्णन क्षेत्र व्यापक है ।

प्रेमचन्द समाजवादी विचारधारा से भी अत्यधिक प्रभावित थे उनके जीवन दर्शन में सर्वहारा वर्ग का उत्थान ही समाज में समानता ला सकता है। रूस की बोल्शेविक विचारधारा से अच्छी तरह परिचित थे। गोर्की, टाल्सटाय उनके प्रिय रचनाकार थे। प्रेमचन्द के उपन्यासों में जो क्रान्ति का स्वर मुखरित हुआ है। वह इसी विचारधारा का प्रभाव है।

शरतचन्द्र तथा प्रेमचन्द के साहित्य में कलात्मक भिन्नताएं भी पायी जाती है। शरतचन्द्र प्रेम और कर्तव्य के बीच समझौते का रास्ता अपनाते हैं। किन्तु प्रेम -चन्द में ऐसा कम ही देखने को मिलता है। " रंगभूमि" में " सोफिया " के प्रेम में डूबा हुआ विनय ग्रामीण जनता पर गोली चलवा दे देता है। वह सोचता है कि इससे सोफिया प्रसन्न होगी किन्तु वह उससे प्रसन्न नहोकर उससे घृणा करने लगती है। इस प्रकार प्रेमचन्द केवल कर्तव्य पर बल देते हैं।

शरतचन्द्र के उपन्यास संयोगों पर अधिक निर्भर रहते हैं। तथा उनका उपसंहार अति नाटकीय होता है। " बड़दीदी" उपन्यास का दूसरा भाग संयोगों पर अधिक निर्भर है। माधवी की शादी जिस क्षेत्र में हुई होती है, संयोग से उसी क्षेत्र का जमीदार सुरेन्द्र नाथ भी रहता है। जब माधवी सुरेन्द्रनाथ के विषय में जानती है कि उसी की रक्षार्थ वह दूर निकल गया है। वह भी निकल जाती है। तथा " संयोग " से मुलाकात होती है। तथा सुरेन्द्र नाथ अपनी अन्तिम साँस

माधवी की गोदी में लेता है । इसी प्रकार श्रीकान्त उपन्यास में भी श्रीकान्त संयोग से उसी रंगशाला मे पहुँचता है जहाँ उसकी बाल प्रेमिका राजलक्ष्मी नृत्य कर रही होती है । इस प्रकार शरतचन्द के अधिकांश उपन्यास संयोगों पर आधारित रहते हैं ।

किन्तु प्रेमचन्द के औपन्यासिक कला में हम ऐसा कुछ नहीं देखने को पाते हैं । सभी घटनाओं के पीछे कारण - कार्य का सम्यक रूप से निर्वाह किया गया है । कथानक के स्थूल रूप में कम से कम जितना संयोग और कल्पना अपेक्षित होती है । प्रेमचन्द साहित्य में बस उतना ही पाया जाता है ।

शरतचन्द्र ने अपने उपन्यासों में व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा अधिक की है । चाहे वह श्रीकान्त हो, गृहदाह अथवा चरित्रहीन हो । कथानक का प्रवाह दब सा गया है ।

प्रेमचन्द के उपन्यास वालों व व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा के स्थान पर कथानक का प्रवाह अधिक पाया जाता है ।

शरतचन्द ने अतिवाद का सहारा लिया है यदि किसी से प्रेम प्रसंग का वर्णन है तो उसमें अतिचार के लक्षण प्रतीत होने लगते हैं । तथा पात्र जब तक रो नहीं देते । सन्तोष की साँस नहीं लेते ।

प्रेमचन्द मध्यमार्गी साहित्यकार हैं उनके उपन्यास आँसुओं में डूबे हुए न होकर यथार्थ की ठोस भूमि पर टिके हुए हैं।

इस प्रकार साहित्यिक तथा राजनैतिक दोनों क्षेत्रों में शरतचन्द्र तथा प्रेमचन्द में अन्तर परिलक्षित होते हैं। किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं लगाया जा सकता है कि एक छोटा है तथा दूसरा बड़ा। यह साहित्यकार के परिवेश उसकी अभिरूचि तथा समय की माँग की बात है। किसी क्षेत्र में एक बड़ा है तो किसी क्षेत्र में दूसरा।

xxxxxxx

उपसंहार

बंगभूमि के नवजागरण की विरासत रूप में हिन्दी प्रदेशों में भी नवजागरण प्रकट हुआ और इसके संवाहक बने भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पूर्वज इतिहास प्रसिद्ध अमीचन्द सेठ थे । जिनका परिवार बाद में बनारस आकर बस गया था । इसलिए भारतेन्दु के संस्कार में बंगाल प्रान्त की आबोहवा समाहित थी । यही नहीं ईश्वर चन्द्र विद्यासागर से उनके बहुत ही नजदीकी सम्बन्ध थे । उन्हीं की प्रशंसा में भारतेन्दु ने " मधुरी बानी कहि समुझावत, विधवा गन सों नेह लगावत " कही । इस प्रकार बंगाल के नवजागरण को हिन्दी प्रदेश में लाने का बहुत कुछ श्रेय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र को है । इन्होंने हिन्दी प्रदेश तथा बंग प्रदेश के नवजागरण में एक सेतु का कार्य किया । सामाजिक कुरीतियों, नारी जागरण, विधवा विवाह के समर्थन तथा देश - प्रेम की भावना से ओत-प्रोत रचनाएं की ।

इसी समय " आर्य समाज " समाज सुधार के क्षेत्र में सक्रिय था । इस समाज के लोग सनातनी पंडितों से शास्त्रार्थ करते थे तथा इसके साथ ही बाल विवाह एवं बेमेल विवाह की कुरीतियों पर भी बल देते थे ।

प्रेमचन्द के मस्तिष्क में इन दोनों प्रयासों का खूब प्रभाव पड़ा । चूंकि भारतेन्दु भी वाराणसी के ही थे तथा प्रेमचन्द भी बनारस के थे । यही नहीं भारतेन्दु साहित्यकारों में अग्रगण्य थे । "कवि-वचन सुधा, हरिश्चन्द्र चन्द्रिका

तथा हरिश्चन्द्र मेगजीन के माध्यम से वे बहुत ही प्रशंसित हो गये थे । अतः प्रेमचन्द पर इनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था । आर्य समाज के सन्देश भी प्रेमचन्द की पृष्ठभूमि में रचे थे । प्रेमचन्द स्वयं साक्षी थे । अनमेल विवाह के कारण पैदा हुई समस्याओं के । उनके पिता ने अपनी दूसरी शादी की तथा शीघ्र ही इस संसार से कूच गये । पीछे छोड़ गये दो बच्चे तथा एक विधवा । इन सबका भार प्रेमचन्द के ऊपर आ पड़ा था । बाल विवाह के दुष्परिणामों के भी प्रत्यक्ष भोक्ता थे प्रेमचन्द । उनकी शादी बाल्यावस्था में ही हो गयी । बहुत झेलने के बाद इस शादी की परिणति हुई विवाह विच्छेद में । इसलिए प्रेमचन्द को आर्य समाज की सम्पूर्ण बातें भली प्रकार से समझ में आयीं ।

इन सभी कारकों के साथ ही प्रेमचन्द अपनी आँखों से जिस समाज को देख रहे थे, जिस समाज में जी रहे थे, जिसके भोक्ता तथा दृष्टा दोनों वे स्वयं थे वह समाज विषमतापूर्ण था । पंडित पुरोहितों की धर्म के क्षेत्र में दादागिरी चल रही थी । देवालयों में वेश्याएं नृत्य कर सकती हैं किन्तु अछूत के प्रवेश से ही मन्दिर अपवित्र हो जाता है । इसके साथ ही प्रेमचन्द ने नारी दुर्दशा को भी अपनी आँखों से देखा - समाज निर्माण में जिसका इतना योगदान है वही नारी इतना तिरस्कृत तथा हेय समझी जाती है । वह केवल पुरुषों के भोग- विलास की सामग्री मात्र मानी जाती है । उसके सारे अधिकार छीन लिये जाते हैं । इसी प्रकार की

अनेकानेक घटनाएं प्रेमचन्द्र के लिए वैचारिक पृष्ठभूमि बनीं । अछूत और नारी ही विशेष रूप से प्रेमचन्द्र को आकर्षित किये ।

इसी समय कांग्रेस की स्थापना §1855§ में हुई । इससे राजनीतिक चेतना जगी । किन्तु यह चेतना ज्यादा प्रबल रूप नहीं धारण कर सकी । इसके अधिवेशन जहाँ भी होते केवल अधिवेशन के समय ही नारे लगाकर साल भर के लिए पुनः शान्ति हो जाती । इसके बावजूद भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि कुछ ही लोगों में सही, राजनैतिक चेतना जग रही थी ।

1893 में स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका में जाकर भारत का नाम रोशन किया । इस प्रकार के प्रतिनिधित्व से भारतीयों का उत्साह और बढ़ा ।

इस प्रकार देश - विदेश में नयी चेतना का संचार हो रहा था । प्रेमचन्द की संवेदनशीलता बड़ी व्यापक थी । उन्होंने उन चीजों का गहराई से अनुभव किया जिनके कारण समाज में गतिहीनता आयी है तथा देश का समुचित विकास नहीं हो पा रहा है । मुंशी प्रेमचन्द के सुधार की पहली सीमा आर्य समाज से प्रारम्भ होती है । तथा राजनीति के क्षेत्र में वे गोखले से ज्यादा प्रभावित हुए । इसके साथ ही गरम दल का भी प्रभाव उन पर था । 1907 में उन्होंने "दुनिया का सबसे अनमोल रतन नामक कहानी लिखा तथा खुदीराम बोस को फाँसी हो जाने

पर उनकी तस्वीर अपने कमरे में टांग दी । शीघ्र ही " सोजे वतन " अंग्रेजों द्वारा जब्त कर लिया गया ।

बंग साहित्य में वंकिम चन्द्र का प्रभाव सीमा का अतिक्रमण करके हिन्दी प्रदेशों में भी फैला । उनका " वन्दे मातरम् " नारा स्वतन्त्रता जयनाद बना । मुंशी प्रेमचन्द जी ने 1912 में " जल्वए ईशार " वरदान" प्रकाशित हुआ जिसमें बंकिम का प्रभाव पाया जाता है । बंग - भंग विरोधी स्वदेशी आन्दोलन का प्रभाव उनके "सोजे वतन" में मिलता है । इसके साथ ही प्रेमचन्द के जीवन को गतिशीलता प्रदान की । टालस्टाय की रचनाओं ने । उनकी रचनाओं से उन्होंने प्रेम, दया, क्षमा, परोपकार, अहिंसा, त्याग अपरिग्रह की शिक्षा ली । "पंच परमेश्वर " सरीखी कहानियों पर इन्हीं का प्रभाव है ।

इस प्रकार के राजनैतिक परिवेश के कारण प्रेमचन्द के मस्तिष्क में दो प्रकार की भावनाएं पैदा हुई । एक हिंसावादी तथा दूसरी अहिंसावादी । प्रेमचन्द को एक ओर रूस की लाल क्रान्ति खींच रही थी । तथा दूसरी ओर महात्मागांधी की अहिंसावादी नीति । इसीलिए उनकी कतिपय रचनाओं में हिंसावादी क्रान्ति का भी दर्शन होते हैं तथा कुछ रचनाओं पर अहिंसावादी नीति का प्रभाव है ।

गाँधी जी के प्रति मुंशी जी की अटूट आस्था थी । वे उनके अहिंसात्मक विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित थे । असहयोग आन्दोलन में खद्दर, चर्खे को स्वीकार किया गया । विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया गया । अदालत कचहरी का बहिष्कार किया गया, स्कूल कालेज का बहिष्कार किया गया । कौंसिल तथा उसके चुनावों का बहिष्कार किया गया । छूत- अछूत की भावना को मिटाने का प्रयास हुआ ।

गाँधी जी के अहिंसावादी विचारधारा से प्रभावित होकर प्रेमचन्द ने " प्रेमाश्रम" उपन्यास लिखा । इसी समय मुंशी जी ने अपनी सरकारी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया । असहयोग की पृष्ठभूमि में ही " संग्राम" नामक नाटक लिखा । यही नहीं इस समय प्रेमचन्द ने जो कहानियाँ लिखी उनमें से लगभग एक दर्जन कहानियाँ स्वराज्य की है ।

बंग प्रान्त की प्रतिभा ने समूचे देश को प्रभावित किया । रवीन्द्र नाथ टैगोर ने " काव्येर उपेक्षिता " नामक निबन्ध लिखा । उसका प्रभाव महावीर प्रसाद द्विवेदी पर पड़ा, इसी तर्ज पर उन्होंने " कवियों की उर्मिला विषय उदासीनता " नामक निबन्ध लिखा । तथा उन्हीं का अनुसरण करके

मैथिलीशरण गुप्त ने " साकेत " की सृष्टि की ।

कहने का तात्पर्य कि बंग साहित्य का सीधा प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ रहा था । उनकी मूल संवेदनाओं को हिन्दी प्रदेशों में भी समादृत किया गया। इस प्रकार बंगाल का नवजागरण सम्पूर्ण देश का नवजागरण बन गया ।

शरतचन्द्र तथा प्रेमचन्द में इतनी बड़ी समानता के कई कारण हैं । उनमें सबसे बड़ा समान कारक है - दोनों में सूक्ष्म निरीक्षण की शक्ति । दोनों कलाकारों का बचपन लगभग एक जैसे अभावपूर्ण वातावरण में बीता । बचपन में दोनों में एक जैसी चंचलता पायी जाती है । दोनों का समय भी लगभग वही है । इसलिए देश की तत्कालीन परिस्थितियों ने समान रूप से दोनों को प्रभावित किया । राष्ट्रीय स्तर पर जो भी विचार मंथन हो रहे थे उससे दोनों ही खूब वाकिफ थे । रवीन्द्र नाथ टैगोर, बंकिमचन्द्र चटर्जी ने समान रूप से शरत तथा प्रेमचन्द को प्रभावित किया । महात्मा गाँधी के नेतृत्व ने सम्पूर्ण देश को एकजुट करने में मदद दी । महात्मा गाँधी के व्यक्तित्व से दोनों कलाकार प्रभावित थे । अत: दोनों में गाँधी दर्शन का प्रत्यक्षीकरण पाया जाता है । इसके साथ ही गोखले ने भी समान रूप से दोनों साहित्यकारों को प्रभावित किया ।

कांग्रेस की नरमपथी विचारधारा के साथ ही लोकमान्य तिलक के नेतृत्व में भी दोनों साहित्यकारों की अद्भुत आस्था थी ।

सुधारवादी संगठन भी सम्पूर्ण देश की संस्कृति को जोड़ने का प्रयास कर रहे थे । एक जैसी परम्परा का प्रचलन करने पर बल दे रहे थे ।

इस प्रकार साहित्यकार जो बंग भूमि में पैदा हुए थे एक राष्ट्रीय चरित्र धारण कर सामने आये ।

राष्ट्रीय भावनाओं को प्रचारित प्रसारित किया गया । सुधारवादी संगठनों ने भी एक छोर से दूसरे छोर तक एक किया । जिसके परिणामस्वरूप बंगला तथा हिन्दी संसार में एक सी प्रवृत्तियाँ पैदा हुई ।

शरतचन्द्र का जन्म 1876 में हुआ था । इस समय सम्पूर्ण देश में नयी चेतना और प्रगति का दौर चल रहा था । राजनैतिक क्षेत्र में अंग्रेजों के दमन तेजी से चल रहे थे । इसके ठीक 19 वर्ष पहले स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन की ज्वाला प्रज्जवलित हुई थी । यह आन्दोलन अंग्रेजों द्वारा बर्बरतापूर्वक दबा दिया गया था। इस देश में रंग मंच पर सत्ता परिवर्तन के लिए होने वाले अभिनय पर पटाक्षेप हो गया था । अंग्रेजों के शोषण के तौर - तरीके, शासन करने के ढंग में चलाकी पूर्ण नये नये तरीकों का अन्वेषण आंग्ल शासन द्वारा खोजा जा रहा था । "फूट डालो और राज करो " सिद्धान्त को और व्यापक रूप दिया जा रहा था । जिसने हिन्दू तथा मुसलमान दोनों सम्प्रदायों को एक दूसरे का बागी बना दिया । मुसलमानों के अन्दर यह भावना भरी गयी कि भारतीय शासन पर आपका अधिकार है । हिन्दू आपकी शासित जाति है अतः वह आपकी बराबर न होकर क्षुद्र जाति है । यही नहीं तत्कालीन मुस्लिम संगठनों को तथा नेताओं को भी प्रोत्साहित किया जाने लगा । स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन में अंग्रेजों ने हिन्दू तथा मुस्लिम एकता का अद्भुत दृश्य देखा था अतः इस सामन्जस्य को समाप्त करना है । अंग्रेजी हुकूमत के पक्ष में हितकर लगने लगा । इसीलिए अंग्रेजों ने मुसलमानों को अपने हाथ का दुलरूवा बनाया ।

इसके विपरीत हिन्दुओं में यह भावना पनपायी गयी कि मुसलमान विदेशी है उनका इस देश पर रहने का कोई अधिकार नहीं है । यह धर्म हिन्दू धर्म का विरोधी है । जिसका परिणाम यह हुआ कि अंग्रेजों से युद्ध करने के स्थान पर हिन्दू तथा मुसलमान एक दूसरे के जान के बागी बन गये । एक अच्छे निर्देशक की भाँति महारानी विक्टोरिया समय - समय पर सूत्रधार के वाक्य के रूप में कुछ बोलने लगी । कभी हिन्दू धर्म के प्रति कुछ उदार दिखी तो कभी मुस्लिम धार्मिक उन्माद के परिणामस्वरूप जनता यह भूल गयी कि हमारा वास्तविक शत्रु कौन है । किस प्रकार इस समस्या से निपटा जाय । जो दूरदर्शी राष्ट्रभक्तों द्वारा ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ आन्दोलन प्रारम्भ भी रहे वे शिशु मृत्यु को प्राप्त हुए । एक अजीब सी राजनैतिक विचारों की शून्यता पैदा हो गयी । किन्तु शीघ्र ही इस किंकर्तव्य विमूढ़ता की स्थिति को खतम किया । वातावरण के सन्नाटे में रोशनी की ज्वाला जलायी महात्मागाँधी के नेतृत्व ने, महात्मा गाँधी की सर्व प्रमुख समस्या हिन्दू मुस्लिम एकीकरण की लगी । इसलिए सोचा गया कि यदि आंग्ल सत्ता को देश से हटाना है तो इन दोनों सम्प्रदायों में एकीकरण की भावना पैदा करनी होगी । हिन्दू मुस्लिम भाई - भाई का नारा दिया गया । इस प्रकार लम्बे अर्से से चले आने वाले साम्प्रदायिक विचारों का अन्त होने लगा और देश में दिशाहीनता के स्थान पर एक निश्चित दिशा निर्धारित हुई, एक निश्चित लक्ष्य निर्धारित हुआ।

और राजनीति के क्षेत्र में एक नयी सोच पैदा हुई । समाज सुधार के क्षेत्र में भी यह दृश्य देखने को मिला । प्रमुख समाज सुधारक राजाराम मोहन राय को दिवंगत हुए 43 वर्ष बीत चुके थे । इस समय तक दूसरे अधिकांश सुधारवादी नेता भी स्वर्गवासी हो चुके थे । इन सुधारकों की अनुपस्थिति में भी उनके सुधार के प्रयास के फल लुप्त नहीं हुए थे, देश प्रेम , समाज सुधार तथा बौद्धिक स्वातन्त्र्य की भावना चिन्तकों को अभी भी आलोड़ित कर रही थी । बंग समाज सुधार के क्षेत्र में जो भी प्रयास चल रहे थे उनमें नारी सुधार आन्दोलन प्रमुख था । नारी जीवन के त्रासदी को सुधारकों ने बहुत नजदीक से देखा था । उन्होंने महसूस किया था । उनका सम्पूर्ण जीवन पुरूष प्रधान समाज की सेवा के लिए निर्मित था । जीवन की सार्थकता पुरूषों की आदेशों का हूबहू पालन करना है । उनका अपना कुछ नहीं । पुरूष वर्ग पर इस प्रकार आश्रित रहने की मान्यता ने नारी जीवन को पंगु बना दिया था ।

उनका जन्म, जीवन तथा मृत्यु सभी कुछ पुरूषों की इच्छाओं पर निर्भर थे। वह इनका उपयोग एवं उपभोग अपनी इच्छानुसार कर सकता था । वह अपनी किसी भी भावना को न तो व्यक्त कर सकती थी और न ही उनकी इच्छाओं का अनादर कर सकती थी । सामाजिक मान्यताएं भी पुरूषों के पक्ष में ही बनायी गयी थी । जैसे लड़कियों को शिक्षा से दूर रखना चाहिए । इस मान्यता के

पीछे शुद्ध रूप से यही भाव समाया था कि पढ़ी - लिखी नारियाँ उस अर्थ में उनके लिए उपयोगी नहीं हो सकेगी जिस रूप में पुरूष वर्ग उनका शोषण, उपभोग करना चाहता था । इसलिए लड़कियों को शिक्षा से सर्वथा दूर रखा गया । उन्हें अंध - विश्वासी है बनाया रखा गया था । उनकी शादी बाल्यावस्था में ही कर देनी चाहिए जिससे उनके सतीत्व की रक्षा हो सके । बंग समाज में ऐसे तमाम उदाहरण मिलते है जिनकी शादी ऐसी लड़कियों के साथ हुआ जिनमें उम्र का बहुत बड़ा अन्तर था ।

जब यह विवाहितायौवन को प्राप्त करती तो उस समय पति दिवंगत हो जाते । नारी को सतीत्व रक्षा का भय दिखाकर उन्हें घर की चारदीवारी के अन्दर कैद कर दिया जाता था । पर पुरूष दर्शन तक की मना ही थी । कतिपय लड़कियाँ पति के दर्शन के पूर्व ही विधवा हो जाती थी उनके लिए सन्यासिनी का जीवन बिताना आवश्यक था । इसके पीछे भी यही तर्क सतीत्व रक्षा । पुरूष पूरे उत्साह से सम्मान जनक रूप से कई शादियाँ कर सकता था । किन्तु यह छूट नारियों के लिए नहीं थी । नारी तथा पुरूष दोनों एक साथ ही वैवाहिक अवसर पर ही एक मन्त्र को उच्चारित करते हैं किन्तु पुरूष उन मन्त्रों को बेहिचक ढंग से तोड़ देता था और नारी जीवन के लिए यही मन्त्र पैर की पैडी साबित होता था ।

बाल विवाह तथा अनमेल विवाह के परिणामस्वरूप बंग समाज में विधवाओं की एक अच्छी खासी जमात खड़ी हो गयी थी। परिवार की सेवा करना ही उनका मुख्य उद्देश्य रह गया। यदि उनमें मानव जनित स्वाभाविक प्रवृत्ति के कारण कहीं पैर फिसल गया और उनका सतीत्व भंग हो गया तो उनकी सारी सेवाएं परिवार के प्रति सम्पूर्ण त्याग एक झटके में निरर्थक सिद्ध होने लगता था। सामाजिक दृष्टि से वह पतित मान ली जाती थी। समाज पति उनके दंड को व्यवस्था करता था। नारी जीवन में सतीत्व के अतिरिक्त क्या नारीत्व का कोई मूल्य नहीं है? और उनके मातृत्व सेवा, दया, माया, ममता, अगाध विश्वास जैसे मानवी गुणों को तिरस्कृत कर दिया जाता था। सतीत्व ही नारीत्व है यह सिद्धान्त प्रचलित हो गया।

नवजागरण के पुरोधाओं ने इस मान्यता पर कुठाराघात किया। इन कुरीतियों को जड में नारी अशिक्षा, बाल- विवाह तथा अनमेल विवाह को पाया गया। इसलिए समाज सुधार के प्रथम प्रयास किया गया। नारी शिक्षा के लिए अनेक स्कूल कालेजों को स्थापना बंगाल प्रान्त में हुई। बाल- विवाह तथा अनमेल विवाह पर प्रतिबन्ध लगाये गये। इसके साथ ही विधवा जीवन में आमूल चूक परिवर्तन लाने के लिए विधवा विवाह का समर्थन किया गया। इस मान्यता के प्रचलित हो जाने पर नारी जीवन के सतीत्व तथा नारीत्व दोनों को विकसित होने का समय

मिला । बंगाल प्रान्त के लोग अपेक्षाकृत भावुक अधिक थे । इसलिए सुख दुख से प्रभावित होना उनकी स्वाभाविक विशेषता थी । जैसे ही नारी जीवन के ये सुधारवादी प्रयास समाज में प्रस्फुटित हुए जनता ने तो इसका स्वागत किया किन्तु समाजपतियों ने इसका जबरदस्त विरोध किया । इसका भी कारण यही था कि जाने अनजाने इन समाजपतियों को प्रतिष्ठा का यही एक साधन था । समाजपतियों ने समाज सुधारकों को हतोत्साहित करने के लिए बहुत प्रयास किये उन्हें जाति बहिष्कृत तक कर दिया । किन्तु परम्परागत कुप्रथाओं के उन्मूलन में इन विचारकों ने द्विगुणित उत्साह दिखाया । सामाजिक तथा राजनैतिक महामन्थन का प्रभाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पड़ा । साहित्य भी इससे अछूता नहीं रह सका । बंग साहित्य में इस भावना के संवाहक बने - बंकिमचन्द्र, तथा रवीन्द्र नाथ ठाकुर। यहाँ पर एक बिन्दु और ध्यातव्य है कि नवजागरण शहरी मध्यवर्ग तक ही ज्यादा प्रभावशाली दिखता है । शायद इसका कारण यह है कि मध्य वर्ग के लोग ही पाश्चात्य संस्कृति से जल्दी परिचित हुए थे । तथा वही लोग उस संस्कृति के दुष्परिणामों से चिन्तित भी हुए थे । लेकिन इसका यह अर्थ नहीं निकलता कि इस आन्दोलन से किसान, मजदूर वर्ग पूर्णरूप से अछूता रहा । मध्यवर्ग ने सामाजिक कुरीतियों का पर्दाफाश करके किसान मजदूर वर्ग के लिए एक वैचारिक धरातल तैयार कर दिया । स्वतन्त्रता, समानता और जनवाद का यह सांस्कृतिक धरातल नवजागरण

का विशेष रूप से संवाहक बना । रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा बंकिमचन्द्र भी इसी कोटि के विचारक थे अतः तत्कालीन सुधारवादी आन्दोलन से ये खूब प्रभावित हुए ।

" यंग इण्डिया " संगठन के कार्यकर्ता अपने को प्रगतिवादी कहते थे । प्रगतिवाद के प्रतीक रूप में शराब पीना या तमाम वर्जित स्थानों पर जाना आम बात थी । वे अपने विचार तथा संस्कार में अंग्रेजों की तुलना करना चाहते थे । मांस भक्षण आम बात थी । इस प्रकार आवारगी तथा फाके मस्ती का जीवन लेकर समाज परिष्कार करना चाहते थे । तत्कालीन साहित्य में समाज सुधार सम्बन्धी दृष्टिकोण में नारी सुधार भावना मुख्य रूप से मुखरित हुई । विधवा विवाह समर्थन, नारी शिक्षा पर बल, बाल विवाह, पर रोक , अनमेल विवाह पर रोक इत्यादि कार्य हुए ।

राजनीति के क्षेत्र में वैसे महात्मा गांधी इस समय तक राष्ट्रीय स्तर के नेता बन चुके थे । देश के प्रत्येक कोने में महात्मा गांधी का सम्मान हो रहा था। लेकिन सिद्धान्तों को लेकर मतभेद था । देशवासियों को विश्वास नहीं हो रहा था कि चरखे कि सहारे स्वाधीनता ली जा सकती है । इन उदार पंथी कांग्रेस की नीतियों का ज्यादा प्रभाव युवा मन पर नहीं पड़ रहा था । इसी के समानान्तर चलने वाले गरमदल के सिद्धान्त युवाओं को ज्यादा आकर्षक तथा युक्तिसंगत लगे ।

अत: लोकमान्य तिलक एवं सुभाष चन्द्र बोस की भावनाओं का स्वागत भी समाज में होने लगा । इस प्रकार बंग प्रान्त के भावुक युवा मन को सुभाष चन्द्र बोस छा गये ।

साहित्य भी तत्कालीन परिवेश से मुक्त नहीं रह सका । समाज सुधार में " बंग समाज " नामक संस्था का प्रभाव दिखलायी पड़ने लगा । वर्ण्य विषय में भी परिवर्तन होने लगा । समाज की पतित समझी जाने वाली नारियाँ साहित्य की नायिका बनने लगीं । चूँकि इन सभी सुधारों परिवारों के मूल में राष्ट्र प्रेम की भावना छिपी थी । इस भावना के बिना स्वतन्त्रता की कामना करना भी असंगत प्रतीत होता है । बंगीय साहित्य में समाज परिष्कार तथा देश प्रेम की भावना बलवती हुई । समाज सुधार परक रचनाओं में - रवीन्द्रनाथ टेगोर की " आँख की किरकिरी प्रकाशित हुई । जिसमें इन्होंने विधवा प्रेम को दर्शाया है । इसी प्रकार शरतचन्द्र के साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण करने से पूर्व रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा बंकिमचन्द्र चटर्जी साहित्य में प्रतिष्ठित हो चुके थे । इन साहित्यकारों की रचनाएं "बंग दर्शन " "यमुना", तथा "भारतवर्ष " नामक पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थी । बंग समाज इन सम्मानित साहित्यकारों से बहुत ही प्रभावित था । इन साहित्यकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से वही कार्य किया जो कि सुधार वादी संगठन अपने आन्दोलनों से कर रहे थे । तात्पर्य यह कि समाज सुधार की

भावना इन साहित्यकारों में पायी जाती है। इस प्रकार सुधार की भावना इन साहित्यकारों में पायी जाती है। इस प्रकार शिक्षित समाज में नवजागरण का सन्देश पहुंचाने में इन साहित्यकारों का विशेष योगदान रहा। रवीन्द्र नाथ टैगोर तथा बंकिम चन्द्र के अतिरिक्त प्रमथ चौधरी, अमृत लाल वसु, श्री राधे प्रसाद विद्या विनोद, सत्येन्द्र नाथ दत्त, सौरीन्द्र मोहन मुखर्जी, हेमन्त कुमार राय, मणि लाल गांगुली, पवित्र गांगुली, अमल होम, दिलीप कुमार राय, नवजागरण के सन्देश वाहक थे। इन साहित्यकारों से प्रभावित होकर शैलजानन्द, मुखोपाध्याय, काजी नजरूल इस्लाम, अचिन्त्य कुमार सेन गुप्त, प्रमेन्द्र मित्र, नृपेन्द्र कृष्ण चट्टोपाध्याय ने अपनी रचना को गति प्रदान की शरतचन्द्र भी इन साहित्यकारों से प्रभावित हुए। शरत साहित्य का जो भी वर्ण्य विषय है कुछ तो उनके अपने जीवन का यथार्थ है तथा कुछ समकालीन साहित्यकारों की प्रेरणा। शरतचन्द्र ने बंग समाज को जिस रूप में देखा था, जिस रूप में उन्होंने अपने जीवन को बिताया था। उसी का वर्णन अपने साहित्य में किया। समाज की अटपटी, सड़ी-गली मान्यताएं खण्डित होनी चाहिए। वैसे यह कोई नया नयी विचार उनके साहित्य में प्रतिष्ठित नहीं हुआ क्योंकि समाज सुधार का स्वर ब्राहम समाज जैसे सुधार वादी संगठनों द्वारा पहले ही किया जा चुका था। "यंग इण्डिया" संगठन के माध्यम से कुलीनता पर प्रहार किया जा चुका था। ये ब्रहम प्रेरणा स्रोत शरतचन्द्र को प्रेरित अवश्य किए उनके लिए एक वैचारिक धरातल अवश्य बनाए किन्तु शरतचन्द्र की साहित्यिक सोच तत्कालीन समस्त साहित्य कारों

से कुछ अलग किस्म की थी । जिसके परिणामस्वरूप शरतचन्द्र को इन समकालीन साहित्यकारों का विरोध भी सहना पड़ा । वस्तुतः शरत साहित्य की सृष्टि उनके अपने जीवन की अनुभूति है । आवारगी, फाकेमस्ती उनको अपने पिता से उत्तराधिकार में मिली थी । गरीबी इतनी कि फीस के पैसे भी नहीं इकट्ठे हो सके जिसका परिणाम यह हुआ कि उन्हें शिक्षा भी अधूरी ही छोड़नी पड़ी स्वाभाविक है कि इस प्रकार के व्यक्ति तथाकथित कुलीन समाज में सम्मान नहीं प्राप्त कर सकते । शरतचन्द्र में संगीत के प्रति अतिशय लगाव था । बाँसुरी तथा तबला बजाने में महारत हासिल किये थे । गला भी बहुत अच्छा था । परिणाम स्वरूप वे उस समाज की ओर आकृष्ट हुए जहाँ उनका सम्मान हो । जब शरतचन्द्र 19 वर्ष के थे तभी से कालीदासी नामक वेश्या के यहाँ आया जाता करते थे । चूँकि कुलीन समाज में उनकी मर्यादा घट गयी थी । इस लिए अकुलीन समाज की ही शरण उन्होंने ली । इसी समाज में शरतचन्द्र ने अपने साहित्य के मनुष्य की खोज की । और यह भी पाया कि मानवता वाद समाज द्वारा निर्धारित कुलीनता सिद्धान्त से बड़ी वस्तु है । मनुष्य में छिपी हुई सहज मानवीय करुणा को झुठलाया नहीं जा सकता । इस प्रकार शरत साहित्य में जो भी पतिताएं चित्रित हुई हैं वे सब शरतचन्द्र के जीवन से किसी न किसी रूप से सम्बन्धित अवश्य हैं । शरतचन्द्र जहाँ भी गये उनका मन समाज की पतित समझी जाने वाली नारियों के प्रति आसक्त हुआ । मुजफ्फर पुर जाने पर वहाँ भी एक वेश्या के प्रति आसक्त हुए ।

वह "यूटी " नामक वेश्या इनके लिए विलास की वस्तु नहीं बनी बल्कि आदर की पात्र बनी । शरतचन्द्र ने मानवता की खोज उस समाज में की जो कि सर्वथा से उपेक्षित रहे । शरतचन्द्रने जो शिक्षा अपने जीवन की पाठशाला से ग्रहण की उसका उत्तरोत्तर विकास करने में रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा बंकिम बाबू ने अहं भूमिका निभायी । " रवीन्द्र नाथ टैगोर " की रचना " आँख की किरकिरी" प्रकाशित होने पर शरतचन्द्र को मानों अपनी विचारधारा का साकार रूप मिल गया । शरतचन्द्र ने विधवा निरुपमा देबी से प्रेम किया था । किन्तु उनका यह प्रेम सफल नहीं हो सका जिसकीटीस उनको हमेशा सालती रही। उनका यह विरह बोध उनके साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ । चाहे वह "देवदास" की "पार्वती " हो अथवा "बड़दीदी" उपन्यास की नायिका "माधवी" हो, सबमें शरतचन्द्र के जीवन का यथार्थ झलक मारता है ।

वैसे यह तथ्य सत्य है कि नवजागरण आन्दोलन में नारी के प्रति सम्मानजनक दृष्टि पनप रही थी । इसी से प्रेरित होकर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने " कात्येर उपेक्षिता" निबन्ध लिखा ।

नवजागरण के परिणामस्वरूप साहित्यकारों की नारी विषयक सोच बदली । शरतचन्द्र इन भारतीय नारी रूपों के अतिरिक्त पाश्चात्य नारी रूप की भी प्रतिष्ठा की है । उनकी मान्यता है कि नारियों को सिर्फ देवी की पदवी

दे देने से नारी समाज में सुधार सम्भव नहीं है । उनमें नयी सोच पैदा करने की आवश्यकता है । उनकी स्वतन्त्रता पर बल देने की आवश्यकता है । शरतचन्द्र पाश्चात्य साहित्यकारों में - हेनरीवुड, मेरी कौरेली, क्लिटन और डिकिन्स के साहित्य से भी खूब प्रभावित थे । अतः उनकी सोच केवल बंग समाज तक ही सीमित नहीं गयी । पाश्चात्य विचारधाराएं भी उनके साहित्य के स्थान पाने लगीं । विधवा के प्रति सम्मान तथा नारी जीवन के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण यह निश्चित रूप से भारतीय नवजागरण का प्रभाव है । शरतचन्द्र के साहित्य में दो नारी पात्र ऐसे आये हैं जिनके आचार - विचार से ऐसा लगता है कि ये पात्र पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण कर रहे हैं जैसे श्रीकान्त की "अभया " तथा चरित्रहीन की किरणमयी । अभया में जहाँ नारी- पुरुष समानता पर बल की भावना ज्यादा बलवती दिखायी पड़ती है । वहीं पर किरणमयी अपने वैयक्तिक सुख पर बल देती है । अभया पति द्वारा बर्मी स्त्री से शादी कर लेने पर वह हिन्दू रीति नीति को तहस नहस करके अपने प्रेमी रोहिणी बाबू के साथ खुले रूप में रहने लगती है । किरणमयी पति का इलाज करने वाले डा0 के प्रति आसक्त होती है बाद में दिवाकर को लेकर आक्याब चली जाती है । इस प्रकार दोनों नारियां रोमान्टिक प्रवृत्ति को परिलक्षित होती हैं । इनके ऊपर पाश्चात्य नारियों का प्रभाव परिलक्षित होता है ।

शरतचन्द्र का अध्ययन अति विस्तृत था । उनका -"नारी का मूल्य " नामक नामक निबन्ध विश्वभर के नारी जीवन का चित्रण करता है । इसलिए उनके नारी

विषयक दृष्टिकोण में रूमानी लक्षण भी स्पष्ट होते हैं ।

शरतचन्द्र कुलीनता की लक्ष्मण रेखा के अन्दर जीना पसन्द नहीं करते थे । उन्हें एक सच्चे मानव की तलाश थी और यह मानवता उनको नारी जीवन में अत्यधिक दिखी । जो त्याग, दया, माया, मानव प्रेम नारी जीवन में है वह अत्यन्त कहाँ ? यदि कोई नारी अपनी देह पवित्र नहीं कर पायी तो क्या उसके अन्दर के अन्य मानवीय मूल्य भी निरर्थक सिद्ध कर दिये जायें । यही शरतचन्द्र के अधिकांश उपन्यासों में दिखलायी पड़ता है । उनके घरेलूपन के भी जो उपन्यास लिखे गये उनमें भी ज्यादातर नारियाँ क्षुद्र स्वार्थों से संघर्ष कर रही हैं ।

यह सत्य है कि शरतचन्द्र के प्रादुर्भाव के समय नवजागरण व्यापक रूप से प्रचारित किया जा रहा था, किन्तु इस आन्दोलन में केवल वे ही लोग सम्मिलित थे जो कि ज्यादा पढ़े - लिखे थे । जन सामान्य इस सुधारवादी आन्दोलन से स्वयं को अलग महसूस करता था । इसका भी कारण शायद यह था कि ये सुधारवादी नेता समाज के उच्च वर्ग से आये थे या मध्यवर्ग से आये थे । आर्थिक रूप से सम्पन्न थे तथा भली प्रकार शिक्षित थे जिनका जनसाधारण से ज्यादा मेल मिलाप नहीं हो पाता था। शरतचन्द्र के साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण करते ही नवजागरण जनसामान्य के बीच स्थान पाता है । शरतचन्द्र समाज के सुविधा सम्पन्न वर्ग से नहीं आये थे । ये गरीब इतने थे फीस का पैसा नहीं मिल पाता था । परिणामस्वरूप किसी तरह 10वीं कक्षा की परीक्षा

ही पास कर सकें। आगे की पढ़ाई ठप हो गयी। दो सौ पचीस रूपये में घर भी बिक गया। नौकरी के लिए दर - दर भटकने लगे। समाज के उच्च समाज-पतियों के बीच सम्मान नहीं पाते थे इस लिए सामाजिक रूप से पतित समझे जाने वाली जातियों के बीच में आने जाने लगे। इसी समय उनको इन जातियों में छिपे हुए देवत्व की परख करने का अवसर मिला। इसलिए जन साधारण शरतचन्द्र से ज्यादा प्रभावित हुआ। और नवजागरण को बंग भूमि की धूल- माटी में फैलाने का वास्तविक कार्य शरतचन्द्र ने ही किया।

शरतचन्द्र के उद्भव के समय रवीन्द्र नाथ टैगोर तथा बंकिम चन्द बांगला साहित्य में स्थापित हस्ताक्षर बन चुके थे। साहित्य ही नहीं राजनीति के क्षेत्र में भी मार्ग निर्देशन का कार्य कर रहे थे। बंकिम द्वारा लिखित " वन्दे मातरम" स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों के लिए मुख्य वाक्य हो गया था। इन दोनों हस्तियों के रहते हुए किसी अन्य साहित्यकार का स्थान बन पाना बड़ा मुश्किल कार्य था। शरतचन्द्र भी इनसे बहुत ही प्रभावित हुए। यहाँ तक कि बंकिम द्वारा लिखित " मृणालिनी " नाटक में शरत ने स्वयं मृणालिनी की भूमिका निभायी। तथा उनके अधिकांश साहित्य का अनुशीलन किया।

रवीन्द्र नाथ टैगोर को वे हमेशा अपना काव्य गुरू मानते रहे। उनके सम्पूर्ण साहित्य का गहन अध्ययन किया तथा उन्हीं जैसा बनने की कोशिश की।

इसके लिए सतत प्रयत्नशील बने रहे । यूँ तो रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी समाज सुधार के लिए भी रचनाएं की । जैसे - आँख की किरकिरी " में विधवा प्रेम का समर्थन किया गया है । फिर भी समाज सुधार के क्षेत्र में जो विधवा जीवन के प्रति शरत ने सम्मान प्रकट किया है वह रवीन्द्र साहित्य में नहीं मिलता है । शरतचन्द्र ने अपने जीवन की पाठशाला में जो कुछ सीखा वह बहुत ही सजीव बन पड़ा है । विधवा प्रेम के सन्दर्भ में एक तरफ प्रेरणा रवीन्द्र नाथ टैगोर के आँख की किरकिरी" से तो मिली ही । साथ ही उनके अपने जीवन का भोगा हुआ यथार्थ भी । उसका प्रेरक बना । शरत ने 1900 में एक साहित्य गोष्ठी स्थापित की थी इसके सदस्य थे - मामा सुरेन्द्रनाथ, गिरीन्द्र नाथ मिस, योगेश मजमूदार, विभूति भूषण भट्ट तथा निरूपमा देवी । निरूपमा देवी विधवा थी । इनके प्रति शरत का अत्यधिक आकर्षण था । किन्तु समाज के नियमों के कारण यह आकर्षण विवाह में नहीं बदल सका। इसी प्रकार की तमाम घटनाएं उनके प्रेरणा के रूप में कार्य करती रहीं । जिसके कारण वे रवीन्द्र नाथ टैगोर से भी आगे निकलते हुए प्रतीत होते हैं ।

शरत के नवजागरण में बंगाल की धूल - माटी की गन्ध आती है । उनकी विधवाएं बंगाल की विधवाएं हैं । रवीन्द्र नाथ टैगोर विश्व मानव चरित्र के पक्षधर हैं अतेव उनके साहित्य में वह पैनापन नहीं आ पाया है जो कि शरत साहित्य में परिलक्षित होता है ।

में परिलक्षित होता है ।

इस नवजागरण की प्रेरणा शरत ने केवल बंग भूमि के साहित्यकारों से ही नहीं ली । शरत ने टालस्टाय, मेक्सिम गोर्की सरीखे पाश्चात्य साहित्यकारों से भी खूब प्रभावित थे । टालस्टाय की " अन्ना केरेनिना" का अध्ययन शरत ने पचासों बार किया । तथा " नारी का मूल्य " तथा नारी का इतिहास " लिखने की सामग्री प्राप्त की मेक्सिम गोर्की से प्रभावित होकर उन्होंने " पथेर " दबी " की सृष्टि की । गोर्की तथा शरत के जीवन में भी बहुत कुछ समानताएं पायी जाती हैं । दोनों ने बहुत दिन तक आवारगी का जीवन बिताया/तथा दोनों मुक्ति आन्दोलन का भी समर्थन किया ।

इस प्रकार साहित्य के क्षेत्र में नवजागरण की प्रेरणा न केवल बंग साहित्य से मिली अपितु स्त्री साहित्य से भी मिली । इन प्रेरणादायक कारकों के अतिरिक्त शरतचन्द्र को प्रभावित किया तत्कालीन बंग समाज की पतिताओं की दुर्दशा ने । इस वर्ग की नारियों से शरत के बहुत ही नजदीकी सम्बन्ध थे । इनके व्यक्तिगत जीवन में आने वाली पतिता नारियां ही इनके साहित्य को गति प्रदान की। यही कारण है कि इनका चित्रण करने में इन्होंने कल्पना का सहारा कम ही लिया है । इनके गुरु पंचकौडी ने इनको इस बात के लिए सचेत भी किया था कि साहित्य में ज्यादा कल्पना का समावेश नहीं होना चाहिए । नीरू दीदी, सुरबाला, तथा

निरूपमा देवी किसी न किसी रूप में शरतचन्द्र को साहित्य सृजन के लिए सदैव प्रेरक बनी रहीं। इन नारियों से शरत का सम्बन्ध हार्दिक था। यही नहीं मुजफ्फरपुर की यूँटी नामक वेश्या जिसके यहाँ शरत आते-जाते थे वह भी शरत साहित्य में स्थान पायी। शरतचन्द्र ने स्वयं स्वीकार किया है " श्रीकान्त " में जीवन के उन्हीं रूपों का वर्णन मैंने किया है, जिनसे मेरा व्यक्तिगत परिचय है, और उन्हीं चरित्रों को मैंने लिया है जिनका अध्ययन निकट से करने का अवसर मुझे मिला है, पर इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि वह मेरा आत्मचरित है। फिर भी मुझे लोगों की यह धारणा जानकर प्रसन्नता ही होती है, क्योंकि उससे प्रमाणित होता है कि मेरे पात्र पाठकों को सजीव लगते है और मेरा जीवन वर्णन और चरित्रांकन यथार्थ जीवन के बहुत निकट है।"

कहानी लिखने की प्रेरणा उनको पिता मोती लाल से भी खूब जो कि स्वयं एक साहित्यकार थे। चोरी से शरत ने पिता की टूटी हुई आलमारी खोलकर " हरिदास को गुप्त बातें" और भवानी पाठ" जैसी पुस्तकें पढ़ी। इन पुस्तकों को पढ़ने के लिए उन्हें मनाही थी क्योंकि इनका प्रभाव बालकों के ऊपर बहुत बुरा पड़ता था। इनमें कुछ अधूरी कहानियाँ भी थीं उनको पूरा करने के लिए शरत कृत संकल्प हुए तथा उसी प्रकार के भावनों से उनको पूर्ण किया।

शरतचन्द्र में सूक्ष्म परीक्षण की शक्ति बहुत अधिक थी। किसी भी

घटना को देखते तो उसके अन्तस में पहुँचने का प्रयास अवश्य करते । यही पर्यवेक्षण की शक्ति उनकी कहानी के लिए संवेदना बनती जाती थी ।

बचपन में शरत को अपने नाना केदारनाथ गांगुली के यहाँ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था अतः उस भरे पूरे परिवार की हर स्थिति परिस्थितियों से वे प्रभावित होते रहते थे । इस संयुक्त परिवार की आपसी टकराहट, खान-पान उठन-बैठन, सबका शरत पर प्रभाव पड़ा ।

शरत के समीप रहने वाले जीव-जन्तु भी साहित्य में स्थान पाये । भेलू कुत्ता, बाटू बाबा चिड़िया, गाय तथा साँप सभी के प्रति उनकी सहानुभूति थी । अस्तु, इनकी अपनी अभिरूचि, शराब, गाँजा, हारमोनियम, क्लेयरनेट, बाँसुरी बजाना तथा नृत्य करना मुख्य था । इसकी प्रेरणा इनको बचपन के मित्र राजू से मिली और वह राजू "सतीश" के रूप में अमर हुआ ।

इन सब घटनाओं से शरत इस तरह प्रभावित हुए कि आजीवन इसी में व्यस्त रहे । वे इन घटनाओं के भोक्ता ही नहीं, दृष्टा भी थे । शायद यही कारण है कि उनकी रचनाओं के पाठक भी अधिक बने । छात्र, गृहनारी, तथा व्यापारी सभी इनके भक्त बने । छात्र "चरित्रहीन " श्रीकान्त तथा देवदास को हमेशा अपने साथ रखते थे । यही नहीं क्रान्तिकारी "पथेरदावी को सदैव अपने पास रखते थे । इन क्रान्तिकारियों के पास केवल गीता तथा पथेरदावी

दो ही रचनाएं रहती थी । "जिस समय शरत प्रसिद्धि के शिखर पर थे, उसी समय भारतीय राजनीति में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन होने लगे थे । राजनैतिक मंच पर नयी परिस्थितियां पैदा हो रही थीं । 13 अप्रैल 1919 को जलियां-वाला बाग काण्ड तथा रोलेक्ट एक्ट के आगमन से देश के स्वाभिमान पर चोट पहुँची । समूचा देश विषधर भुजंग की भांति फुंफकार हो उठा । रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अंग्रेजों द्वारा प्रदान की गयी "सर" की उपाधि लौटा दी । देशबन्धु चितरंजन दास भी इस महासमर में कूद पड़े । इस प्रकार सम्पूर्ण देश आन्दोलित हो उठा ।

शरत का अत्यधिक लगाव था - देश बन्धु चितरंजन दास से इसलिए उन्हीं के नेतृत्व में राजनीति में भी कूदे । वैसे शरत का झुकाव सदा गरम दल की ओर था । लोकमान्य तिलक के प्रति उनकी सच्ची श्रद्धा थी । "हरिलक्ष्मी" नामक कहानी में तिलक की चर्चा की है ।

भारतीय राजनीति में महात्मा गांधी भी एक प्रभावशाली नेता के रूप में उभरे थे । लेकिन बंगाल प्रान्त प्रारम्भ में महात्मा गांधी के साथ नहीं था । देश बन्धु चितरंजन गांधी जी के असहयोग आन्दोलन के विरुद्ध थे । इसी समय कांग्रेस का एक विशेष अधिवेशन कलकत्ता में हुआ जिसके सभापति बनाये गये।

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय। जिनके प्रभाव से महात्मागाँधी का असहयोग आन्दोलन प्रस्ताव पास हो गया। शरत ने असहयोग आन्दोलन का पूरी तरह स्वागत किया। शीघ्र ही वे हावड़ा जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष तथा अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य भी चुने गये। डॉ० यतीन्द्रनाथ, मोहनदास गुप्त, सुभाषचन्द्र बोस, हेमन्त कुमार सरकार, निर्मलचन्द्र "चन्द्र" इनके सहयोगी बने। शरतचन्द्र नियम का पालन करने के लिए सूत कातते तथा खादी पहनते थे। किन्तु वे सूत कातने से प्रभावित नहीं थे। उन्होंने स्पष्ट कहा " भारत की बीस लाख रूपये की खादी से अस्सी करोड़ रूपयों की कमी पूरी नहीं जा सकती। काठ के चर्खे से लोहे की मशीन को हराया नहीं जा सकता। और अगर ऐसा हो भी जाय तो इससे मनुष्य का मार्ग प्रशस्त नहीं होता। 1929 में उन्होंने " वेणु पत्रिका " में " परशुराम " के छद्म नाम से चर्खे के विरोध में लेख लिखा। शरतचन्द्र ऐसे मानव थे जिनके अन्तस में देश प्रेम की भावना उमड रही थी। एक बार उनसे किसी ने प्रश्न किया कि क्या वे हिंसावादी राजनीति में विश्वास करते हैं ? शरत ने उत्तर दिया कि देश के लिए जो काम करते हैं, उन सब पर मैं श्रृद्धा रखता हूँ भले ही वे हिंसात्मक क्रान्तिकारी हो या अहिंसात्मक सत्याग्रही। मेरे लिए वे दोनों ही श्रद्धा के पात्र हैं। बंगाल के जितने लड़कों ने जीवन का सर्वस्व बलिदान किया, उसकी जोड़ सारे भारतवर्ष में नहीं है। क्यों जानते हो ? कारण यह है कि बंगाल के

युवक जितना अपने देश को प्यार करते हैं उसका एक हिस्सा भी शायद पंजाब को छोड़कर भारत में और कहीं खोजे नहीं मिलेगी। इसी से "वन्दे मातरम" की सृष्टि बंगाल में हुई।"

असहयोग आन्दोलन में नारियाँ भी सम्मिलित हुई थीं। उनकी देखरेख के लिए शरत ने " नारी कर्म मन्दिर " की स्थापना की। तत्कालीन समीक्षकों ने शरतचन्द्र में रवीन्द्र नाथ टैगोर से भी अधिक देश प्रेम देखा था। " नारायण " पत्रिका" के सम्पादक चित्तरंजनदास ने लिखा था " रवीन्द्रनाथ ने पश्चिम से बहुत सारी चीजें गृहण की हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनकी वजह से बंगला साहित्य में विविधता आई और उसकी समृद्धि भी हुई। परन्तु इसके कारण बंगाल की अपनी संस्कृति और राष्ट्रीय चेतना का विकास नहीं हो सका। किसी भी स्थिति में हमारे लिए यह शोभनीय नहीं है कि हम पश्चिम की चकाचौंध से प्रभावित हो जाँय। " वही चित्तरंजन दास शरत को "नारायण " के लिए कहानी की माँग किये। इसके लिए शरत ने "स्वामी " नामक ग्रन्थ लिखा। पारिश्रमिक के रूप में बैरिस्टर दास ने कोरा चेक भेज दिया था। इस प्रकार देश प्रेम के क्षेत्र में शरत रवीन्द्र नाथ टैगोर से भी आगे बढ़ गये।

इस नवजागरण के मूल में देश प्रेम ही समाहित था। शरत के सभी

पात्र बंगाल की ही धूल-माटी से आये हैं। वहीं की धरती को महिमान्वित किया है।

16 जून 1925 को देशबन्धु का देहान्त हो गया। इसके बाद शरत ने पुनः साहित्य लेखन का कार्य प्रारम्भ किया। इस समय गोर्की से वे ज्यादा प्रभावित हुए। और जागरण तथा "पथेरदाबी" जैसे उपन्यासों की सृष्टि की। "पथेरदाबी" प्रकाशित होते ही जब्त कर ली गयी थी। पुलिस कमिश्नर ने शरत से कहा " जहाँ भी हम क्रान्तिकारियों को पकड़ते हैं, वहीं दबते हैं कि हरेक क्रान्तिकारी के पास दो पुस्तकें हैं - गीता और पथेरदाबी।"

हिन्दू मुस्लिम एकता को लक्ष्य करके उन्होंने "महेश" नामक कहानी लिखा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि शरत ने नवजागरण बंगाल ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण देश में लोकप्रिय बनाया। तथा उसके समाज सुधार एवं राजनीति सुधार दोनों रूपों को स्वीकार किया।

समीक्षात्मक कृतियाँ

1. आधुनिक भारतीय संस्कृति - एल०पी०शर्मा

2. आधुनिक भारत वर्ष का इतिहास - एल०पी०सरकार

3. आधुनिक भारत का इतिहास - बी०एल०ग्रोवर

4. आधुनिक भारत का इतिहास - सुमित सरकार

5. बंगला नवजागरण और भारतेन्दु डा० शम्भु नाथ द्वारा सम्पादित

6. बीसवीं शताब्दी में भारतीय महिलाओं का सामाजिक एवं राजनैतिक - मधुराका सक्सेना ।

7. भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता का एक विकास । - बी०एन०लूनिया

8. भारतीय संस्कृति का इतिहास - एस०विद्यालंकार

9. भारतीय स्वतन्त्रता का इतिहास - डा० ताराचन्द्र

10. भारत में सामाजिक धार्मिक, आन्दोलन- का एक अध्ययन । वी०के०गुप्त

11. भारतीय नवजागरण प्रणेता तथा गौरीशंकर भट्ट ।

12. महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण । डा० राम विलास शर्मा

13. सम्पत्ति शास्त्र । आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

14• भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक - जी०एस० चोपड़ा, बी०एन०पुरी, एम०एन०दास ।

15• भारत में सामाजिक आन्दोलन और परिवर्तन । डा० सुरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

16• मोहन राय और जीवन और दर्शन । - के०सी०बत्ता ।

17• स्वतन्त्रता संग्राम - विपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी

18• अवारा मसीहा - विष्णु प्रभाकर

19• उत्तर प्रदेश के सामाजिक एवं धार्मिक- जीवन को प्रभावित करने वाले साहित्यकारों के प्रयास । डा० शिवराम त्रिपाठी

20• उपन्यास और समाज सुधार के दर्शन- डा० राम कुमार वर्मा

21• समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों के परिप्रेक्ष्य - में प्रेमचन्द साहित्य का मूल्यांकन सतीशकुमार दुबे ।

22 सामाजिक परिवर्तन और उनकी हिन्दी- साहित्य पर प्रभाव । वी०पी०खत्री

23• 19वीं शती और उसके बाद का - साहित्य । इलाचन्द्र जोशी ।

24• सोमेन्द्र नाथ टैगोर - राजाराम मोहन राय ।

25• आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन । — एम०एम०श्रीनिवास ।

26• संस्कृत के चार अध्याय - राम धारी सिंह दिनकर ।

पत्रिका

1• सरस्वती - अंक जुलाई 1913

शरतचन्द्र की विवेचित कृतियाँ :

1• बडी दीदी

2• देव दास

3• स्वामी

4• निष्कृति

5• पथ के दावेदार

6 काशी नाथ

7 ग्रामीण समाज

8 दत्ता

9 गृहदाह

10 बैंकुण्ठ का दान पत्र

11• नव विधान

12 परिणीता

13• चन्द्र नाथ

14• श्रीकान्त

15 देना पावना

16 शुभदा

17 पण्डित जी

18 बिन्दो का लडका

19 ब्राह्मण की बेटी

20 जागरण

21 विप्रदास

22 शेष प्रश्न

23 अरक्षणीया

24 चरित्रहीन

प्रेमचन्द की विवेचित कृतियाँ :

1• प्रेमा

2• निर्मला

3• सेवासदन

4• कायाकल्प

5 कर्मभूमि

6 रंग भूमि

7 गबन

8 गोदान ।

xxxxxxxx